nbt.india
एकः सूते सकलम्

साहित्य और संस्कृति की त्रैमासिकी

# पुस्तक संस्कृति

अक्तूबर–दिसम्बर 2016 ◆ मूल्य ₹35.00

पर्व विशेषांक

बीएचईएल
दायित्वों का पालन हमें देता है निरंतर आगे बढ़ने की प्रेरणा
DISHA
सभी के साथ आगे बढ़ने का संकल्पः
भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड
www.bhel.com
प्रगति को गति...जीवन को ज्योति
भारत के हर घर से जुड़ा

प्रधान संपादक
**बल्देव भाई शर्मा**

संपादक
**पंकज चतुर्वेदी**

परामर्श
**राजीव रंजन गिरि**

संपादकीय सहयोग
**दीपक कुमार गुप्ता**

विज्ञापन एवं प्रसार
**कुमार समरेश**
**नरेन्द्र कुमार**

उत्पादन
**तरुण दवे, अनुज भारती**

रेखाचित्र
**मनीश वर्मा**

सज्जा/डिजाइन
**ऋतुराज शर्मा**

शब्द संयोजन/कार्यालयीन सहयोग
**सुभाष चंद्र, प्रवीन कुमार**

सदस्यता शुल्क—
**व्यक्तियों के लिए**
एक प्रति : ₹ 35.00
वार्षिक : ₹ 125.00
(शुल्क भारत के लिए मान्य)

**संपादकीय पत्र व्यवहार**
संपादक
पुस्तक संस्कृति
राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
पता : नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया
फेज़-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070.
फोन : 011-26707761
ई-मेलः editorpustaksanskriti@gmail.com
प्रकाशक व मुद्रक सतीश कुमार द्वारा
नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया (राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत)
नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज़-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070 के लिए प्रकाशित और रेक्मो प्रेस प्रा. लि., ओखला, नई दिल्ली से मुद्रित।

**संपादक : पंकज चतुर्वेदी**

**सर्वाधिकार सुरक्षित :**
प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक और प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। प्रकाशित रचनाओं के विचार से प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे।

# पुस्तक संस्कृति

**साहित्य एवं संस्कृति की त्रैमासिकी**
वर्ष-1; अंक-4; अक्तूबर-दिसम्बर, 2016

## इस अंक में

**संपादकीय** —*बल्देव भाई शर्मा* 2

**पाठकीय प्रतिक्रिया** 3

आलेख — **जरूरत पुस्तकालय आंदोलन की**—*रोहित कौशिक* 4

कहानी — **मुँहफट**—*मधु अरोड़ा* 7

लेख — **प्रकृति को समर्पित हैं उत्तराखंड के पर्व**—*धर्मेन्द्र पंत* 10

कहानी — **विस्मृत**—*मनीष कुमार सिंह* 16

लेख — **श्री गुरु ग्रंथ साहिब : अखंडता और अभेदता का प्रतीक** —*डॉ. जसविन्दर कौर बिन्द्रा* 19

**कविताएँ**—*अंजनी शर्मा, शशि पुरवार* 27

यात्रा वृत्तांत — **भूटान यात्रा**—*मीरा सीकरी* 29

आलेख — **व्रत-पूजन तथा त्योहारों में गन्ने व गुड़ का स्थान** 32

कहानी — **ईद की वो शाम**—*किशोर श्रीवास्तव* 37

लघुकथा — **पूजा**—*शशि श्रीवास्तव* 42

लेख — **कजरी पर्व : पूर्वांचल के लोक जीवन का प्रतिरूप**—*ब्रजराज सिंह* 43

**पुस्तक समीक्षा** 46

**पुस्तकें मिलीं** 55

**राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के कुछ नए प्रकाशन** 56

**साहित्यिक गतिविधियाँ** 58

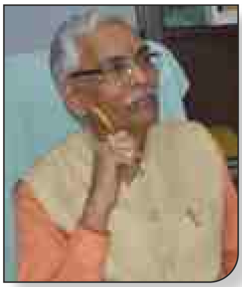

# प्रकृति का नाद हैं पर्व-त्योहार

भारत उत्सवधर्मी देश है। नृत्य-गान इसकी प्रकृति में रचा-बसा है। इसीलिए भारत में पर्व-त्योहार और मेले हमारी संस्कृति का विशेष अंग बने, विशेषकर नदियाँ इन आयोजनों की साक्षी बनीं। इससे यह भी स्पष्ट है कि हमने अपने जीवन के उल्लास के साथ प्रकृति को जोड़ा। प्रकृति के साथ सहजीवन भारतीय दर्शन का मूलमंत्र बन गया। वस्तुतः नदियों के किनारे ही भारतीय संस्कृति का उदय हुआ जो न केवल मनुष्य बल्कि संपूर्ण जीव-जगत के मंगल की कामना का विश्व को परिचय कराने वाली है। विश्व में शांति-सद्‌भाव व कल्याण की जीवन-दृष्टि देने वाला ज्ञान ऋग्वेद के रूप में इसी लोकमंगलकारी संस्कृति की देन है। इसी में से उमंग-उल्लास और आनंद से भरी मानवीय चेतना का विस्तार हुआ।

दरअसल पर्व-त्योहार मनोरंजन नहीं हैं, क्योंकि मनोरंजन तो दूसरों को देखकर होता है, जबकि पर्व-त्योहार मन के आनंद की अभिव्यक्ति हैं। यह आनंद अकेले अनुभव नहीं होता बल्कि परिवार-समाज सामूहिक रूप में उस आनंदाभिव्यक्ति के साथ जुड़ जाता है। तब अपना आनंद सबका आनंद बन जाता है और 'मैं' की वैयक्तिक चेतना का लय 'हम' की सामूहिकता में हो जाता है। पर्व-त्योहारों के पीछे की ऐसी व्यापक सांस्कृतिक व मानवीय संकल्पना भारत के बाहर शायद ही किसी अन्य संस्कृति में विकसित हुई हो। इसलिए पर्व-त्योहार हमारे लिए 'खाओ-पिओ- मौज करो' वाला चिंतन नहीं हैं, बल्कि आनंद से सराबोर मानवीय चेतना के साक्षात्कार का अवसर हैं ताकि समय-समय पर हम अपने मन और जीवन में आ घुसे कलुष को झाड़-पोंछकर हटा सकें। इससे उत्पन्न साहचर्य और परस्पर पूरकता का उल्लास जीवन की सारी जड़ताओं को तोड़ता है और गतिमानता लाता है।

इसलिए हमारे पर्व-त्योहार भारतीय दर्शन 'चरैवेति-चरैवेति' की जीवंत अभिव्यक्ति हैं। पिछले दिनों बीते दशहरा-दीपावली जैसे पर्व स्वार्थ, अज्ञान, असत्य और अन्याय पर विजय पाकर लोकमंगलकारी जीवन का प्रकाश फैलाने का संदेश देने वाले हैं। लेकिन जब इस संदेश को समझने की बजाय हम केवल मौज-मजे तक त्योहारों को सीमित कर देते हैं तो दीपावली जिंदगी की साँसें अटकाने और गति में व्यवधान डाल देने वाला 'स्मॉग' जैसा संकट लेकर आती है। चारों ओर हाहाकार मच जाता है। प्रकृति और पर्यावरण का दम घुटने लगता है। अदालतें तक चिंतित हो उठती हैं उसके निदान के लिए। यह तो रस में विष घोलने जैसा हुआ।

मन की लिप्साएँ जब मानवीय चेतना पर हावी हो जाती हैं और समाज का हित-आनंद उनके सामने छोटा पड़ जाता है तब ऐसे ही संकट जन्म लेते हैं। यह निजता का घेरा जितना बड़ा होता जाता है, अवसाद व तनाव जैसे विकार उतने ही घनीभूत होते जाते हैं। धुआँधार पटाखे चलाने का निजी सुख यह भुला देता है कि इससे पर्यावरण पर कितना जहरीला असर पड़ेगा और इनका बारूद जलने से पैदा हुई धुंध किस तरह साँस लेना व रास्ता देखना तक दूभर कर देगी। बमनुमा पटाखों व इनकी लगातार जलती हुई लड़ियों की धड़ाम-धड़ाम खतरनाक स्तर तक ध्वनि प्रदूषण फैलाती है सो अलग। ऐसे में तो त्योहार आनंद की बजाय अभिशाप बन जाता है। पर्वों को ऐसी रूढ़िगत बुराइयों की जकड़न से मुक्त रखना ही आनंद का सृजन करता है।

श्री गुरुवाणी का संदेश 'पवन गुरु, पानी पिता, माता धरती महत' ही वास्तव में हमारे पर्व-त्योहारों की भावभूमि है। इसमें प्रकृति का संरक्षण व मानव कल्याण और जीवन का आनंद सब समाहित है। इसलिए यह कहना समीचीन होगा कि हमारे पर्व-त्योहार प्रकृति का नाद हैं। इस अवसर पर मन, जीवन, प्रकृति सब उल्लास से नाचने लगते हैं। यही जीवन-दृष्टि मृत्यु को भी उत्सव बना देती है क्योंकि तब केवल शरीर मरता है और आत्मा नया जन्म धारण करने के लिए चल पड़ती है नई राह पर। भारतीय संस्कृति के शाश्वत गान 'गीता' में इसी भाव को व्यक्त करते हुए कहा गया 'वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्वाति नरोपराणि।' इसीलिए भारत की संस्कृति को 'चिर पुरातन-नित नूतन' कहा गया है। युगानुकूल नवीनता ग्रहण करना भारतीय संस्कृति की विशेषता है और बिहू, ओणम व बैसाखी जैसे अनेक पर्व-त्योहार इसके प्रतीक हैं। इसलिए हमारे पर्व-त्योहार मनोरंजन का उपक्रम न होकर हमारा सांस्कृतिक अनुष्ठान बन गए हैं।

**(बल्देव भाई शर्मा)**

*प्रधान संपादक, **पुस्तक संस्कृति***

# पाठकीय प्रतिक्रिया

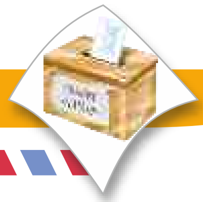

**साहित्य** और संस्कृति की त्रैमासिक पत्रिका 'पुस्तक संस्कृति' का प्रवेशांक जनवरी-मार्च, 2016 एवं अप्रैल-जून, 2016 का अंक प्राप्त हुआ, धन्यवाद। यह हर्ष का विषय है कि राष्ट्रीय पुस्तक न्यास लोगों में पुस्तक पढ़ने की अभिरुचि पैदा करने के लिए सार्थक पहल कर रहा है। मेरा मानना है कि यदि पत्रिका में विज्ञान कथाओं के साथ बाल साहित्य को भी स्थान दिया जाए तो विभिन्न विषय एवं आयु वर्ग के पाठकों तक इसको विस्तार दिया जा सकता है।

—**केशरी नाथ त्रिपाठी**, राज्यपाल, पश्चिम बंगाल

**राष्ट्रीय** पुस्तक न्यास में ऐसी पत्रिका का होना अति आवश्यक था। आपने यह कमी पूरी कर दी है। हर बड़े उपक्रम के लिए एक पत्रिका उसकी गतिविधियों व प्रचार-प्रसार के लिए माध्यम तो बनती ही है, उसकी नीतियों को आगे ले जाने में भी सहायक होती है। 'पुस्तक संस्कृति' में कहानी, कविता, लेख व अन्य उपयोगी सामग्री के संतुलन में आने से एक समग्र पत्रिका का आभास अनायास ही हो जाता है। विश्वास है कि यह पत्रिका जहाँ एक ओर आज के साहित्य व संस्कृति को उजागर करेगी, वहीं साहित्य जगत में अपनी पैठ भी निश्चित रूप से बनाएगी। पठनीय सामग्री के साथ उत्तम साज-सज्जा के कारण पत्रिका एक आकर्षण का केंद्र बनी है, इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

—**सुदर्शन वशिष्ठ**, शिमला

**संयोगवश** 'पुस्तक संस्कृति' (दूसरा अंक) देखने का सौभाग्य मिला इसका आकर्षक कवर और सन्निहित सामग्री किसी पाठक को इसके ग्राहकों की पंगत में बैठने की स्पर्धा से युक्त बना सकती है। मैं आपकी 'पुस्तक संस्कृति' में दो स्तंभ ऐसे देखना चाहूँगा जो इसे उन दोनों से अलग और श्रेष्ठ एवं लोभनीय बना सकेगी। एक, जिसमें पाठक जो पुस्तक पढ़ रहा है या पढ़ चुका है उसके संबंध में अपनी प्रतिक्रिया, पुस्तक का प्रतिपाद्य, विषय महत्त्व और प्रभाव व्यक्त करे। दूसरा वह जिसमें आप पाठकों की ऐसी जिज्ञासाओं का समाधान करें जो पाठकों को उन पुस्तकों का प्राप्ति स्रोत बताएँ, जिन्हें पाने के लिए वह व्याकुल हैं। जैसे मैं स्लीमैन की कन्फेशन ऑफ ...पाना चाहता हूँ पर उसके प्रकाशक से अनजान हूँ। प्रेम प्रकाश का आलेख अंक की उपलब्धि है।

—**धर्मपाल अकेला**, हापुड़ (उ.प्र.)

**साहित्य** समाज का दर्पण और संस्कृति उसकी धरोहर है। ये दोनों व्यक्ति और समाज के मार्गदर्शक होते हैं। इनमें तत्त्वदृष्टि के साथ-साथ जीवन दृष्टि भी समाहित होती है। मनोरंजक होने के साथ-साथ ये लाभप्रद भी होते हैं। आपकी पत्रिका 'पुस्तक संस्कृति' इस दिशा में सराहनीय कदम है। इसमें विषयों की विविधता है। जनजाति जीवन तथा ग्राम जीवन के रीति-रिवाजों एवं मान्यताओं संबंधी सामग्री भी हो तो अधिक ज्ञानवर्धक हो सकती है। साथ ही विज्ञान, कला और साहित्य की विभिन्न विधाओं को भी समाहित किया जा सकता है। नई पीढ़ी के युवाओं को प्रोत्साहित करने के लिए एक खंड हो सकता है। उनमें मूल्य बोध कैसे जागृत हो, इस पर पौराणिक गाथाओं की सहायता ली जा सकती है। वर्णात्मक होने के साथ-साथ उपदेशात्मक आलेख लोक चरित्र-चित्रण के माध्यम से प्रस्तुत किए जा सकते हैं। विभिन्न वय एवं वर्ग के लिए सामग्री का चयन हो सकता है।

—**सिद्धेश्वर भट्ट**, नई दिल्ली

**'पुस्तक संस्कृति'** का दूसरा अंक प्राप्त हुआ। आप सादर बधाई के पात्र हैं कि आपने श्री बल्देव भाई शर्मा जी के सफल नेतृत्व में पत्रिका का सफल संपादन किया। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास की वह कमी जो पत्रिका के रूप में पाठकों को खल रही थी, आपने पूरी कर दी। निःसंदेह आप बधाई के पात्र हैं और भविष्य में आप इसी तरह अन्य कल्याणकारी कार्य करते रहेंगे।

—**चन्द्रमणी ब्रह्मदत्त**, अध्यक्ष नारायणी साहित्य अकादमी, नई दिल्ली

**'पुस्तक संस्कृति'** का जुलाई-सितंबर, 2016 अंक पहले के दो अंकों की तरह समग्रता में पठनीय है, प्रशंसनीय है। रचनाएँ उत्कृष्ट कोटि की हैं, प्रस्तुति-संयोजन भी उच्चतम स्तर का है। 'राष्ट्रीय पुस्तक न्यास' के इस अभिनव उपक्रम के लिए पूरी टीम को बधाई व पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य हेतु हार्दिक शुभकामनाएँ। यह हिन्दी जगत में पठन रुचि का परिष्कार करने में अवश्य सफल होगी, मेरा विश्वास है।

—**प्रभात कुमार**, नई दिल्ली

**'पुस्तक संस्कृति'** नामक पत्रिका की योजना और तीसरे अंक की अंतर्वस्तु सराहनीय है। 'राष्ट्रीय पुस्तक न्यास' ने देशभर में पुस्तक संस्कृति को बढ़ावा देने की दिशा में जो अभिनव प्रयास किया है, पत्रिका उसकी ताजा मिसाल है। इस पत्र के द्वारा आपको आश्वस्त करना चाहता हूँ कि प्रकाशन विभाग आपके इस आयोजन में निरंतर भागीदारी करता रहेगा।

—**राकेश रेणु**, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

**'पुस्तक संस्कृति'** का जुलाई-सितंबर, 2016 अंक मिला। 'मेघा पानी दे' लेख अत्यंत वैचारिक एवं संवेदनात्मक है। पर्यावरण आज के परिवेश में प्रासंगिक है जिस पर सत्ता और सामाजिक सुधारों से संबद्ध लोगों को सकारात्मक दृष्टि अपनानी चाहिए। 'पुस्तक संस्कृति' के इस अंक में 'मेघदूत के मेघ का मानवीय स्वरूप' सर्जनात्मक एवं प्रखर निबंध है। 'पावस' और 'काले मेघा' को लेकर लिखे अन्य निबंध विचारोत्तेजक लगे। इस संदर्भ में 'शांति निकेतन के वर्षा उत्सव' की रिपोर्ट पठनीय है।

—**डॉ. स्वदेश भारती**, राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी, कोलकाता

## आपकी राय का स्वागत है

'पुस्तक संस्कृति' पत्रिका में प्रकाशित सामग्री पर आपके सुझाव, राय का सदैव स्वागत है। देश-दुनिया के साहित्यिक-सांस्कृतिक परिवेश, प्रकाशन जगत की गतिविधियों पर आपकी सम्मति के लिए इस स्थान पर आपके पत्र/ईमेल की प्रतीक्षा है।

संपादक, पुस्तक संस्कृति, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नेहरू भवन, 5, इंस्टीट्यूशनल एरिया फेज-2, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070.
संपर्क : 267-07758/07876/07700
ईमेल : editorpustaksanskriti@gmail.com

# जरूरत पुस्तकालय आंदोलन की

**रोहित कौशिक**

**प्रकाशित कृतियाँ :** 21वीं सदी : धर्म, शिक्षा, समाज और गाँधी (लेख संग्रह), इस खण्डित समय में (कविता संग्रह)।

हिन्दी के लगभग सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में नियमित आलेख लेखन।

**संपर्क :**

rohitkaushikmzm@gmail.com

**मोबाइल : 09917901212**


भारत में सबसे अधिक भाषाओं में पुस्तकों का प्रकाशन होता है। लेकिन मात्र इस आधार पर ही पुस्तकों से संबंधित कोई भ्रम पाल लेना तर्कसंगत नहीं है। यह दुर्भाग्यपूर्ण ही है कि देश की राजधानी दिल्ली में पुस्तकों की एक भी ऐसी दुकान नहीं है, जहाँ सभी लेखकों की पुस्तकें एक ही स्थान पर मिल जाएँ। आज के इस दौर में कहीं इलेक्ट्रॉनिक साधनों को पुस्तकों पर छाए इस संकट के लिए जिम्मेदार माना जा रहा है, तो कहीं साइबर क्रांति को पुस्तकों का दुश्मन घोषित किया जा रहा है। एक ओर पुस्तकों की बढ़ती हुई कीमत को दोष दिया जा रहा है, तो दूसरी ओर मशीनी युग में समय की कमी को इस संकट के लिए जिम्मेदार माना जा रहा है। बहरहाल वास्तविकता यह है कि हिन्दी भाषी समाज में आज तक पढ़ने की प्रवृत्ति विकसित नहीं हो पाई है। यदि यह कहा जाए कि कुछ बुद्धिजीवियों को छोड़कर हिन्दी भाषी समाज में बौद्धिक भूख ही नहीं है, तो अतिश्योक्ति न होगी। बौद्धिक भूख मिटाने का सबसे सरल एवं विश्वसनीय माध्यम पुस्तकें ही हैं। बौद्धिक भूख की कमी के कारण यदि आज हिन्दी पुस्तकों की मुद्रण संख्या लगातार घटती जा रही है तो यह आश्चर्यजनक नहीं है (आज अधिक मात्रा में पुस्तकें प्रकाशित हो रही हैं, लेकिन पुस्तक विशेष या फिर एक ही पुस्तक की मुद्रण संख्या लगातार घट रही है)।

दिन-प्रतिदिन पुस्तकों की मुद्रण संख्या घटने के कारण आजकल प्रकाशक मात्र सरकारी पुस्तकालयों की खरीद पर ही निर्भर रहने लगे हैं। पुस्तकालयों द्वारा पुस्तकें खरीद तो ली जाती हैं, लेकिन भारत में पुस्तकालयों के कुप्रबंधन के कारण अधिकांश पुस्तकें मात्र अलमारियों की शोभा ही बढ़ाती हैं। इस प्रकार पुस्तकालयों की दयनीय दशा एवं पुस्तकालयाध्यक्षों के उदासीन रवैए के कारण इन पुस्तकों का पाठकों के साथ साक्षात्कार नहीं हो पाता है। स्पष्ट है कि प्रकाशित पुस्तकों की सभी प्रतियाँ पाठकों तक अपनी पहुँच नहीं बना पाती हैं। इस तरह प्रकाशित पुस्तकों की सभी प्रतियों का समुचित उपयोग नहीं हो पाता है। एक तो स्वयं ही विभिन्न कारणों से पुस्तकों के मुद्रण में कमी आ रही है, उस पर पुस्तकालयों के कुप्रबंधन के कारण प्रकाशित पुस्तकों में से भी बहुत कम संख्या में पुस्तकें पाठकों तक पहुँच पा रही हैं। अतः स्थिति बद से बदतर होती जा रही है। इसी कारण लगातार लेखकों और पाठकों के बीच दूरी बढ़ रही है। दुर्भाग्यपूर्ण यह है कि बुद्धिजीवियों द्वारा जब भी पुस्तकों के संकट पर चर्चा की जाती है तो कहीं भी बदतर पुस्तकालय-सेवा की समीक्षा नहीं की जाती है। विडम्बना यह है कि हमारे देश में पुस्तकालय आंदोलन सुसुप्त अवस्था में है। दरअसल लेखकों एवं पाठकों के बीच दूरी बढ़ने में पुस्तकालयों की दयनीय स्थिति को

एक कारक माना ही नहीं जाता है। अगर हम चाहते हैं कि प्रकाशित पुस्तकों की सभी प्रतियों का समुचित उपयोग हो तथा लेखकों एवं पाठकों के बीच की दीवार समाप्त हो तो सर्वप्रथम हमें पुस्तकालीय सेवा को चुस्त-दुरुस्त बनाने के लिए आवश्यक कदम उठाने होंगे। जब भी पुस्तकों पर छाए संकट की चर्चा होती है तो पुस्तकों को खरीदकर न पढ़ने अर्थात माँगकर पढ़ने की प्रवृत्ति का भी जिक्र होता है। लेकिन हिन्दी भाषी समाज में अच्छी पुस्तकों को माँगकर पढ़ने की प्रवृत्ति है ही नहीं। हालाँकि पुस्तकों को माँगकर पढ़ने की प्रवृत्ति गलत है लेकिन जिस समाज में गलत ही सही यह प्रवृत्ति है वहाँ लेखक एवं पाठक के बीच थोड़ा-बहुत तारतम्य अवश्य रहता है। इसके विपरीत हिन्दी भाषी समाज में इसी तारतम्य का अभाव है। इस समाज में पुस्तकें थोड़ा-बहुत लिखने-पढ़ने वाले वर्ग में ही सिमट कर रह जाती हैं। हिन्दी भाषी समाज की इस स्थिति में परिवर्तन हो और इस समाज में पुस्तकें अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना सकें इसके लिए बुद्धिजीवी समय-समय पर विभिन्न उपाय सुझाते रहते हैं। बदली हुई परिस्थितियों में हमें सबसे ज्यादा ध्यान इस बात पर देना होगा कि पुस्तकों की जितनी भी प्रतियाँ प्रकाशित हों वे सभी किसी-न-किसी रूप में पाठकों तक अवश्य पहुँच जाएँ। इस पुनीत कार्य में सबसे बड़ा योगदान पुस्तकालय ही दे सकते हैं।

इस देश में आज़ादी के बाद लगभग प्रत्येक क्षेत्र में विकास हुआ है, लेकिन पिछले पचास वर्षों में देश में स्थित पुस्तकालयों के विकास की स्थिति पर गौर करें तो इस संबंध में हमारे नीति-निर्माताओं की लापरवाही स्पष्ट रूप से उजागर होती है। हमारे देश के नीति-निर्माताओं ने कभी भी पुस्तकालयों के विकास को देश के विकास के साथ जोड़कर नहीं देखा। फलस्वरूप पुस्तकालयों की स्थिति में आज तक कोई बड़ा एवं सुखद परिवर्तन नहीं हो सका है। विदेशों में वहाँ की समृद्धि का एक बड़ा कारण पुस्तकालय भी हैं। विदेशों में पुस्तकालयों पर पर्याप्त ध्यान दिया जाता है और वहाँ की जनता अपनी बौद्धिक भूख मिटाने के लिए पुस्तकालयों का पूरा-पूरा उपयोग करती है। अब हमारे देश के नीति-निर्माताओं को भी कोशिश करनी होगी कि वे पुस्तकालयों के विकास को प्राथमिकता देते हुए देश के विकास का मार्ग प्रशस्त करें। पुस्तकालयों के विकास में सबसे बड़ी बाधा आर्थिक संसाधनों में कटौती है। सरकार अपने अनाप-शनाप खर्चों में तो कोई कटौती नहीं करती है, जबकि पुस्तकालयों के नाम पर आर्थिक संसाधनों की कमी का रोना रोया जाता है। देश के पुस्तकालयों की दयनीय स्थिति को सुधारने के लिए सर्वप्रथम सरकार को पुस्तकालयों के लिए बजट में अपेक्षित बढ़ोत्तरी करनी होगी। सरकार का दूसरा कार्य यह होना चाहिए कि वह देश के विभिन्न पुस्तकालयों में रिक्त पड़े पुस्तकालयाध्यक्ष के पदों तथा अन्य दूसरे रिक्त पदों पर नियुक्तियाँ कर सुसुप्त पड़ी हुई पुस्तकालय-सेवा को चुस्त-दुरुस्त करे। पुस्तकालयाध्यक्ष के पद पर बहुत ही जागरुक एवं बौद्धिक लोगों को नियुक्त किया जाना चाहिए। पहले पुस्तकालयाध्यक्ष को मात्र एक क्लर्क के रूप में ही मान्यता प्राप्त थी, लेकिन आज यह एक सम्मानित पद माना जाता है। आज पुस्तकालयाध्यक्ष का वेतनमान भी किसी दूसरे सम्मानित पद के वेतनमान से कम नहीं है। अनेक आधुनिक पुस्तकालयों में तो पुस्तकालयाध्यक्ष को सूचना अधिकारी एवं सूचना वैज्ञानिक के नाम से पुकारा जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि बदली हुई परिस्थितियों में पुस्तकालयाध्यक्ष एक बहुत ही जिम्मेदार पद है और वह अतिरिक्त बौद्धिकता की माँग करता है। अतः सरकार को यह पद ऐसे लोगों को सौपना चाहिए जो कि पुस्तकों एवं पाठकों (समाज) के बीच एक नया रिश्ता स्थापित कर सकें तथा इस रिश्ते को एक नया आयाम दे सकें। सूचना विस्फोट के इस युग में पुस्तकालयाध्यक्षों की भी यह जिम्मेदारी बनती है कि वे पुराने ढर्रे पर चल रही कार्य प्रणाली को बदलें। पुस्तकालयाध्यक्ष का पद मात्र एक पद भर नहीं है बल्कि यह समाज सेवा का एक ऐसा मंच भी है जहाँ बैठकर आप समाज में ज्ञान का प्रकाश फैलाने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं।

हिन्दी भाषी समाज में पढ़ने की प्रवृत्ति विकसित करने में भी पुस्तकालय अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। पुस्तकालयों के तत्त्वावधान में कविता-कहानी प्रतियोगिताएँ या क्विज प्रतियोगिताएँ आयोजित की जा सकती हैं। इसी तरह पुस्तकालयों के तत्त्वावधान में ही नई प्रकाशित पुस्तकों पर परिचर्चाएँ भी आयोजित की जा सकती हैं। इस तरह की परिचर्चाओं में लिखने-पढ़ने वाले जागरुक लोगों के साथ-साथ आम जनता को भी आमंत्रित किया जाना चाहिए। इस प्रक्रिया के माध्यम से जहाँ एक ओर जनता को पुस्तकालयों द्वारा संचालित सृजनात्मक गतिविधियों की जानकारी मिलेगी वहीं दूसरी ओर आम जनता को नई प्रकाशित पुस्तकों की जानकारी भी मिल सकेगी। इस तरह आम जनता भी पुस्तकालयों के प्रति आकर्षित होकर इनसे जुड़ सकेगी। इन सब गतिविधियों के माध्यम से आम जनता में भी

**"इस देश में आजादी के बाद लगभग प्रत्येक क्षेत्र में विकास हुआ है लेकिन पिछले पचास वर्षों में देश में स्थित पुस्तकालयों के विकास की स्थिति पर गौर करें तो इस संबंध में हमारे नीति-निर्माताओं की लापरवाही स्पष्ट रूप से उजागर होती है। हमारे देश के नीति-निर्माताओं ने कभी भी पुस्तकालयों के विकास को देश के विकास के साथ जोड़कर नहीं देखा। फलस्वरूप पुस्तकालयों की स्थिति में आज तक कोई बड़ा एवं सुखद परिवर्तन नहीं हो सका है।"**

धीरे-धीरे पढ़ने की प्रवृत्ति विकसित होगी। आज हालात यह हैं कि लगभग सभी जिलों में राजकीय जिला पुस्तकालय स्थापित हैं, लेकिन चंद लोगों को छोड़कर आम जनता को इन पुस्तकालयों की जानकारी ही नहीं है। चंद जागरुक लोग इस तरह के पुस्तकालयों

में जाते भी हैं तो पुस्तकालयाध्यक्ष के उदासीन रवैए के कारण वे पुस्तकालयों से सक्रिय रूप से नहीं जुड़ पाते हैं। आज स्वयं पुस्तकालयाध्यक्षों को इस बात पर विचार करना होगा कि वे किस प्रकार ज्यादा-से-ज्यादा लोगों को पुस्तकालयों से जोड़ सकते हैं। अक्सर यह देखा गया है कि राजकीय जिला पुस्तकालयों में कौन-कौन-सी पुस्तकें आनी हैं यह सब प्रशासनिक स्तर पर तय होता है। इस प्रक्रिया से अनेक अनुपयोगी पुस्तकें पुस्तकालयों पर थोप दी जाती हैं और स्थानीय पाठकों की पसंद की अनेक पुस्तकें पुस्तकालयों में नहीं आ पाती हैं। इसलिए पुस्तकालयों में नई पुस्तकें मँगाने की प्रक्रिया में स्थानीय पाठकों की भागीदारी भी सुनिश्चित की जानी चाहिए।

बच्चे किसी भी समाज का भविष्य होते हैं। अतः हमें कुछ ऐसे प्रयास करने होंगे जिससे कि बच्चों में बचपन से ही पढ़ने की प्रवृत्ति विकसित हो सके। यदि हम आज बच्चों में पढ़ने की प्रवृत्ति विकसित कर सके तो कल पुस्तकों पर छाया संकट अपने आप ही दूर हो जाएगा। दुर्भाग्यपूर्ण यह है कि आज बच्चों को पुस्तकों से जोड़ने की कोई कोशिश नहीं हो रही है। दरअसल पढ़ाई के दबाव के कारण बच्चे कोर्स की किताबें तो पढ़ते हैं। साथ ही उलटे-सीधे कॉमिक्स पढ़ने में रुचि लेते हैं। लेकिन अच्छा बाल साहित्य पढ़ने में उनकी रुचि नहीं होती है (माता-पिता भी बच्चों को अच्छा बाल साहित्य पढ़ाने की कोई कोशिश नहीं करते हैं)। स्कूल की पढ़ाई से समय मिलने पर बच्चे टीवी से चिपक जाते हैं। टीवी के विभिन्न चैनल आजकल बच्चों को जो कुछ सिखा रहे हैं, वह किसी से छिपा नहीं है। फलस्वरूप बच्चों में पढ़ने की प्रवृत्ति तो विकसित हो ही नहीं पाती है, साथ ही उनमें नए संस्कार पनप जाते हैं जो उन्हें अपनी जमीन से जुड़ने नहीं देते हैं। पहले जब टीवी जैसे साधन उपलब्ध नहीं थे, शिक्षा ग्रहण करने वाले किशोरों का एक बड़ा वर्ग स्वयं ही किताबों से जुड़ जाता था। फलस्वरूप उनमें पढ़ने की प्रवृत्ति तो विकसित होती ही थी, साथ ही उनमें जमीन से जुड़े संस्कार भी पनपते थे। दुर्भाग्यपूर्ण यह है कि आज बड़े स्कूलों में तो पुस्तकालय हैं (भले ही उनकी स्थिति दयनीय है) लेकिन प्राथमिक स्कूलों में पुस्तकालयों की कोई व्यवस्था नहीं है। अब समय आ गया है कि सरकार प्राथमिक स्कूलों में भी पुस्तकालयों की स्थापना करे। साथ ही बच्चों को इन पुस्तकालयों से सक्रिय रूप से जोड़ने की कोशिश भी की जानी चाहिए ताकि उनमें प्रारम्भ से ही पढ़ने की प्रवृत्ति विकसित हो सके।

देश के पुस्तकालयों की दयनीय स्थिति को सुधारने में 'पुस्तकालय अधिनियम' महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। यह दुर्भाग्यपूर्ण ही है कि अभी भी 'पुस्तकालय अधिनियम' देश के सभी राज्यों में पारित नहीं हुआ है। आज पुस्तकालयों में प्राण फूँकने के लिए नए पुस्तकालय आंदोलन की आवश्यकता है। भले ही हिन्दी प्रेमी एवं विभिन्न बुद्धिजीवी हिन्दी पुस्तकों के संकट पर कितनी ही चर्चा क्यों न कर लें लेकिन हिन्दी पुस्तकों पर छाया संकट तब तक दूर होने वाला नहीं है जब तक कि हिन्दी भाषी समाज में पढ़ने की प्रवृत्ति विकसित नहीं होगी। निःसंदेह पुस्तकालय इस कार्य को बखूबी अंजाम दे सकते हैं बशर्ते इनकी स्थिति में कोई गुणात्मक परिवर्तन हो। दुर्भाग्यपूर्ण यह है कि सरकार कभी-कभी पुस्तकालयों के विकास की बात कहती जरूर है, लेकिन अभी तक नतीजा ढाक के तीन पात ही है। अब समय आ गया है कि देश का बुद्धिजीवी वर्ग पुस्तकालयों की दयनीय स्थिति को सुधारने के लिए सरकार पर दबाव डाले। यह विडम्बनापूर्ण ही है कि आज मंदिर-मस्जिद जैसे मुद्दे पर तो हमें अपने अधिकार याद आने लगते हैं लेकिन इस तरह के मुद्दों पर हम अपने अधिकार भूल जाते हैं। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि पुस्तकों से मुँह मोड़ना हिन्दी भाषी समाज के लिए खतरनाक सिद्ध होगा। इसलिए बुद्धिजीवियों द्वारा हिन्दी पुस्तकों पर संकट की चर्चा में पुस्तकालयों पर भी चर्चा की जानी चाहिए। हमें यह समझना होगा कि पुस्तकालयों बिन न तो पाठक-संसार बसेगा और न ही बचेगा।

# मुँहफट

चिंकी तो बस चिंकी है। उससे उसके मित्र, पति नरेश बहुत ख़ौफ खाते हैं। कमाल है नरेश तो पति हैं, उनसे चिंकी को डरना चाहिए, वे क्यों डरते हैं? मित्रों का चिंकी से क्या लेना देना...जो वे भी डरते हैं। यही तो बात है। दरअसल चिंकी बहुत मुँहफट है। वह किसी की परवाह नहीं करती और यही लापरवाही का अंदाज नरेश को रास नहीं आता। अब उस दिन की ही बात है, नरेश ने कहा, "चिंकी, मथुरा से मेरे बड़े भाई आ रहे हैं। उनको लेने स्टेशन जाना है।"

चिंकी ने तपाक से पूछ लिया, "अचानक?" बस चिंकी का यह कहना था कि नरेश की भवें तन गईं। बोले, "हमेशा वाहियात सवाल नहीं किया करते। पापा का फोन था, उन्होंने भईया को मुंबई की ट्रेन में चढ़ा दिया है।" कहकर नरेश स्टेशन के लिए रवाना हो गए।

यह हमेशा का ही हाल है। नरेश के मायके से जब भी कोई आता है, वे प्रधानमंत्री से भी ज्यादा व्यस्त हो जाते हैं। अचानक घर साफ होने लगेगा। नए पर्दे आएँगे। इस पर चिंकी कह देती है, "घर के बंदे आ रहे हैं। क्यों फ़िज़ूल के खर्च कर रहे हो?" पर नरेश के कान पर जूँ तक नहीं रेंगती। पूरे घर में नरेश झाड़ू लगा रहे हैं। नाश्ते की बरनियाँ सज रही हैं। उसके लिए तो नरेश इतने पकवान कभी नहीं लाए हैं।

स्टेशन से नरेश ने फोन किया है, "सुनो, तुम भईया से मुंबई आने के बारे में कुछ पूछना मत। बुरा मान जाएँगे। चुप रहना और हाँ, खाना तैयार रखना। ऐसा नहीं हो कि हम घर पहुँचें और तुम सब्जी को तराशने में लगी रहो।"

उसे बारीक सब्ज़ी काटना बहुत भाता है। चिंकी से रहा नहीं गया। बोली, "वे चोरी से आ रहे हैं क्या? भाभी से झगड़ा-वगड़ा तो नहीं हो गया?" नरेश ने झुंझलाकर कहा है, "मुझे भी कुछ पता नहीं है। उनके आने पर ही पता चलेगा।"

इतना कहकर नरेश ने फोन काट दिया है। नरेश भी बस, अपनी बात कहकर फोन काट देते हैं। दूसरे की बात तो सुनना ही नहीं चाहते। क्या करे चिंकी भी, उससे मोटी कटी सब्ज़ी खाई ही नहीं जाती।

जिन घरों में मोटी कटी सब्ज़ी परोसी जाती है तो उसे लगता है कि पिंड छुड़ाने के लिए सब्ज़ी काटी गई है। कहीं पढ़ा था कि

मधु अरोड़ा

**कृतियाँ :**
'बातें'– तेजेन्द्र शर्मा के साक्षात्कार, 'एक सच यह भी'– पुरुष-विमर्श की कहानियाँ, 'मन के कोने से'– साक्षात्कार संग्रह, '...और दिन सार्थक हुआ'– कहानी-संग्रह, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, आदि।

आकाशवाणी, दूरदर्शन और कई पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का नियमित प्रसारण/प्रकाशन।

**संपर्क :**
shagunji435@gmail.com

सब्ज़ी काटने का तरीका ही बता देता है कि अमुक महिला को रसोई में कितनी दिलचस्पी है।

चिंकी खुद को फूहड़ तो बिल्कुल नहीं दिखाना चाहती। अंततः पैंतालीस मिनट बाद नरेश अपने भाई के साथ घर में घुसे हैं। चिंकी ने भईया को नमस्ते की है। चाय बनाकर दी और चुपचाप उनके सामने बैठ गई है।

घर में ग़हरा सन्नाटा पसर गया जो चिंकी को भावी संकट का संकेत दे रहा था।

जब सब लोग खा चुके तब चिंकी ने भईया को अकेला पाकर कहा है, "आप अचानक अकेले कैसे आ गए? भाभी को भी साथ ले आते।"

बिल्ली के क़दमों से बिना किसी आवाज़ के वह चुपचाप बाहर निकल गई है। वहाँ से वह सीधे टेलीफोन बूथ गई है।

उसने भईया के घर का नंबर डायल किया है और वहाँ से भाभी ने फोन उठाया। चिंकी ने कहा, "भाभी, मुझे भईया से बात करनी है। उन्हें फोन दे दीजिए।"

इस पर भाभी ने कहा, "भईया दो दिन से घर नहीं आए हैं। कोई बता ही नहीं रहा, कहाँ गए हैं।" तो चिंकी को जिस बात का डर था वही हुआ। भईया बिना बताए चले आए हैं।

उसने भाभी से कहा, "आज सुबह भईया हमारे घर आ गए हैं।" यह सुनकर

भाभी ने ठंडे स्वर में कहा, "चिंकी तुम उनको घर से निकाल दो। यदि तुमने उनको रखा तो ठीक नहीं होगा।"

भाभी की उस ठंडी आवाज़ से चिंकी अंदर तक दहल गई है। उसने कहा, "भाभी, आप चिंता न करें। मैं उनको जल्दी ही वापिस मथुरा भेज दूँगी।"

वहाँ से फोन काट दिया गया है। चिंकी ने अपनी ससुराल में सभी को फोन कर दिया कि भईया ऐटा में हैं। चिंता न करें।

जब आधे घंटे बाद चिंकी घर पहुँची तो उसका ही इंतज़ार हो रहा था। नरेश ने कहा, "कहाँ चली गई थीं? हमें चाय की तलब लग रही है।"

चिंकी ने खुद को नियंत्रण में रखते हुए कहा, "आप अपने पापा को फोन कर दीजिए कि भईया यहाँ पहुँच गए हैं।" नरेश चुप हैं। चिंकी ने शाम को खाना बनाया और सबने खाया। भईया ट्रेन के थके थे।

लेटते ही ख़र्राटे लेने लगे हैं। नरेश कोई भी बात करने से बच रहे हैं। उन्हें यह बात पता है कि चिंकी से बात करने का मतलब है कि वह बाल की खाल निकाले बिना नहीं रहेगी।

इस पर वे कुछ नहीं बोले और करवट बदलकर लेट गए हैं। भईया की इस चुप्पी ने यह संकेत दे दिया कि दाल में कुछ काला है।

उस समय शाम के चार बजे थे। नरेश ग़हरी नींद में सो रहे थे। चिंकी उठी, कपाट में से रुपए निकाले और चप्पल पहनकर दरवाज़ा खोला है।

सुबह हुई। बच्चे स्कूल चले गए। चिंकी ने नाश्ता बनाया और नरेश व भईया खाकर चले गए। अब मैदान साफ था। उसने अपने ससुर को फोन लगाया, वहाँ से आवाज़ आई, "बेटा, तुम पहुँच गए?" चिंकी ने कहा, "बेटा नहीं, बहू बोल रही है। भईया यहाँ आ गए हैं।" ससुर ने कहा, "किसी को बताने की ज़रूरत नहीं है कि वह तुम्हारे यहाँ है।"

चिंकी ने प्रतिवाद किया, "यह तो ठीक नहीं है पापा। उनके घर के बीच में नहीं बोलना चाहिए।

...उन हालातों में उनको यहाँ तो बिल्कुल नहीं भेजना चाहिए। मेरी हालत आप सोच सकते हैं? न जाने के लिए कह सकती हूँ और न रुकने के लिए।"

वहाँ से ससुरजी की आवाज़ आई, "वह उसके भाई का घर है। वह जब तक वहाँ चाहे रह सकता है।" इस पर चिंकी ने ससुरजी को बता दिया कि वह भईया के आने की बात भाभी और सबको बता चुकी है।

उसने कहा, "मैं कोई बुराई अपने सिर पर नहीं लेने वाली। यह केवल उनके भाई का ही नहीं, बल्कि मेरा भी घर है।" और इसके साथ ही फोन काट दिया गया।

चिंकी जरूरत से ज्यादा नाराज है। उसे समझ में नहीं आ रहा है कि क्या करे और

क्या न करे। यहाँ तो सारा आँवा ही बिगड़ा पड़ा है। घर का माहौल दिन-ब-दिन भारी होता जा रहा है।

भईया सुबह खाकर जाते हैं और रात को बारह बजे आते। एक रात को चिंकी ने कह ही दिया है, "भईया, आप जल्दी आया करें। सुबह मेरी भी नौकरी है... नरेश और बच्चों को भी जाना होता है। नींद पूरी नहीं होती है।"

इस पर वे तुनककर बोले हैं, "मेरी चिंता मत करो। यदि मेरा रहना और खाना इतना भारी है तो रात को घर नहीं आया करूँगा...सुबह छः बजे आया करूँगा।" इस पर वह सन्न रह गई है.... सूत न कपास, जुलाहे से लट्ठमलट्ठा।

नरेश सब समझ रहे हैं, पर कुछ कह नहीं पा रहे हैं। वे अपने पिता के सबसे आज्ञाकारी बेटे हैं। रात को जब नरेश और चिंकी अपने कमरे में गए तो चिंकी ने कहा, "आज मैंने आपके पापा को फोन किया था।" इस पर नरेश बोले, "तुम्हें इतनी जल्दी क्या पड़ी थी फोन करने की?"

चिंकी ने कहा, "मुझ पर चिल्लाने की ज़रूरत नहीं है। मथुरा में किसी को पता नहीं है कि भईया यहाँ हैं, यहाँ तक कि भाभी को भी।" इस पर नरेश के चेहरे का रंग उतर गया।

चिंकी ने कहा, "नरेश, एक बात कान खोलकर सुन लो। भईया को दस दिनों के बाद इधर से रवाना कर देना है। कल तुम उनसे बात करके टिकट बुक कर लेना।"

नरेश ने कहा, "कल की कल देखेंगे। अभी सोने दो।" सुबह सब उठे। भईया को चाय दी। चिंकी ने सोचा कि नरेश तो अपनी ओर से पहल करने से रहे। बातों-बातों में उसने ही भईया से पूछा, "आपका कितने दिनों का प्रोग्राम है यहाँ रुकने का।" इस पर वे बोले, "तुम्हें चिंता करने की जरूरत नहीं है। मैं अपने हिसाब से चला जाऊँगा।"

चिंकी ने कहा, "नहीं आप अपने हिसाब से नहीं, मेरे हिसाब से जाएँगे। दस दिन बाद की टिकट बुक करवा रही हूँ। आपको नरेश या मैं छोड़ आएँगे आपके परिवार के पास।"

नरेश की हालत पतली हो रही है। उनको उनके भाई के सामने ही चिंकी ने शर्मसार कर दिया है। चिंकी के मुँहफट होने का खामियाजा भुगतना ही था। नरेश ने कहा था, "तुम रहने दो। वहाँ सीन क्रिएट कर दिया तो बची-खुची इज्जत भी चली जाएगी। मैं ही चला जाऊँगा। थोड़े दिन रह लेते तो तुम्हारा क्या बिगड़ जाता? घर से और पत्नी से परेशान हैं। उनकी घर में कोई इज्जत नहीं है।"

मन ही मन वह हँसी थी, पर असमय हँसना फूहड़ साबित करता है, सो गम्भीर बनकर और सब बातों से अनजान बनकर कहा, "तुम अपने भाई को उनकी पत्नी के पास छोड़ोगे, पिता के पास नहीं।"

भईया को जब यह बात पता चली तो बोले, "कुछ शॉपिंग कर लेता... तुम्हारी भाभी के लिए कुछ कपड़े ले लेता। मेरे पास भरपूर पैसे हैं। वीआरएस लिया है, तो अच्छी राशि लेकर आया हूँ।"

वह समझ नहीं पाई है कि यदि भाभी से नाराजगी है तो कपड़े खरीदने की क्या जरूरत है? ये कौन-सी फेमिली पॉलिटिक्स है, पता नहीं। वीआरएस का इतना पैसा कोई साथ लेकर चलता है क्या?

इस पर चिंकी ने कोई उत्तर नहीं दिया है। वह उन्हें कपड़ा बाज़ार ले गई है। बहुत बड़ी और महंगी दुकान है। उन्होंने अपनी पत्नी के लिए नेट का महंगा सलवार सूट और साटिन का कपड़ा लिया है। साथ ही चिंकी से बोले हैं, "आप भी महंगा-सा कपड़ा ले लो।" इस पर उसने विनम्रता से मना कर दिया है।

वह दुविधा में है। इतना पैसा पास में है। कहीं उस पर अपने जेठ को फाँसने का इल्जाम न लग जाए। वह जल्दी-से-जल्दी उन्हें चले जाने देना चाहती है।

उनके बहुत कहने पर वह नेट की चुन्नी ले लेती है। उसका जी घबरा-सा रहा है। वे कुछ चीज़ें खरीदने के मूड में हैं, पर वह मना कर देती है, "घर में सबकुछ है। आप भाभीजी के लिए खरीदो। मेरे पास बहुत कपड़े हैं, वही नहीं पहने जाते।"

उन्हें वापिस जाने का कोई मलाल नहीं है, गोया कि वे भी अपनी पत्नी को तंग करने के मकसद से ही बिना बताए आ गए हैं। अब वे अपना सामान पैक करने लगे हैं। इतने में मथुरा से फिर फोन आता है और वे चिंताग्रस्त हो जाते हैं।

वह इन बातों पर कोई ध्यान नहीं देती। पारिवारिक नौटंकी देखते-देखते वह थक चुकी है। वह आराम से उनके ले जाने के लिए सब्जी लेकर आती है और अरबी की सूखी सब्जी और नमक अजवाइन की पूरियाँ तलकर दे देगी।

उन्हें रहते-रहते सात दिन बीत चुके हैं। बच्चों को उनके रहने का तरीका अजीब लग रहा है... दूध पीते बच्चे तो हैं नहीं कि कुछ समझें नहीं...वे भी चाहते हैं कि ताऊजी अपने घर वापिस जाएँ। मम्मी को बहुत काम करना पड़ता है... बहुत थक जाती हैं।

अंततः वह दिन आ गया जब भईया को जाना है। सुबह उसने समोसे मँगवाए हैं ताकि नाश्ते का समय बच जाए। उन्होंने खूब खुश होकर समोसे खाए हैं। चिंकी ने उनके लिए दो समय का खाना बनाकर पैक कर दिया है।

वे थोड़े उदास होकर बोले हैं, "तुमने समय पर मुझे सहारा दिया है। पापा को ऐसा नहीं करना चाहिए। मेरे घर में कितना क़लह होगा, यह किसी को नहीं पता है।" यह कहकर वे अचानक उदास हो गए हैं।

इसके साथ ही दोनों भाई भारी कदमों से सामान सहित नीचे उतर गए हैं। उसने इस बाबत भाभी को सूचना दे दी है और वे भन्नाते हुए बोली हैं, "आने दो उनको, अच्छी तरह खबर लूँगी।"

स्टेशन पहुँचने के बाद भी कोई फोन नहीं किया गया है, जैसे चिंकी ने कोई पाप कर दिया हो। उसने अपनी ओर से नरेश के पापा को फोन कर दिया है, "माल असबाब सहित बेटा वापिस आ रहा है। आगे से ऐसी गलती न करें।" और फोन रख दिया है।

# प्रकृति को समर्पित हैं उत्तराखंड के पर्व

पहाड़, प्रकृति और पर्व तीनों अलग-अलग शब्द हैं। तीनों के अर्थ भी अलग-अलग हैं, लेकिन जब बात होती है उत्तराखंड की तो वहाँ इन तीनों का अद्‌भुत संगम देखने को मिलता है। पहाड़ प्रकृति के सबसे करीब हैं और वहाँ के निवासी इस प्रकृति के वासी हैं। शायद यही वजह है कि उत्तराखंड के अधिकतर पर्वों और त्योहारों का संबंध प्रकृति से होता है। वहाँ पेड़, पहाड़, पंदेरा (जलस्रोत) का पूजन लगभग हर त्योहार और पूजा में होता है। कई ऐसे त्योहार हैं जिनमें सीधे प्रकृति की ही पूजा होती है। फूलदेई, हरेला ऐसे ही त्योहार हैं। यहाँ तक कि दीवाली और होली जैसे राष्ट्रीय त्योहारों में भी प्रकृति को महत्त्व दिया जाता है। जब होली खेली जाती है तो सबसे पहले पयाँ के वृक्ष की पूजा होती है। दीवाली के अवसर पर 'ईगास-बग्वाल' का खास महत्त्व है जिसमें पशुओं की पूजा की जाती है।

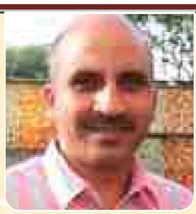

**धर्मेन्द्र पंत**

जन्म 31 मार्च, 1970, गाँव स्योली, पौड़ी गढ़वाल।
शिक्षा : एम.ए. राजनीति शास्त्र, हेमवतीनंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर, गढ़वाल। पत्रकारिता स्नातक : माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय, भोपाल। पिछले 25 वर्षों से पत्रकारिता में। विभिन्न विषयों पर अब तक 2000 से अधिक आलेख प्रकाशित। हिंदी पत्रकारिता के लिए विभिन्न पुरस्कारों से सम्मानित।
**संप्रति :**
समाचार एजेंसी पीटीआई भाषा में कार्यरत।

उत्तराखंड में सालभर त्योहारों का मौसम रहता है, लेकिन इनमें से अधिकतर त्योहार ऋतुओं के अनुसार मनाए जाते हैं। भारत के मुख्य त्योहारों के अलावा यहाँ कुछ ऐसे पर्व भी हैं जो खासतौर पर उत्तराखंड या उसके कुछ हिस्सों में ही मनाए जाते हैं। जैसे हरेला, खतड़ुवा, कंडाली आदि त्योहारों का संबंध कुमाऊँ मंडल से है। इन त्योहारों का केंद्र पेड़, पहाड़, खेत, खलिहान, पशु होते हैं। उत्तराखंड के कुछ प्रमुख त्योहारों की जानकारी यहाँ पर दी जा रही है।

## मकर संक्रांति उत्तराखंड में बन जाता है उत्तरायणी और घुघुतिया

सूर्य के मकर रेखा पर प्रवेश के दिन पूरे भारत वर्ष में मकर संक्रांति धूमधाम के साथ मनाई जाती है, लेकिन उत्तराखंड में इस दिन उत्तरायणी और घुघुतिया त्योहार मनाया जाता है। गिंदी मेला भी इसी दिन लगता है। उत्तरायणी के दिन यहाँ कई स्थानों पर नदियों के पास मेले लगते हैं। स्थानीय भाषा में इन्हें 'मकरैणी कौथिग' कहा जाता है। उत्तराखंड में तीर्थराज बागेश्वर में लगने वाला उतरैणी मेले का विशेष महत्त्व है। पौराणिक कथाओं के अनुसार भगवान शिव के एक गण चंडीस ने शिव और पार्वती के लिए इसकी स्थापना की। इसको दूसरा काशी भी माना जाता है। यहाँ पर चंद राजाओं के समय से ही माघ मेले का आयोजन होता रहा है। इसी तरह से उत्तरकाशी का माघ मेला भी प्रसिद्ध है, जो सात दिन तक चलता है। हर साल इस मेले का शुभारंभ पाटा संग्राली गाँवों से कंडार देवता और अन्य देवी-देवताओं की डोलियाँ उत्तरकाशी पहुँचने पर होता है। मकर संक्रांति के दिन सभी डोलियों को मणिकर्णिका घाट पर विसर्जित किया जाता है और तब यह बड़ा मेला लगता है।

कुमाऊँ में मकर संक्रांति के दिन घुघुतिया त्योहार मनाया जाता है। इसे पुष्यूडिया पूजन भी कहते हैं। हालाँकि बागेश्वर में इसका चलन नहीं है। घुघुतिया त्योहार के दिन आटे के घुघुत बनाकर उन्हें तेल में तलकर तैयार किया जाता है और मकर संक्रांति के दिन इन्हें कौवे को खिलाया

जाता है। बच्चे गले में घुघुत की माला पहनते हैं और फिर कौवे को काले कौवा काले, घुघुती माला खाले...की आवाज़ लगाते हैं। इस त्योहार के प्रचलन को लेकर एक कहानी है। कहा जाता है कि यहाँ के राजा का एक मंत्री था जिसका नाम घुघुतिया था। उसने राजा को मारकर खुद सिंहासन पर बैठने का षड्यंत्र रचा। एक कौवे को उसके षड्यंत्र का पता चल गया और उसने राजा को इस बारे में जानकारी दे दी।

> **उत्तरकाशी और देहरादून जिलों के जौनसार, रवाँई और जौनपुरा क्षेत्रों में माघ के महीने में ही मरोज त्योहार मनाया जाता है। इस त्योहार में सामूहिक दावत तथा स्थानीय लोकगीतों और लोकनृत्यों की धूम रहती है। इस अवसर पर मेहमानों को मांसाहारी भोजन परोसा जाता है। इसके तीसरे दिन मकर संक्रांति मनाई जाती है।**

गढ़वाल में मकर संक्रांति को खिचड़ी संक्रांति भी कहते हैं और इस दिन खिचड़ी बनाकर खाने का चलन है। मकर संक्रांति के अवसर पर ही उत्तराखंड में गढ़वाल के कुछ हिस्सों विशेषकर मनियारस्यूँ, कटघर, थलनदी, डाडामंडी आदि क्षेत्रों में गिंदी मेले का आयोजन किया जाता है जो वीरता, दृढ़ता, इच्छाशक्ति और प्रतिस्पर्धा से जुड़ा है। विभिन्न गाँवों के लोग एक स्थान पर एकत्रित होकर गिंदी मेले का आयोजन करते हैं। गिंदी मतलब गेंद। यह खेल दो गाँवों या पट्टियों के बीच खेला जाता है। गिंदी के खेल को रग्बी का करीबी माना जा सकता है, क्योंकि इसमें भी गेंद को पकड़ने के लिए कई व्यक्ति एक साथ उस पर झपटते हैं। आखिर जो भी पहले गेंद को नियत स्थान तक ले जाता है, उसे विजेता घोषित कर दिया जाता है। पहले गेंद चमड़े की बनाई जाती थी, जिस पर कंगन भी लगे होते थे। इस अवसर पर देवी-देवताओं का भी पूजन होता है। ढोल-दमाऊ की थाप पर पाँडव नृत्य की धूम रहती है।

उत्तरकाशी और देहरादून जिलों के जौनसार, रवाँई और जौनपुरा क्षेत्रों में माघ के महीने में ही मरोज त्योहार मनाया जाता है। इस त्योहार में सामूहिक दावत तथा स्थानीय लोकगीतों और लोकनृत्यों की धूम रहती है। इस अवसर पर मेहमानों को मांसाहारी भोजन परोसा जाता है। इसके तीसरे दिन मकर संक्रांति मनाई जाती है।

## बसंत पंचमी : जौ की पत्तियों से सजाए जाते हैं घर

बसंत के आगमन का त्योहार। माघ महीने की शुक्ल पंचमी को बसंत पंचमी भी कहा जाता है। इस दिन देशभर में माँ सरस्वती की पूजा की जाती है, लेकिन उत्तराखंड में इस दिन अपने निवास स्थान का पूजन और खेतों में हल लगाने की शुरुआत की जाती है। पहाड़ों में अधिकतर घर मिट्टी के बने हुए हैं, इसलिए बसंत पंचमी के दिन गाय के गोबर और गौमूत्र से सारे घर की लिपाई की जाती है। इसके बाद नहा-धोकर हर चौखट पर गोबर से जौ के छोटे-छोटे पौधों और पत्तियों को चिपकाया जाता है।

इसके बाद का पूजन खेतों में होता है। बैलों की जोड़ी और हल लेकर खेतों में विशेष रूप से धूप-दीप से पूजा की जाती है और हल चलाया जाता है। बैलों के सिर पर तिलक लगाकर उन्हें धूप सुंघाई जाती है। घर में कई तरह के पकवान बनाए जाते हैं, जिन्हें बैलों को भी खिलाया जाता है। हल चलाने के बाद थोड़े से चावल में गुड़ मिलाकर खाना शुभ माना जाता है।

## फूलदेई से होता है बसंत का स्वागत

बसंत ऋतु के आगमन का स्वागत करने के लिए उत्तराखंड में एक विशेष त्योहार मनाया जाता है, जिसे फूलदेई कहते हैं। बासंती उल्लास, आशा और विश्वास का यह पर्व चैत्र संक्रांति को मनाया जाता है। फूलों से संबंधित होने के कारण इसे फूल संक्रांति भी कहते हैं। यह उत्तराखंड की संस्कृति और प्रकृति से जुड़ा त्योहार है, जो 'वसुधैव कटुम्बकम्' और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' का संदेश देने के साथ ही बच्चों को प्रकृति का सम्मान करने की सीख देता है। चैत्र मास शुरू होने तक बसंत अपनी छटा बिखेरना शुरू कर देता है। कई तरह के फूलों के अलावा बुरांश, आड़ू, मेलु, खुबानी, पुलम खिलने लगते हैं और सरसों के फूल इसकी छटा में चार चाँद लगा रहे होते हैं। बच्चे सुबह घर-घर फूलों की डाली लेकर बसंत का स्वागत करते हैं।

उत्तराखंड में बच्चों विशेषकर अविवाहित लड़कियों के लिए बसंत का आगमन विशेष महत्त्व का होता है। गाँव की लड़के और लड़कियाँ चैत्र संक्रांति से एक दिन पहले ही शाम को फूलों (विशेष रूप से सफेद और पीले) को रिंगाल की टोकरी में एकत्रित कर देते हैं। फूलों के साथ गेहूँ और जौ के नन्हे पौधों की हरियाली भी लाई जाती है। बच्चे सुबह नहाने के बाद प्रत्येक घर में जाकर फूलों और हरियाली को दहलीज पर चढ़ाते हैं। बच्चे हर परिवार की सुख, शांति और समृद्धि की कामना करते हैं। घर की गृहणियाँ इससे पहले गाय के गोबर से घर और देहरी (घर के प्रवेश द्वार) को लीप के रखती हैं। घर की देहरी पर ऐपण सजाकर चावल और गेहूँ रखा जाता है, जो फूल लेकर आने वाले बच्चों को दिया जाता है। इसके अलावा बच्चों को कौणी, झंगोरा, गुड़ और रुपए भी दिए जाते हैं। इस अवसर पर आटे

को दही में गूँथकर तैयार किया जाने वाला 'सेई' पकवान बनाया जाता है। बच्चे देहरी का पूजन करते समय गाते हैं.. "फूलदेई, छम्मा देई, देणी द्वार, भर भकार, ये देली स बारंबार नमस्कार, पूजें द्वार बारंबार, फूले द्वार...फूलदेई-छम्मा देई।" गढ़वाल के कई गाँवों में तो यह त्योहार चैत्र महीने से लेकर बैशाखी तक मनाया जाता है और गाँव की लड़कियाँ हर दिन सुबह अपने पड़ोसियों की दहलीज पर फूल रख कर आती हैं। इस अवसर पर लड़कियाँ गाती हैं, "फूलदेई फूलदेई फूल संगरांद, सुफल करो-नयो साल तुमुक श्री भगवान। रंगीला सजीला फूल, ऐंगी डाला-बोट्‌ला हरया ह्वेग्येगी। पौन-पंछी, दौड़ी गैना, डाल्युं फूल है सदा रैन।"

## भिटोली में दिखता है भाई-बहन का प्यार

भाई का अपनी बहन के प्रति स्नेह की एक सच्ची बानगी पेश करता है उत्तराखंड का त्योहार भिटोली। चैत्र के महीने में विवाहित बेटियों को उनके ससुराल में कलेवा पहुँचाया जाता है। इसे 'भिटोली' कहा जाता है अर्थात भेंट करना। विवाहित बेटियों को 'धियाण' कहा जाता है। भिटोली में भाई अपनी बहन से मिलने के लिए उसके ससुराल जाता है। वह अपने साथ कलेवा और कपड़े लेकर जाता है। कोशिश ये रहती है कि कलेवा अच्छे से अच्छा हो, ताकि ससुराल में सब उसकी तारीफ करें। बहन अपने अड़ोस-पड़ोस में कलेवा बाँटती है। जब संचार के कोई साधन नहीं हुआ करते थे, तब भाई के आगमन पर बहन की खुशी का ठिकाना नहीं रहता था। इससे उसे अपने मायके की कुशल-क्षेम भी मिल जाती थी। भिटोली में पहले कलेवा जाता था। बाद में इसका स्थान मिठाई ने लिया। फिर भाइयों ने खुद जाने के बजाए रुपए भेजने शुरू कर दिए। आजकल तो मोबाइल और व्हाट्सएप के जरिए ही 'भिटोली' का पर्व संपन्न हो जाता है।

चैत्र मास में ही ढोल और दमाऊ वादक भी गाँव में हर घर में जाकर शुभकामना देते हैं। वे चैती गाते हैं। जैसे कि "तुमरा भंडार भरियान, अन्न-धनल बरकत ह्वेन, ओंद रयां ऋतु मास, ओंद रयां सबुक संगरांद। फूलदेई फूलदेई फूल संगरांद।" (तुम्हारे भंडार भरे रहें, अन्न-धन की वृद्धि हो, ऋतुएँ और महीने आते रहें और सबके लिए संक्रांति का पर्व खुशियाँ लेकर आता रहे)। वे भगवान गणेश से लेकर ग्राम देवता के गीतों को गाकर परिवार की सुख-समृद्धि की कामना करते थे। इसी दिन के बाद वे गाँव की हर विवाहिता के ससुराल जाकर वहाँ दान माँगने (कई जगह इसे बडौ कहा जाता है) के लिए जाते थे। अब ये परंपराएँ लगभग खत्म हो गई हैं।

## रंग ही नहीं, गायन और पूजन का त्योहार भी है होली

होली भारतीयों का आम त्योहार है। होलिका दहन और फिर रंगों से खेलना। उत्तराखंड की

होली का स्वरूप थोड़ा विस्तृत है। यहाँ सात दिन पहले से या फिर एक-दो महीने पूर्व से होली खेली जाती है। इसमें रंग नहीं, उमंग भरी होती है। गीतों के कई रूप यहाँ की होली में देखने को मिलते हैं। गाँव में जिस घर में अबज (जिसके घर में किसी की मृत्यु हो गई हो, वह एक साल तक कोई त्योहार नहीं मनाता) हो, उसे छोड़कर हर घर में होली खेली जाती है। होली खेलने वालों की एक पूरी टोली होती है जो होली खेलने के लिए गाँवों में जाने से पहले हर दिन के शुरू में विशेष रूप से तैयार किए गए पूजा स्थल यानी कूड़ी की परिक्रमा करते हैं। यह कूड़ी पयाँ के पेड़ के पास बनाई जाती है या फिर जहाँ पर भी बनाई जाती है वहाँ पर पयाँ, चीड़, पीपल आदि की टहनियाँ रोप दी जाती हैं। होली गीत गाते समय कोई एक बंदिश गाता यानी भाग लगाता है और बाकी उसके सुर-में-सुर मिलाते हैं। होली के गीतों में स्थानीय पुट होने के साथ देवी-देवताओं, कृष्ण लीला और प्रकृति का वर्णन होता है। जैसे "हर हर पीपल पात जय देवी आदि भवानी, कहाँ तेरो जनम निवास जय देवी आदि भवानी....।" या फिर "को जन खेल घड़िया हिंडोला, को जन डोला झुकाए रहे हर फूलों से मथुरा छाई रहे।" इन गीतों में प्रकृति प्रेम भी होता है, जैसे "चम्पा चमेली के नौ दस फूला..।"

कुमाऊँ में बैठकी होली का बहुत पुराना प्रचलन रहा है। शास्त्रीय संगीत पर आधारित इस होली के बारे में कहा जाता है कि इसकी शुरुआत 1860 के आसपास रामपुर के उस्ताद अमानत उल्ला खाँ ने की थी। बैठकी होली के गायन की शुरुआत पौष मास के पहले रविवार से शुरू हो जाती है। इसके अलग-अलग चरण होते हैं। यह होली रंगों से नहीं रागों से खेली जाती है, क्योंकि इसमें आपको दादरा, ठुमरी, राग धमार, राग श्याम कल्याण, राग भैरवी सभी सुनने को मिल जाएँगे। बैठकी होली की शुरुआत आध्यात्मिक और भक्तिमय होली गायन से होती है। बाद के चरणों में कृष्ण, राधा और गोपियों के बीच हास-परिहास, प्रेमी-प्रेमियों की तकरार, देवर-भाभी से जुड़े गीतों तक पहुँच जाती है। इन गीतों की विशेषता यह है कि ये ब्रज भाषा में होते हैं।

## गढ़वाली में रामायण का गायन है रम्माण

गढ़वाल मंडल के चमोली जिले के पैनखांडा घाटी में स्थित सलूड़, डुंग्रा, डुंग्री-भरोसी और सेलंग गाँवों में हर

साल अप्रैल माह के दूसरे पखवाड़े में भूमि क्षेत्रपाल यानी भूमियाल देवता (भूम्याल देवता) की पूजा के लिए रम्माण महोत्सव का आयोजन किया जाता है। रम्माण बैशाखी के बाद नौ से 11वें दिन पर शुरू होता है। इसमें रामायण का गायन होता है और रम्माण उसी का अपभ्रंश है। अंतर इतना है कि रम्माण का गायन गढ़वाली बोली में होता है। विभिन्न तरह के मुखौटा नृत्यों में कई तरह के नृत्य शामिल होते हैं। कहा जाता है कि इन गाँवों में 1911 से रम्माण महोत्सव का हर साल आयोजन होता आ रहा है।

वैसे उत्तराखंड में मुखौटा नृत्यों की शुरुआत आदि शंकराचार्य के समय हो गई थी। पहले बद्रीनाथ यात्रा के शुरू में जोशीमठ के नृसिंह मंदिर में रम्माण महोत्सव होता था जिसमें रामायण गायन और मुखौटा नृत्य शामिल थे, लेकिन अब यह मुख्य रूप से सलूड़ और डुंग्रा गाँवों तक ही सीमित रह गया है। इन दोनों गाँवों में यह परपंरा वर्षों से चली आ रही है और ये इसके आयोजक होते हैं। दोनों गाँवों का प्रत्येक परिवार इसमें अपनी सक्रिय भूमिका निभाता है। रम्माण में सभी जातियों के लोग भाग लेते हैं और उनकी भूमिकाएँ भी जाति के हिसाब से बाँट दी जाती हैं। वर्ष 2016 में गणतंत्र दिवस के अवसर पर उत्तराखंड की झाँकी रम्माण पर ही आधारित थी। यूनेस्को ने 2009 में रम्माण को अमूर्त कलाओं की श्रेणी में विश्व की सांस्कृतिक धरोहर घोषित किया था।

### पहाड़ियों का प्रकृति के प्रति प्रेम का सूचक है 'हरेला'

सामाजिक समरसता और नई ऋतुओं के स्वागत का अनोखा त्योहार हरेला उत्तराखंड में मुख्य रूप से कुमाऊँ मंडल में मनाया जाता है। यह त्योहार साल में तीन बार आता है। चैत्र, श्रावण मास और फिर दशहरे में, लेकिन श्रावण के महीने के हरेले का ही अधिक महत्त्व है। यह हरियाली के आगमन का पर्व है और हरियाली सावन में आती है। प्रकृति मानव को सबकुछ देती है, इसलिए सुख-समृद्धि बनाए रखने के लिए उसकी पूजा की जाती है। हरेला सीख देता है कि प्रकृति सर्वश्रेष्ठ है। आज जबकि भौतिकवाद हावी हो रहा है तब हरेला जैसे पर्वों का महत्त्व अधिक बढ़ गया है।

हरेला एक दिन का नहीं, बल्कि नौ-दस दिन तक चलने वाला त्योहार है। चैत्र में इसकी शुरुआत संक्रांति से होती है और श्रावण में संक्रांति के दिन हरेला होता है और इससे नौ दिन पहले इसकी शुरुआत हो जाती है। आश्विन मास में नवरात्र के समय में, जबकि आम भारतीय परिवार भी अपने घरों में हरियाली उगाता है। इसे नई ऋतु के अलावा नई फसल की शुरुआत का पर्व भी माना जाता है। अच्छी फसल के लिए एक तरह से प्रकृति के प्रतीक भगवान शिव की पूजा की जाती है। कई जगह इस दिन वृक्षारोपण भी किया जाता है। यह बच्चों, युवाओं के लिए बड़ों से आशीर्वाद लेने का पर्व भी है। हरेला पर गाए जाने वाले गीत में आशीर्वाद ही निहित होता है। अब इस गीत को ही देख लीजिए—

जी रया, जागि रया
धरती जस आगव, आकाश जस चाकव है जया
सूरज जस तराण, स्यावे जसि बुद्धि हो
दूब जस फलिये,
सिल पिसि भात खाये, जांठि टेकि झाड़ जाये।

हरेला से नौ दिन पहले 'सतनज' यानी सात अनाज को मिलाकर घर में हरियाली उगाई जाती है। पाँच अनाजों का भी उपयोग किया जा सकता है। रिंगाल की टोकरी या मिट्टी के बर्तन में

मिट्टी डालकर उसमें गेहूँ, जौ, उड़द, भट्ट, सरसों, मक्का, गहथ, तिल आदि के बीज डाले जाते हैं। इसे हर दिन सींचा जाता है और सांकेतिक तौर पर इसकी गुड़ाई की जाती है। दसवें दिन परिवार का मुखिया या ब्राह्मण मंत्रोच्चार के साथ हरेला काटता है, जिसे पतीसणा कहते हैं। घर की सबसे बुजुर्ग महिला परिजनों को तिलक, चंदन के साथ आशीर्वाद देते हुए हरेला लगाती है। इसे पैरों, घुटने, कंधों और सिर में रखा जाता है। इसे कानों में भी लगाया जाता है।

### रक्षाबंधन के दिन होता है 'जन्यो पुन्यु'

रक्षाबंधन यानी बहन का भाई की कलाई पर राखी बाँधना, लेकिन उत्तराखंड में वर्षों तक इसका दूसरा स्वरूप देखने को मिलता था। यहाँ श्रावण पूर्णिमा अर्थात रक्षाबंधन के दिन गाँव का ब्राह्मण अपने यजमानों को रक्षा धागा पहनाता है। वह गाँव के हर घर में जाकर रक्षा धागा बाँधता है। इसके अलावा जिस घर में जितने लोग जनेऊ पहनते हैं, वे इस दिन पुराना जनेऊ त्यागकर ब्राह्मण के हाथों नया जनेऊ धारण करते हैं। ब्राह्मण को इसके बदले में दक्षिणा दी जाती है।

कई गाँवों में सभी जनेऊधारी व्यक्ति किसी पानी वाले स्थान पर एकत्रित होकर नहाते हैं और फिर तर्पण दिए जाते हैं। इसके बाद ही ब्राह्मण रक्षा धागा और जनेऊ पहनाता है। जनेऊ पहनाने और उस दिन पूर्णिमा होने के कारण इसे स्थानीय भाषा में जन्यो पुन्यु कहा जाने लगा। मतलब नया जनेऊ धारण करना। इस दिन कई युवाओं का यज्ञोपवीत संस्कार या उपनयन संस्कार भी किया जाता है। पहले गाँव के बुजुर्ग खुद ही धागे को कातकर जनेऊ तैयार करते थे और फिर ब्राह्मण से उसकी पूजा करवाते थे। इसके बाद ही उसे पहना जाता था। अब ब्राह्मण खुद ही बाज़ार से जनेऊ खरीदकर ले आता है और उसकी पूजा करके उसे यजमान को पहना देता है।

### घी-त्यार या घी संक्रांति : घी नहीं खाया तो बनोगे घोंघा

उत्तराखंड में यूँ तो प्रत्येक महीने कोई-न-कोई त्योहार मनाया जाता है। इनमें भाद्रपद यानी भादो महीने की संक्रांति भी शामिल है। इस दिन का खास महत्त्व इसलिए है क्योंकि इस संक्रांति को यहाँ घी-त्यार या घी संक्रांति मनाई जाती है। इसे घिया संक्रांद, ओलगी या ओलगिया भी कहते हैं। इस दिन घी खाना जरूरी माना जाता है। कहा जाता है कि जो इस दिन घी नहीं खाता है वह अगले जन्म में गंडेल (घोंघा) बनता है। यहाँ तक कि नवजात बच्चों के सिर पर भी घी लगाकर उनकी जीभ में थोड़ा-सा घी रखा जाता है। जिसके घर में दुधारू पशु नहीं होते, गाँव वाले उनके यहाँ दूध और घी पहुँचाते हैं।

गर्म कपड़ों को निकालकर उन्हें धूप में सुखाना शुरू कर देते हैं। खतड़ुवा के दिन विशेष तौर पर गौशाला को साफ किया जाता है। पशुओं की भी सफाई की जाती है। उन्हें पकवान बनाकर खिलाए जाते हैं। इस दिन उन्हें हरी घास जरूर खिलाई जाती है क्योंकि सर्दियों में हरी घास मिलनी मुश्किल होती है और पशुओं को सूखी घास पर निर्भर रहना पड़ता है। घर की महिलाएँ गौशाला के अंदर मशाल जलाकर वहाँ पूरी सफाई करती हैं।

इस बीच गाँव के बच्चे किसी एक जगह पर लकड़ियों का ढेर एकत्रित कर देते हैं। बाद में सभी महिलाएँ मशाल सहित वहाँ पर पहुँचती हैं। वहाँ पर गौशाला से निकाले गए सारे 'खतड़ुवा' डाल दिए जाते हैं और फिर उन्हें जला दिया जाता है। इसे 'बुढी' कहते हैं, जिसे पशुओं पर लगने वाले खुरपका, मुँहपका रोगों के प्रतीक के तौर पर जला दिया जाता है।

माना जाता है कि इससे पशुओं को रोग नहीं लगता और पहाड़ी ढलानों (भ्योळ या भ्याळ) से उनके गिरने की सम्भावना कम हो जाती है। इस अवसर पर ककड़ी का भोग भी लगाया जाता है। उसके बीजों को माथे पर लगाया जाता है।

बच्चे खतड़ुवा जलाते समय यह गीत गाते हैं "भैल्लो जी भैल्लो, भैल्लो खतड़ुवा, गै की जीत, खतड़ुवै की हार, जै बटि श्योल, खतड़ु पड़ो भ्योल, भाग खतड़ुवा भाग।" अर्थात गाय की जीत हो और पशुओं पर लगने वाली बीमारी का नाश हो।

> **"खतड़ुवा के दिन विशेष तौर पर गौशाला को साफ किया जाता है। पशुओं की भी सफाई की जाती है। उन्हें पकवान बनाकर खिलाए जाते हैं। इस दिन उन्हें हरी घास जरूर खिलाई जाती है क्योंकि सर्दियों में हरी घास मिलनी मुश्किल होती है और पशुओं को सूखी घास पर निर्भर रहना पड़ता है। घर की महिलाएँ गौशाला के अंदर मशाल जलाकर वहाँ पूरी सफाई करती हैं।"**

यह प्रकृति और पशुधन से जुड़ा त्योहार है। बरसात में प्रकृति अपने यौवनावस्था में होती है और ऐसे में पशु भी आनंदित हो जाते हैं। उन्हें इस दौरान खूब हरी घास और चारा मिलता है। कहने का मतलब है कि आपका पशुधन उत्तम है। आपके पास दुधारू गाय-भैंस हैं तभी आप घी का सेवन कर सकते हैं। इस दिन कई तरह के पकवान बनाए जाते हैं, जिनमें दाल से भरी हुई रोटियाँ, खीर और गुंडला या गाबा (पिंडालू या पिनालू के पत्तों से बना) प्रमुख हैं।

### पशुओं के प्रति प्रेम का परिचायक है खतड़ुवा

एक किसान को क्या चाहिए। उसके खेतों में खूब फसल हो और उसका पशुधन खूब फले-फूले। यदि पिथौरागढ़ का हिल जात्र कृषि और पशुपालन से जुड़ा त्योहार है, तो 'खतड़ुवा' यहाँ लोगों का अपने पशुओं के प्रति प्रेम को दर्शाता है। यह आश्विन मास (सितंबर) में कन्या संक्रांति के दिन मनाया जाता है। यह वह समय होता है जबकि पहाड़ों में वर्षा ऋतु समाप्त हो जाती है और सर्दियाँ दस्तक देना शुरू कर देती हैं। समझा जाता है कि खतड़ुवा शब्द भी 'खातड़ या खातड़ी' से बना है, जो रजाई के लिए स्थानीय शब्द है। इस समय लोग अपने

### कभी दीवाली का मतलब था यगास, बग्वाळ

उत्तराखंड में दीपावली को बग्वाळ कहते हैं। इसके 11वें दिन बाद हरिबोधिनी एकादशी आती है जिसको यगास कहा जाता है। अमावस्या के दिन लक्ष्मी जागृत होती है इसलिए बग्वाल को लक्ष्मी जी की पूजा की जाती है। हरिबोधिनी एकादशी के दिन भगवान विष्णु शयनावस्था से जागृत होते हैं और उस दिन यहाँ विष्णु पूजा करने का प्रावधान है।

उत्तराखंड में असल में कार्तिक त्रयोदशी से ही दीप पर्व शुरू हो जाता है और यह कार्तिक एकादशी यानी हरिबोधिनी एकादशी तक चलता है। इसे ही यगास-बग्वाल कहा जाता है। यह ऐसा त्योहार है जो पहाड़ियों को अपनी माटी, अपने खेतों, अपने पेड़-पौधों, रीति-रिवाजों और संस्कारों से जोड़ता है। बग्वाळ और यगास दोनों दिनों में ही सुबह पालतू पशुओं की पूजा की जाती है। पशुओं के लिए भात, झंगोरा, जौ और बाड़ी (मँडुए के आटे से बना हुआ) का पींडू (अन्न से तैयार किया गया पशुओं के लिए आहार) तैयार किया जाता है। भात, झंगोरा, बाड़ी और जौ के अलग अलग बड़े-बड़े लड्डू तैयार

करके उन्हें परात में रखकर कई तरह के फूलों और पत्तियों से सजाया जाता है। पशुओं की पूजा के लिए सबसे पहले उनके पाँव धोए जाते हैं और फिर धूप और दीया जलाकर उनकी पूजा की जाती है। उन पर हल्दी का टीका लगाने के साथ ही सींगों को तेल से चमकदार बनाया जाता है। इसके बाद पशुओं को परात में सजाया गया अन्न खिलाया जाता है।

बग्वाल और यगास यानी छोटी बग्वाल् दोनों दिन घरों में पूड़ी, स्वाली, पकोड़ी, भूड़ा आदि पकवान बनाए जाते हैं। शाम को इस तरह के पकवान अधिक मात्रा में बनाए जाते हैं। फिर उन सभी परिवारों में ये पकवान पहुँचाए जाते हैं जिनकी बग्वाल नहीं होती है। (जिनके घर में किसी की मृत्यु हो जाती है तो वह साल भर तक कोई त्योहार नहीं मनाता है)। इसके बाद रात को खा-पीकर मनाया जाता था बग्वाल का असली जश्न, जिसे 'भैल्लो' कहा जाता है।

गाँवों में ढोल-दमाऊ की थाप पर सभी गाँव वाले एक साथ भैल्लो खेलते हैं। भैल्लो सूखे बाँस पर क्याड़ा (भीमल के पेड़ की टहनियों को कुछ दिनों तक पानी में डालकर तैयार की गई जलावन की लकड़ी) और छिल्ला (चीड़ की लकड़ी) से तैयार करते थे। बाद में उस पर आग लगाकर पूरे गाँव का चक्कर लगाया जाता है। ऐसा गाँव की समृद्धि के लिए किया जाता था। भैल्लो के बारे में मान्यता है कि सूर्य जब दक्षिणायन में होता है तो उससे हमारी दूरी बढ़ जाती है। इसलिए बुरी ताकतों को दूर भगाने के लिए उजाले का त्योहार भैल्लो खेला जाता है। माना जाता है कि पवित्र अग्नि के सम्पर्क में आने से बुरी ताकतें नष्ट होती हैं और मन का मैल भी हट जाता है। इस दिन पहले से तैयार की गई मोटी रस्सियों से रस्साकशी भी होती है। रस्सियों के बीच में चीड़ के छिल्ले लगाकर आग लगा देते हैं और करतब दिखाए जाते हैं। विशेषकर आग को लाँघने का करतब जिसे भ्वींत कहते थे। अब हालाँकि भैल्लो और भ्वींत पुराने जमाने की बात हो गई हैं। इनकी जगह दीवाली का शहरी रूप गाँवों में रच-बस गया है।

इन त्योहारों के अलावा उत्तराखंड में विभिन्न स्थानों के अनुसार कुछ अन्य छोटे त्योहार भी मनाए जाते हैं। जैसे कि नंदा देवी राजजात एक धार्मिक यात्रा है। नंदा कुमाऊँ ही नहीं गढ़वाल के राजाओं की भी ईष्टदेवी है इसलिए इसे राजराजेश्वरी कहा गया है। नंदा को पार्वती का रूप भी माना जाता है। नंदादेवी की वार्षिक जात हर वर्ष अगस्त-सितंबर में होती है, लेकिन राजजात का आयोजन 12 वर्ष या इससे अधिक समय में किया जाता है। यह धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यता से जुड़ी यात्रा है, जो विवाहिता के लिए ससुराल में कठिन परिस्थितियों के अलावा उसका अपने ससुराल के प्रति स्नेह को भी दर्शाती है। इसी तरह से कुमाऊँ में सातूं-आठूं का त्योहार जो कि शिव-पार्वती को समर्पित है। महिलाएँ इस दिन व्रत रखती हैं। महिलाएँ घास और पौधों से गौरा या गमरा (पार्वती का एक रूप) और महेश्वर (शिव) को बनाती हैं। पूजा के साथ उन्हें घर में रखा जाता है। यह नौ दिन तक चलने वाला त्योहार है, जो विशेष रूप से पिथौरागढ़ में मनाया जाता है। पिथौरागढ़ जिले में ही भोटिया जनजाति का त्योहार है कंडाली। हर 12 वर्ष में यह अगस्त और अक्तूबर विशेषकर दशहरे के समय मनाया जाता है। कंडाली यानी बिच्छू घास के नाम पर इस त्योहार का नाम पड़ा है। इस पौधे पर 12 साल में एक बार फूल आते हैं। इस त्योहार पर बुराई पर अच्छाई की जीत के प्रतीक के रूप में कंडाली पौधे का नाश किया जाता है। कंडाली पौधे का कोई भी भाग शरीर से छू जाने पर पीड़ा होती है। लोहाघाट चंपावत में रक्षाबंधन के अवसर पर ही आसारी वायुरथ महोत्सव– सुई बिशंग भी मनाया जाता है। यह पाँच दिन तक चलने वाला महोत्सव है।

उत्तराखंड में इन त्योहारों के साथ-साथ विभिन्न मेलों (थाळ-कौथिग) का आयोजन भी धूमधाम से होता है। इन मेलों की रौनक भी किसी त्योहार से कम नहीं होती है। मेलों की शुरुआत मुख्य रूप से बैशाखी के दिन से शुरू होती है। बैशाख के महीने में कई स्थानों पर मेलों का आयोजन होता है। अकेले गढ़वाल मंडल में ही इस महीने 100 से अधिक स्थानों पर मेले लगते हैं। द्वाराहाट में लगने वाला बिखौती का मेला काफी मशहूर है। गौचर में हर साल लगने वाले मेले का व्यावसायिक महत्त्व था। इसकी शुरुआत 1943 में हुई थी। देवभूमि उत्तराखंड में अधिकतर मेले किसी देवस्थल से संबंध रखते हैं। किसी भी देवी या देवता के मंदिर के पास किसी नियत तिथि को कौथिग लगता है। इस तरह से कौथिग में धार्मिक कार्यों के अलावा लोगों को अपने सगे-संबंधियों से मिलने और वर्ष भर की अपनी खट्टी मीठी यादों को साझा करने का मौका मिलता था। जब संचार के सुगम्य साधन नहीं थे, तब कोई बेटी अपने माँ-पिताजी, भाई-बहन और गाँव वालों से मिलने के लिए इन कौथिगों का बेसब्री से इंतजार करती थी। इसलिए अक्सर कौथिगों में शाम को बिछोह का एक मार्मिक दृश्य भी पैदा हो जाता था। किसी भाग्यशाली बेटी को कौथिग के बहाने अपने मायके एक-दो दिन बिताने के लिए मिल जाते थे। उत्तराखंड के प्रमुख थौळ-कौथिगों में गौचर मेला, श्रीनगर का बैकुंठ चतुर्दशी मेला, उत्तरकाशी का माघ मेला, कोटद्वार के कण्वाश्रम में लगने वाला बसंत पंचमी मेला, अल्मोड़ा का नंदादेवी मेला, बागेश्वर का उत्तरायणी मेला, लोहाघाट का देवीधूरा मेला, टनकपुर का पूर्णागिरी या कालसन मेला, भीमताल में लगने वाला हरेला मेला, काठगोदाम के पास जियारानी का मेला, मुंडणेश्वर का मेला आदि प्रमुख हैं। अकेले पौड़ी गढ़वाल में ही 50 से अधिक बड़े कौथिग लगते हैं। मुख्य कौथिगों में मुंडणेश्वर, एकेश्वर, जणदादेवी, सल्ट महादेव, अदालीखाल, बिनसर, देवलगढ़, कौड़िया लैंसडाउन का ज्यूनि सेरा का मेला, ताड़केश्वर, संगलाकोटी, देवराजखाल, बुंगी कौथिग, नैनीडांडा, रिखणीखाल, बेदीखाल, बीरोंखाल, घंडियाल, नयार घाटी का सत्यवान सावित्री मेला, दीवा मेला, कांडई कौथिग, दनगल (सतपुली), कांडा, थैलीसैण, बैंजरों, लंगूरगढ़ी, डांडा नागराज का कौथिग आदि शामिल हैं।

# विस्मृत

ट्रेन प्लेटफार्म छोड़ चुकी थी। राघव के मन में माँ की घर से चलते वक्त कही गई बात अभी भी गूँज रही थी। बिशनपुरा वालों से सावधान रहना। साँप का काटा शायद जी जाए, लेकिन उनके फंदे, से कोई नहीं बचा है। मन में घृणा और क्रोध का एक ज्वार आया। फिर स्वयं ही अपने को समझाने लगा। यहीं से जी जलाने से क्या लाभ। जब आमने-सामने होंगे, तो दो-दो हाथ कर लेंगे। अपने क्रोध का तार्किक आधार उसे उचित प्रतीत हो रहा था। जब खेत-खलिहान में उनका भी बराबर का हिस्सा है, तो बिशनपुरा वाले चाचा-चाची क्यों उनके भाग में भी खेती करवाकर अनाज हर साल उठवा रहे हैं।

कस्बे से उसका नाता टूटे कई दशक बीत चुके थे। मर्द और पंछी दाना-पानी की तलाश में जब तक घर से न निकले, गुजारा नहीं होता। गाँव में तो शायद बचपन में एकाध दफा गया होगा। पुश्तैनी खेत-खलिहान और मकान वहीं स्थित थे। मकान तो अब खंडहर बनकर पुरातत्व-वेत्ताओं के लिए रुचि का विषय बन चुका था। जमीन पर अभी भी खेती बँटाई द्वारा होती थी। कायदे से उसे भी अनाज का आधा हिस्सा मिलना चाहिए था। लेकिन रामू यानी उसके चाचा का सुपुत्र सारा कुछ करवाकर खुद पूरा हजम कर जाता। खुद न तो नौकरी मिल पाई थी, न ही कभी पहले खोली दुकान चली। किसी लायक नहीं था वह। ऊपर से उसकी सरकारी नौकरी पर वे लोग जलते थे। जब से राघव के प्रमोशन की खबर उन्हें मिली थी तब से बिशनपुरा वालों का हृदय किसी प्रेमी के हृदय की तरह निरंतर जलता रहता था।

राघव की माँ और चाची दोनों एक ही जिले की थीं। माँ का गाँव चकिया था और वे बिशनपुरा की थीं। कस्बे में जहाँ उसका बचपन बीता, संयुक्त परिवार का अस्तित्व था। दादा-दादी तब जीवित और स्वस्थ थे। पिताजी और चाचा का परिवार साथ-साथ था। दोनों अविवाहित बुआ भी थीं। वैसे वे कुल चार भाई थे। बाकी दो अलग रहते थे। वह और श्याम तथा चाचाजी के दोनों बेटे मनहर और रामू इकठ्ठा खेलते और स्कूल जाते। वह सबसे बड़ा था। रामू सबसे छोटा। लोग उन सबको राम-लक्ष्मण और भरत-शत्रुघ्न पुकारते थे। कस्बे की जीवन-शैली अलग होती है। शांत, ज्यादा तड़क-भड़क और गति नहीं। पर्व-त्योहारों पर जरूर मेले का दृश्य उपस्थित हो जाता।

**मनीष कुमार सिंह**

विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं यथा-हंस, कथादेश, कथाक्रम, समकालीन भारतीय साहित्य, साक्षात्कार, पाखी, दैनिक भास्कर, नई दुनिया, नवनीत, शुभ तारिका, लमही, अनभै साँचा, भाषा, साक्षात्कार, अक्षरपर्व इत्यादि में कहानियाँ प्रकाशित। पाँच कहानी संग्रह– 'आखिरकार', 'धर्मसंकट', 'अतीतजीवी', वामन अवतार' और 'आत्मविश्वास' प्रकाशित। 'आँगन वाला घर' शीर्षक से एक उपन्यास प्रकाशनाधीन।

**संप्रति :**
भारत सरकार, सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय में प्रथम श्रेणी अधिकारी।

**संपर्क :**
manishkumarsingh513@gmail.com

शहर में अपना मकान लेना कितना कठिन है। नौकरी पेशा वालों के लिए लगभग असम्भव। पहले की बात और थी। तब डबल इनकम वाले हस्बैंड-वाइफ या एकल आय वाले भी मैनेज कर लेते थे। अब रेट काफी बढ़ गए थे। जिसके पास ब्लैक का पैसा हो या पुरानी जायदाद, वही मकान-मालिक या फ्लैट का स्वामी हो सकता था। इसलिए गाँव के खेत का बिकना और भी जरूरी था। शहर के अपने सीमित दायरे वाले परिचित जगत में से किसी ने राघव को बताया था कि अपने मूल-स्थान से खिसके तो वहाँ की किसी भी चीज में से तुम्हें कुछ नहीं मिलने वाला है। परिचित सम्भवतः भुक्तभोगी था। वह इस कथन की सच्चाई का अनुभव कर रहा था। नया इस्टैब्लिशमेंट बनाने में कितना खर्च व मेहनत लगती है, इसे वह जानता था। वे लोग निःसंदेह भाग्यशाली होते हैं जिन्हें सबकुछ या ज्यादातर बना-बनाया मिल जाता है। रामू भी ऐसे भाग्यवानों में ही था। और एक वह है। खीझ, गुस्से व निराशा जैसे मिले-जुले भाव उसके हृदय में उठे। चाची का बड़ा लड़का मनहर था, लेकिन घर में चलती रामू की थी। कुछ साल पहले जब वह उन सबसे मिला था तो उसे भी ऐसा ही लगा। मनहर कोई हिंसक पागल नहीं था। साफ कपड़े पहनता था, लेकिन घर में कोई आया हो तो उससे मिलने की बजाए रोटी-सब्जी थाली में लेकर एक तरफ जमीन पर बैठकर खाने लगता। न कोई बातचीत, न सलीका। माँ-बाप भी उसे धेले भर का महत्त्व नहीं देते थे। यह जानकर राघव को अफसोस हुआ। बचपन में ऐसा नहीं था।

कस्बे में पहुँचकर उसने रिक्शा किया और चाची के यहाँ पहुँचा। मरियल से खड़खड़ाते दरवाजे को पहचानने में उसे देरी नहीं हुई। बरसों से वह वैसे ही खड़ा था। खटखटाने पर कुछ पलों बाद साँकल खोलने की आवाज़ आई। सामने एक बुढ़िया खड़ी थी। पूरे श्वेत केश, झुर्रियों से पटा मुखड़ा। कमर झुकी हुई थी। किसी चित्रकार के लिए आदर्श मॉडल हो सकती थी। लेकिन वह पहचान गया कि यही चाची है। दस-बारह बरस बाद देख रहा है। परिवर्तन तो होगा ही।

"रघु!" वे पहचान कर मुस्कराईं। वह पाँव छूने झुका। संस्कार नहीं भूला था। "अंदर आ बेटा।" उनकी आवाज़ में उल्लास था। बरामदे में पुरानी-सी खटिया पर बैठकर वह सबकुछ निहारने लगा। जरूर वहाँ जीरो वाट का बल्ब लगा होगा। बरसात में या रात-बिरात किसी को जरूरत पड़े तो आँगन से होकर जाना पड़ता था। बीचोंबीच लगा हैंडपम्प। रसोईघर के बर्तन, चूल्हा और वहाँ से आती दाल-सब्जी इत्यादि की सौंधी खुशबू। सामने के कमरे में अंधकार लेकिन

दीवार पर लगी घड़ी पहले वाली थी। उसने देख लिया। चाचा-चाची की जमाने भर पुरानी शादी के समय की तस्वीर को पहचान लिया। तब वे जवान थे। चाची गिलास में पानी और तश्तरी में लड्डू लेकर आईं।

"पहले खाकर पानी पीना।" वे भी खटिया के एक कोने में बैठ गईं। वह न चाहते हुए भी आधा लड्डू खाकर पानी पीने लगा। घर में अभाव और बदहाली स्पष्ट दिख रही थी। उसने सोचा, दूसरे का हिस्सा खाने से कभी कोई बढ़ा है जो ये लोग बढ़ेंगे।

"घर में सब लोग कैसे हैं?" वे पूछ रही थीं। उसका ध्यान टूटा। "सब ठीक हैं।" जवाब संक्षेप में दिया। निगाहें अभी भी घर को सर्च कर रही थीं। "चाचाजी कहीं गए हैं क्या?" उसने पूछा। औरत से क्या बात करनी। खामखाह...। उनके आने पर ही बात होगी। "हाँ बेटा पास से अपने लिए दवा लेने गए हैं। आते होंगे। तुम्हारे दोनों भाई दुकान पर हैं।" उसे याद आया। उन लोगों ने एक वीडियो गेम और गिफ्ट आइटम्स की दुकान खोल रखी थी। दुकान किराए की थी। लोगों से राघव को पता चला था कि बेचारे खाने-कमाने भर का भी नहीं निकाल पाते हैं।

"क्या परेशानी है चाचाजी को?" वह वक्त काटने की गरज से पूछने लगा।

"यह कहो बेटा कि कौन-सी परेशानी नहीं है। डॉक्टर हाई ब्लडप्रेशर बताते हैं। शुगर, बुढ़ापा न जाने क्या-क्या।" वे उदास हो उठीं, "पास में गए हैं। थोड़ी देर में लौटते होंगे।" एक दीर्घ निश्वास के पश्चात वे कहने लगीं, "एक दिन ये नींबू की झाड़ के पास खड़े थे। एक फल टपक कर उनके घुटने पर जा गिरा।" वे आँगन में लगे पेड़ की ओर इशारा कर रही थीं। "ये खड़े-खड़े काँपने लगे। हम सबने जब देखा तो पकड़ कर बिस्तर पर लिटाया। डॉक्टर कहते हैं इन्हें ज्यादा टेंशन मत लेने दो।" चाची साँस लेने के लिए रुकीं, "घर की आमदनी कुछ खास नहीं है। मनहर के बारे में तुम्हें पता ही है। ज्यादा मेहनत मैं उससे नहीं कराती। रामू से जितना बन पड़ता है करता है। तुम्हारी तरह पढ़ाकू तो है नहीं कि अच्छी नौकरी ढूँढ़ ले।"

वह अफसोस में डूब गया। बेकार ही पूछा। "तुम्हारा मनहर बात-बात पर नर्वस हो जाता है।" वे कह रही थीं। "घर की जिम्मेदारी से घबराता है। एक अकेला रामू बचा। वह कहाँ-कहाँ जाए...क्या करे।" उसके सामने तस्वीर साफ होने लगी। लोग भी यही कहते थे। घर में बस माँ और छोटे लड़के की चलती है। बाप और बड़े लड़के को कोई नहीं पूछता है।

दरवाजे पर आहट होने पर चाची बोली, "रामू आ गया।" वही था। "प्रणाम रघु भईया।" वह पैर छूता हुआ बोला।

"खुश रहो।" वह उसे देख रहा था। एक छरहरा, साफ रंग का युवक सामने था। कई बरस बाद वह उसे देख रहा था। सफेद कुर्ता-चूड़ीदार पैजामा पहने। "बड़े स्मार्ट लग रहे हो।" राघव ने टिप्पणी की।

"हाँ स्मार्ट तो बनना ही पड़ता है।" वह आसमान की ओर देखता हुआ न जाने क्यों जरा व्यंग्य भरी वाणी में बोला। राघव थोड़ा हैरान हुआ। इसमें व्यंग्य की क्या बात है?

बातचीत में बात खुली। खेत-खलिहान को लेकर रिश्तेदारों-पट्टीदारों से जो कड़वाहट मिली थी उससे उसका मन खट्टा हो गया था। वक्त के हिसाब से रामू के तेवर तीखे हो गए। पिताजी चार भाई थे। रामू के पिता सबसे गरीब। दो भाई साधन-संपन्न। वह मध्यम वर्ग में आता था। साधन-संपन्न लोगों ने सारे कागज व जानकारी अपने पास रखी थी। रामू ने पहल और हिम्मत करके कचहरी से मतलब की जानकारी निकाली। लेकिन वह अपने हिस्से के साथ-साथ राघव के पिता का हिस्सा भी खा रहा था। उसी के अनाज से परिवार चलता था। झगड़ा इसी बात का था। चलते वक्त माँ ने कहा था– "बिशनपुरा वालों पर कभी भरोसा मत करना।"

रामू की वाणी में घुला व्यंग्य उसे पसंद नहीं आया। लेकिन बात जारी रखने के लिहाज से उसने पूछा, "और सब कैसा चल रहा है?"

वह प्रयत्न करके मुस्कराता हुआ कहने लगा, "रघु भईया आपसे क्यों छिपाना। घिसट रहा हूँ। नौकरी तो मिलने से रही।" राघव को पता था। रामू और उसकी माँ नौकरी के लिए दोनों प्रभावशाली चाचाओं के पास खूब गए थे। मदद नहीं मिली तो घर बैठकर उन्हें कोसने लगे। "इधर गाड़ी चलाने की सोच रहा हूँ। अच्छी इनकम है।" रामू ने अपने भावी योजना की जानकारी दी।

"खुद क्यों नहीं चलाते?" वह सामान्य भाव से बोला। लेकिन अंतर्मन में

**"एक बदरंग-सी कवर वाली मेज पर एलबम में फोटो रखा था। वह पहचान गया। तस्वीर में वह था। घर के अहाते में घास पर बैठे चारों बच्चे थे। वह, मनहर, रामू और श्याम। रामू उसके कंधे पर सर टिकाए हँस रहा था। सभी प्रसन्नचित्त थे।"**

व्यंग्य था। खाने का ठिकाना नहीं और ड्राइवर रखेंगे।

चाची चाय बनाकर लाईं। "चलो अंदर वाले कमरे में बैठते हैं।" वह अंदर पलंग पर बैठा। एक बदरंग-सी कवर वाली मेज पर एलबम में फोटो रखा था। वह पहचान गया। तस्वीर में वह था। घर के अहाते में घास पर बैठे चारों बच्चे थे। वह, मनहर, रामू और श्याम। रामू उसके कंधे पर सर टिकाए हँस रहा था। सभी प्रसन्नचित्त थे।

बचपन में गर्मी के दिनों में लाइट जाने पर घर के मर्द बाहर चबूतरे पर खाट डाल कर सोते थे। बच्चे भी देखा-देखी वहीं सोते। रामू उसके साथ लेटने के लिए झगड़ा करता। उसकी माँ अंदर बुलाती रहतीं। कभी-कभार एकाध हाथ भी जमाती। लेकिन वह रो-धोकर उसी के साथ सोता। चलो जाने दो बच्चों और कुत्ते में कोई अंतर नहीं होता है। अंत में दादी कहतीं। करने दो इसे अपने मन की।

तस्वीर ब्लैक एंड व्हाइट थी। सत्तर के दशक की। अब इक्कीसवीं सदी चल रही है। सबसे बड़ा वह और सबसे छोटा रामू। उसने हाथ बढ़ाकर बिना कुछ कहे फोटो उठा ली। अपने नजदीक लाकर न जाने कौन-सी चीज ढूँढ़ने लगा। लॉन की घास श्वेत-श्याम तस्वीर में वैसी ही दिख रही थी। वह घास की गंध याद करने लगा। महानगर की फ्लैट संस्कृति में घास नहीं मिलती। गमलों में लोग ज्यादा-से-ज्यादा फूल-पौधे उगा सकते हैं। फुटबाल खेलते, गुल्ली-डंडा, क्रिकेट खेलते-लड़ते, टीम बनाते वह घास पर गिरकर वहीं एकाकार हो जाते थे। अपने फ्लैट के पीछे नगर-निगम के धूल-धूसरित पार्क में लड़कों को क्रिकेट खेलते देखकर उसके मन में विभिन्न प्रकार के भाव व स्मृतियाँ आती थीं। लेकिन इतनी गहनता शायद न आई थी। वर्षों के अंतराल ने हृदय में कैसे-कैसे विचित्र भाव भर दिए– संदेह, घृणा, विग्रह, घात-प्रतिघात, ईर्ष्या। वह गमगीन हो गया।

जाड़े में दोपहर में सभी बच्चे खूब खेलते। फिर शाम होने के ठीक पहले माँ या चाची में से कोई सबको आवाज़ देकर बुलाता और स्वेटर पहना देता। बाद में वे खुद कपड़े पहनने लगे। पर एक समय था जब नहलाना-धुलाना और कपड़े पहनाना माँ-दादी, चाची का काम होता था। अब सभी एक दूसरे से ऐसे अलग हो गए जैसे कभी जुड़े ही न हों।

चाचाजी और मनहर आ गए थे। शकाय, समय से पूर्व अतिवृद्ध दृष्टिगोचर होने वाले चाचा को भी उसने सप्रयास पहचान लिया। मनहर के बारे में ठीक सुना था। शर्मीला, संकोची और कुछ-कुछ असंतुलित। प्रणाम-पाती करके चुपचाप एक कोने में जमीन पर बैठ गया।

चाचा ने कहा, "कहो रघु बेटा, हमें खेत से बेदखल करवाओगे या अपने भाइयों पर कुछ रहम करोगे?"

वह शांत रहा। इतने जटिल प्रश्न का जिसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि हो, सरल उत्तर सम्भव नहीं है। देर बाद कहा– "चाचा दाने-दाने पर खाने वाले का नाम लिखा है। मैं कौन होता हूँ किसी को बेदखल करने वाला। बस जरा हमारा भी ख़याल रखिए। हम भी कोई धन्नासेठ नहीं। थोड़ा हमें भी दिलवा दीजिए।"

चाचा को यह उत्तर आशातीत लगा। वे राहत से मुस्कराए, "नहीं बेटा किसी का धन हमसे भी खाते नहीं बनेगा।"

रामू रसोई से चाची के साथ खाने की थाली लाता दिखाई दिया। उसे लगा कि अभी जिद करेगा कि भईया के साथ ही खाऊँगा।

# श्री गुरु ग्रंथ साहिब अखंडता और अभेदता का प्रतीक

विश्व में अनेक धर्म हैं, उनमें से अधिकांश धर्मों के अपने-अपने धार्मिक ग्रंथ हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब सिख धर्म का पवित्र धार्मिक ग्रंथ है। श्री गुरु नानक देव ने सिख धर्म की नींव रखी। इसके दस गुरु साहिबान असल में एक ही जोत-स्वरूप हुए। श्री गुरु ग्रंथ साहिब सिख धर्म के मूल सिद्धांतों की असल पहचान करवाता है। यह एक ऐसा महासागर है, जिसमें कहीं से भी डुबकी लगाकर अमृत के घूँट भरे जा सकते हैं।

इसमें कोई शक नहीं कि सिख धर्म में श्री गुरु ग्रंथ साहिब के प्रति अपार श्रद्धा है। वे अपने प्रत्येक भीतरी विचार और इच्छाओं सहित इसके आगे नतमस्तक होकर अपने दुनियावीं और मायावादी विकारों, आकांक्षाओं और लालसाओं को स्वीकार करते हैं। जहाँ कहीं श्री गुरु ग्रंथ साहिब का 'प्रकाश' किया जाता है, उस स्थान को विशेष तौर से साफ-सुथरा और उचित व्यवस्था कर सजा-सँवार कर रखा जाता है। ये विशेष प्रबंध अत्यंत आकर्षित करता है और पवित्रता का एहसास करवाता है। ये ग्रंथ सिर्फ बाहरी रखरखाव के कारण ही आकर्षित नहीं करता, बल्कि इसके भीतर जो ज्ञान का भंडार भरा है, वो मनुष्य के दसों कपाट खोलने की ताकत रखता है।

वैसे तो श्री गुरु ग्रंथ साहिब ऐसा महाकाव्य है, जिसे सिख धर्म में 'गुरु' का दर्जा दिया गया है। इसके बारे में बहुत अधिक नहीं जानने वाले भी यह जानते हैं कि यह विश्व में एक ऐसा धार्मिक ग्रंथ है, जिसमें सिर्फ छह सिख गुरु साहिबान की ही 'बाणी' (वाणी) नहीं, इसके अलावा अनेक संतों-भक्तों और भट्टों के साथ चार सिखों की बाणी भी शामिल है। यह एक ऐसा ग्रंथ है, जिसकी दुनिया में दूसरी कोई मिसाल नहीं मिलती। उल्लेखनीय है कि इसमें गुरु गोबिंद सिंह की रचना शामिल नहीं है। उनकी रचना को 'दसम ग्रंथ' कहा जाता है।

अपने जीवनकाल में गुरु नानक देव ने सारी दुनिया का चक्कर लगाया। वह सभी धर्मों के प्रमुख तीर्थ स्थानों, मंदिरों और मक्का-मदीना तक गए। वे अनेक पीरों, फकीरों, संत-महात्माओं और पंडित-मौलवियों से मिले। उन्होंने सभी के साथ परमात्मा संबंधी विचार-चर्चा की। उन्होंने सभी के साथ संवाद रचाया। अपने इसी

**डॉ. जसविन्दर कौर बिन्द्रा**

हिंदी-पंजाबी की लेखिका, समालोचक व अनुवादिका।

50 से अधिक पुस्तकों का अनुवाद (हिन्दी व पंजाबी में)। ने.बु.ट्र., साहित्य अकादमी, भारतीय ज्ञानपीठ, वाणी प्रकाशन, प्रभात प्रकाशन, पंजाबी यूनीवर्सिटी पटियाला, यूनी स्टार आदि प्रकाशनों से पुस्तकें प्रकाशित।

पंजाबी अकादमी, दिल्ली से अनुवाद पुरस्कार से सम्मानित और रिसर्च प्रोजेक्ट के लिए फैलोशिप प्राप्त।

**संप्रति :**
दिल्ली यूनीवर्सिटी के पंजाबी विभाग सहित कई कॉलेजों में अध्यापन। श्री गुरु नानक देव खालसा कॉलेज में कार्यरत।

**संपर्क :**
jasvinderkaurbindra@gmail.com

स्वभाव के कारण वे ग्यारहवीं सदी में हुए बाबा शेख फरीद की गद्दी तक पहुँचे और उनकी रचना को अपने साथ ले आए। गुरु नानक देव की इसी परम्परा का निर्वाह बाद के गुरु साहिबान ने भी किया। इसी कारण उन्हें जहाँ से भी ऐसे संत-भक्त की रचना के बारे में जानकारी मिली, जिसका निश्चय एकेश्वर या निराकार प्रभु के अस्तित्व में रहा, उन सभी की रचना (बाणी) को एकत्रित किया जाता रहा। अंततः पाँचवें गुरु श्री गुरु अर्जन देव ने उस सारी रचना को संकलित कर एक ग्रंथ का रूप दे दिया। इस बृहत् कार्य में उनका सहयोग गुरु घर के अनन्य सिख भाई गुरदास ने किया। उनकी रचना को भी शब्द-कीर्तन के रूप में गुरुद्वारों में गाए जाने का गौरव प्राप्त है। उल्लेखनीय है कि नवें गुरु श्री गुरु तेग बहादुर की बाणी दसवें गुरु ने इसमें शामिल कर सम्पूर्ण किया।

**"सभी गुरुद्वारों में ही नहीं, जो लोग अपने घरों में गुरु ग्रंथ साहिब रखते हैं, सभी जगहों पर इसी प्रकार 'प्रकाश और सुखासन साहिब' किया जाता है। हर रोज इसमें से 'वाक' लिया जाता है अर्थात् जिसे 'हुक्मनामा' कहा जाता है।"**

इसके कुल 1430 पृष्ठ हैं। पृष्ठों का आकार बृहत् है। सभी गुरु साहिबान की बाणी में कर्त्ता के रूप में सिर्फ 'नानक' नाम आता है। अन्य गुरुओं की रचना की जानकारी बाणी के ऊपर दिए महला दूजा, तीजा, चौथा, पँजवा और नौवाँ से होती है। संतों-भक्तों की रचना में कर्त्ता के रुप में उन्हीं का नाम शामिल है। किसी भी रचना से कोई छेड़छाड़ नहीं की गई है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब सिर्फ एक ग्रंथ नहीं है, गुरु स्वरूप है। रोज सूर्योदय के समय गुरुद्वारे में इसका 'प्रकाश' किया जाता है, अर्थात् पूरी मान-मर्यादा के साथ इसे खोला जाता है। रात के समय इसे बंद कर एक अलग कमरे में पलंग पर रखा जाता है, जिसे 'सुखासन साहिब' कहा जाता है। सभी गुरुद्वारों में ही नहीं, जो लोग अपने घरों में गुरु ग्रंथ साहिब रखते हैं, सभी जगहों पर इसी प्रकार 'प्रकाश और सुखासन साहिब' किया जाता है। हर रोज इसमें से 'वाक' लिया जाता है अर्थात् जिसे 'हुक्मनामा' कहा जाता है।

किसी एक आलेख या निबंध द्वारा श्री गुरु ग्रंथ साहिब की महानता और महत्ता का बखान सम्भव नहीं, फिर भी इससे संबंधित कुछ प्रमुख विशेषताओं द्वारा इसके 'अमूल्य निधि' होने और 'सरब साझी गुरबाणी' होने का एहसास हो सकता है।

## शब्द है गुरु

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना पाँचवे गुरु श्री गुरु अर्जन देव जी ने की। तब इसे 'श्री आदि ग्रंथ' कहा गया और इसका पहला 'प्रकाश उत्सव' 1 सितंबर, 1604 ई. में अमृतसर में श्री हरिमंदर साहिब में किया गया था। इसे गुरु का दर्जा श्री गुरु गोबिंद सिंह ने दिया और सिख श्रद्धालुओं से कहा,

सब सिखखन को हुक्म है, गुरु मानिऔ ग्रंथ  
गुरु ग्रंथ जी मानिऔ, प्रगट गुरां की देह  
जो परभ को मिल बोच है, खोज शब्द में लै।

अर्थात् श्री ग्रंथ साहिब को ही अपने 'गुरु' की देह समान समझ कर श्रद्धापूर्ण व्यवहार करना और उनके शब्दों की आज्ञा को शिरोधार्य मानना। जो भी प्रभु को पाना चाहे, उसे शब्दों द्वारा पा सकता है।

दसवें गुरु ने अपने पश्चात् देहधारी गुरु की परम्परा को समाप्त कर सिर्फ बाणी-रचना को ही 'गुरु' का दर्जा दे दिया। सिख धर्म की नींव रखने वाले श्री गुरु नानक देव ने बहुत पहले ही शब्द को गुरु के रुप में प्रगट कर कहा था :

'शब्दु गुर धीरा गहर गम्भीर  
बिन शब्दै जगु बउरानै।

*(श्री आदि ग्रंथ, पृ. 635)*

(एक बात यहाँ स्पष्ट कर दूँ कि गुरु ग्रंथ साहिब की साहित्यिक चर्चा करते समय इसे श्री आदि ग्रंथ ही कहा जाता है।)

शब्द ऐसी ध्वनि है जो अचूक और अविनाशी है। इसके खो जाने या विलीन हो जाने का कोई डर या भय नहीं है। यह शाश्वत् है। सृष्टि के आरम्भ से पहले भी ध्वनि थी और रहती दुनिया तक यह कायम रहेगी। शब्द के गुरु रूप की महिमा का यश तीसरे गुरु श्री अमरदास जी ने भी गाया है। उनके अनुसार :

'शब्द न जाणहि से अन्ने बोले  
से कितु आए संसार।

*(श्री आ.ग्रं. पृ. 601)*

श्री गुरु अमरदास जी ने 'श्री आनंद साहिब' की बाणी में मनुष्य की सम्पूर्ण रचना में गुरु के महत्त्व को बयान किया है। उनके अनुसार, सारे ब्रह्मांड का मूल स्रोत एक ही ज्योति या लौ है, जिससे मनुष्य नामक प्राणी की रचना हुई है। स्पष्ट है कि यहाँ गुरु का संकल्प देहधारी गुरु से नहीं है, परन्तु उस अर्थ में गुरु से जाकर जुड़ता है— जो हमें ज्ञान दे, हमारा मार्गदर्शन करता है :

तेग कवणु गुरु जिस का तू चेला

*(श्री आ.ग्रं. पृ. 942)*

सिख धर्म के अंतर्गत गुरु रूप में शब्द को ही मान्यता दी गई है, क्योंकि शब्द ही वह अनुभूति है, जो सुरति, मन, मत और बुद्धि से मुक्त होकर एक सर्वव्यापी अस्तित्व समान विस्तृत और सर्वमान्य हो सकती है :

गुर बिन मोख मुकति किऊ पाइयै  
बिनु गुर राम नाम किऊ ध्याइयै।  
गुर महि लेहु तरहु भव दुतरु  
मुकति भये सुख पाइया।

*(श्री आ.ग्रं. पृ. 1041)*

श्री गुरु अमरदास ने शब्द को ही 'नाम' का स्रोत माना है :

शब्दै ही नाऊ उपजै शब्दै मेल मिलाइया
बिन शब्दै सभ जगु बऊराना बिरथा जन्म गवाया
अमृत ऐकौ 'शब्द है नानक गुरमुखि पाइया।

*(श्री आ.ग्रं. पृ. 644)*

शब्द गुरु की महिमा इसलिए भी है, क्योंकि यह केवल देह से ही मुक्त नहीं; काल और स्थान-खंड से भी मुक्त है। मनुष्य द्वारा रची कोई भी रचना शब्द-गुरु समान विशाल और महान होने का दावा नहीं कर सकती। इसकी विशालता के कारण ही इसे किसी भी दायरे में न तो कैद किया जा सकता है और न ही कोई कब्जा किया जा सकता है। शब्द की ध्वनि में मनुष्य के अंतस् के गहरे तल को छूकर, झिंझोड़ कर, भाव-विभोर कर, अंततः भाव-मुक्त करने की शक्ति है। उस सर्वशक्तिमान अस्तित्व की महिमा का गायन शब्द के माध्यम से सिर्फ इसके काव्य या छंदमयी स्वरूप तक ही सीमित नहीं रहता। इसमें समाई गहराई के कारण, अपनी अनुगूँज द्वारा उस निराकार परमात्मा में अभेद होने तक की स्थिति तक जा पहुँचाता है। जिस कारण भक्तगण बार-बार इन शब्दों का 'पाठ' कर इसे दोहराते हैं और हर बार इसका गायन या उच्चारण कर, इसके नवीन अर्थों को ग्रहण करने योग्य बनते हैं।

गुरबाणी में शब्द को हीरे-रतन-सा जड़ाऊ कहा गया है, जिसके मन को यह रतन छू जाए, फिर वह प्राणी स्वयं ही प्रभु के चरणों में नतमस्तक हो जाता है। मनुष्य का जैसा स्वभाव है, उस लिहाज से प्रभु चरणों में नतमस्तक होना इतना सरल नहीं है। उसके लिए मनुष्य को अपनी सारी चिंता और विशेषकर दुविधा छोड़कर, पूर्ण विश्वास से अपने गुरु के प्रति समर्पित होने की आवश्यकता पहले है।

## रागमाला पर आधारित

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का अनोखापन इसमें भी है कि सारी बाणी रागमाला पर आधारित है। रागमाला का संबंध संगीत से है। सबसे पहले शब्द गायन की परम्परा श्री गुरु नानक देव ने चलाई। वे संगीत के जादूमयी प्रभाव से वाकिफ थे। संगीत व्यक्ति के अंतस् में उतर जाने की योग्यता रखता है। भारत में आरम्भ से संगीत का बोलबाला रहा है। इससे पहले संगीत को मनोरंजन और दिल बहलाने की वस्तु ही अधिक माना जाता रहा। राजा-महाराजा हों या आम जन-जीवन, संगीत को सूक्ष्म कला के रूप में देखा जाता रहा। राजाओं- महाराजाओं के दरबार में जहाँ गवैए शास्त्रीय गायन कर ईनाम-सम्मान पाते रहे, वहाँ आम जन-जीवन में संगीत राग-रंग और मनोरंजन का साधन बना, जिससे जीवन में आए बोझिलपन, उकताहट और थकावट को दूर किया जाता था। स्पष्ट है कि संगीत का संबंध सिर्फ शारीरिक स्तर पर था; परंतु श्री गुरु नानक देव ने पहली बार संगीत को प्रभु को पाने का माध्यम बनाकर, इसे रुहानियत से भर दिया। संगीत की स्वर-ध्वनि की अलौकिकता किसी को भी आत्मिक मार्ग का राही बना सकती है।

रागमाला शास्त्रीय संगीत पर आधारित होने के कारण इसमें सनातनी राग है, परंतु गुरबाणी का गायन जनमानस व लोक जीवन के अधिक निकट है। इसमें आलाप के ऊँचे सुर की बजाय सरल सीधे सुरों की प्रधानता है। इस कारण इसमें गायन के चमत्कारी पक्ष की अपेक्षा शब्द के भाव प्रमुख होते हैं। इस प्रकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल रागमाला शास्त्रीय और लोक मानस के सुमेल पर आधारित होने के कारण कीर्तन के माध्यम से अधिक प्रवाहित होती है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल सारी बाणी कुल 31 रागों पर आधारित है; सिरी राग, राग माझा, गऊड़ी, आसा, गुजरी, देवंगधारी, बिहारड़ा, वडहंस, सोरठ, धनासरी, जैतसरी, टोरी, बैराड़ी, तिलंग, सूही, बिलावल, गौंड, रामकली, नट नारायन, माली

गऊड़ा, मारु, तुखारी, केधरा, भैरों, बसंतु, सारंग, मलार, कानड़ा, कल्यान, प्रभाती और जैजावंती। इन 31 रागों के अलावा कई बार दो रागों का प्रयोग एक साथ भी किया गया हैं; जैसे— गऊड़ी माझ, आसा काफी, तिलंग काफी, सूही काफी, सूही ललित, बिलावल गौंड, मारु काफी, बसंत हिडोंल, कल्यान-भोपाली, प्रभाती बिभास और राग आसा में आसावरी।

> **श्री गुरु ग्रंथ साहिब में कुल 36 बाणीकार शामिल हैं। सिख गुरु साहिबान के साथ हिंदू और मुसलमान भक्त और संत कवि भी सम्मिलित हैं। वर्ण के लिहाज से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चारों वर्णों के रचनाकारों को एक समान दर्जा प्राप्त है। इसके अलावा हिंदुस्तान के विभिन्न इलाकों और क्षेत्रों में रहने वाले रचनाकार भी सम्मिलित हैं।**



श्री आदि ग्रंथ के आरम्भ में 'नितनेम' (नित्य नियम से रोजाना की जाने वाली बाणियाँ / पाठ) की बाणियाँ जैसे— जपुजी साहिब, सोदर, सोहिला और इसके अंत में भी प्रस्तुत रागमाला; राग मुक्त बाणियाँ हैं। श्री आदि ग्रंथ में राग मुक्त बाणियाँ इस प्रकार हैं— 'लोक सहसकती महला पहला, पाँचवा, गाथा 4, महला 5, चउबोले महला 5, लोक भक्त कबीर जी के, लोक शेख़ फ़रीद के, सवैये, श्री मुखवाक्य महला 5, सवैये भट्टों के, लोक वारां से अधिक, लोक महला 9, मुँदावणी महला 5 और रागमाला।

यह जानकारी भी उल्लेखनीय है कि श्री आदि ग्रंथ में शामिल 31 रागों में से गुरु नानक देव ने 19 रागों में, गुरु अमरदास ने 17 रागों में, गुरु रामदास और गुरु अर्जन देव ने 30-30 रागों में और गुरु तेग बहादुर ने 15 रागों में बाणी रचना की। इक्तीसवें राग जैजेवंती में सिर्फ गुरु तेग बहादुर जी ने ही रचना की। गुरु अंगद देव जी की बाणी रचना रागों में नहीं, लोकों में है। इसी प्रकार भक्तों में से कबीर और नामदेव जी ने 18 रागों में, रविदास जी ने 16 रागों में बाणी-रचना की, जबकि भक्त त्रिलोचन और बेणी जी की 3-3 रागों में और भक्त धन्ना, जैदेव और फरीद जी की बाणी-रचना दो-दो रागों में मिलती है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज रागों की स्वर लिपि का संकेत नहीं मिलता। इसमें आमतौर पर राग विशेष की बाणी का अलग सुर नज़र नहीं आता, परंतु कुछ राग ऐसे हैं, जिनमें से वडहंस, मारु, जैजावंती वैराग्यमयी हैं। आसा, सोरठ, धनासरी और बिलावल जैसे ज्यादातर खुशी का प्रभाव देते हैं। बसंत, खेड़ा, मलार और सारंग से वर्षा ऋतु का प्रभाव पड़ता है। राग गऊड़ी और राग गऊड़ी गुआरेरी, राग ऋतु और समय अनुसार गाए जाते हैं।

## संतों-भक्तों की बाणी

भारत आरम्भ से ही बहुजातीय और बहुभाषी देश रहा है। यहाँ अनेक जातियों, धर्मों, क्षेत्रों और भाषाओं के लोग अपनी-अपनी संस्कृति की विभिन्नताओं के साथ रहते हैं। इतनी विविधता के साथ ही परमात्मा की प्राप्ति के लिए अनेक धर्म, मार्ग और मत प्रचलित रहे हैं। अधिकतर बाणीकार एक-दूसरे से अलग-थलग और अजनबी ही रहे। इसका एक कारण भारतीय समाज का वर्ण-श्रेणी पर आधारित होना है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों ने मिलकर चौथे वर्ण शूद्रों का सदियों तक शोषण किया। अनेक जातियों और वर्ण-श्रेणियों में बँटे होने के कारण ही, अत्यधिक विस्तृत और विशाल देश भारत अपनी विशिष्ट एकात्मक पहचान नहीं बना पाया था। इस विविधता को एकात्मकता स्वरूप में ढालने का प्रयास श्री गुरु अर्जन देव जी ने किया और श्री आदि ग्रंथ का संपादन किया। जिसमें सारे भारत के विभिन्न संतों, भक्तों और भट्टों के बाणीकारों की रचना को सम्मिलित कर एक ऐसा ग्रंथ तैयार किया, जिसकी दूसरी कोई मिसाल नहीं मिलती।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में कुल 36 बाणीकार शामिल हैं। सिख गुरु साहिबान के साथ हिंदू और मुसलमान भक्त और संत कवि भी सम्मिलित हैं। वर्ण के लिहाज से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चारों वर्णों के रचनाकारों को एक समान दर्जा प्राप्त है। इसके अलावा हिंदुस्तान के विभिन्न इलाकों और क्षेत्रों में रहने वाले रचनाकार भी सम्मिलित हैं। अलग-अलग संस्कृतियों, मतों, सिद्धांतों, भाषाओं और जीवन-शैलियों की विभिन्नता ने इस ग्रंथ में समाहित होकर एक ऐसा पवित्र आकार ग्रहण कर लिया कि जो भी इसके आगे श्रद्धा से शीश झुकाते हैं, वे सभी रचनाकारों के आगे नतमस्तक होते हैं। रोजाना गुरु ग्रंथ साहिब का 'प्रकाश' कर शब्द-रूप में जो 'हुक्म' लिया जाता है, वो किसी की भी बाणी से हो सकता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में निम्न भक्त और भट्ट शामिल हैं :

1. भक्त कबीर— जुलाहा, उत्तर प्रदेश
2. सूफी फरीद— सैयद मुसलमान, पंजाब
3. भक्त नामदेव— छींबा, महाराष्ट्र
4. भक्त रविदास— चमार, उत्तर प्रदेश
5. भक्त त्रिलोचन— ब्राह्मण, महाराष्ट्र
6. भक्त बेणी— ब्राह्मण, बिहार
7. भक्त धन्ना— जाट, राजस्थान
8. भक्त जैदेव— ब्राह्मण, बंगाल
9. भक्त सैण— नाई, रीवा
10. भक्त भीखन— मुसलमान, उत्तर प्रदेश
11. भक्त पीपा— ब्राह्मण, गुजरात
12. भक्त सधना— कसाई, सिंध
13. भक्त रामानंद— ब्राह्मण, महाराष्ट्र
14. भक्त परमानंद— ब्राह्मण, महाराष्ट्र
15. भक्त सूरदास— ब्राह्मण, अवध

भक्तों के अलावा 4 गुरु सिखों की बाणी भी इसमें शामिल है :

1. भाई मरदाना जी– मिरासी, पंजाब
2. भाई सुन्दर जी– क्षत्रिय, पंजाब
3. भाई सत्ता जी– रुम, पंजाब
4. भाई बलवंड राय जी– पंजाब

इसके अलावा 11 भट्टों के 123 सवैये भी गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल हैं :

भट्ट कल्पहार, भट्ट जालप, भट्ट कीरत, भट्ट भीखा, भट्ट सल्ल, भट्ट भल्ल, भट्ट नल्ल, भट्ट गसंद, भट्ट मथरा, भट्ट बल्ल, भट्ट हरबंस।

सभी भक्तों और भट्टों की रचना का आध्यात्मिक पक्ष सिख गुरु साहिबान के समान परमात्मा के निराकार स्वरूप में विश्वास करना हैं। निराकार स्वरूप से अर्थ है, परमात्मा का कोई भी रंग, रूप और प्रतीक व आकार नहीं है। उसका कोई मजहब, धर्म और वर्ग नहीं हैं। सारे ब्रह्मांड को गतिमान रखने वाली एक ही सत्ता है, जो सर्वव्यापी और सर्वशक्तिमान है। गुरु अर्जन देव ने इसके माध्यम से परस्पर भेद और उनसे पैदा होने वाले तनाव को समाप्त कर परमात्मा के आध्यात्मिक स्वरूप को दार्शनिक आधार प्रदान किया और मानव समाज को ऐसी सोच, शैली और प्रणाली प्रदान की जिसे आसानी से व्यवहार में अपनाया जा सकता है।

> "कबीर कोठी काठ की,
> दहिदिस लागी आगि
>
> पंडित पंडित जल मुए,
> मूर्ख उबरे भागि।"

## सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थितियों का चित्रण

अद्वितीय धार्मिक ग्रंथ होने के साथ-साथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मध्यकालीन भारत के तात्कालिक सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थितियों के स्वरों को भी आसानी से पहचाना जा सकता है, जिसकी चर्चा गुरु साहिबान के साथ संतों-भक्तों ने भी अपनी रचनाओं में की है।

श्री गुरु नानक देव के समय इस्लाम का प्रादुर्भाव होने से भारत में एक नया सांस्कृतिक आयाम उभरने लगा, जिस कारण आर्य सभ्यता और इस्लामी सभ्यता में टकराव की स्थिति पैदा हो गई। गुरु नानक ने वर्णकालीन समाज में मानवीय संवेदनाओं में एक नई चेतना फूँक दी। सभी ने ब्राह्मणवादी कर्मकांडों, जाति व्यवस्था और साम्प्रदायिक कट्टरता का विरोध किया और 'प्रेम भक्ति' की राह पर चलने का मार्गदर्शन कर जात-पात और भेदभाव को भुलाकर मानवीय मूल्यों का जोरदार समर्थन किया। गुरु नानक देव ने सामाजिक स्तर पर श्रेणीगत आधार पर होने वाले शोषण के लिए सामंती वर्ग के साथ राजा को इस लूट-खसोट में शामिल मानकर इसके विरोध में आवाज़ उठाई :

राजे सींह, मुकद्दम कुत्ते
जायि जगाइन बैठे सुत्ते
चाकर नर दा पाइन घाऔ
रतु पितु कुति है चटि जाहु।

*(आसा दी वार)*

उन्होंने न्याय करने वाले काजी वर्ग को भी नहीं बख्शा :

काज़ी होय कै बहै निआई
फेरे तसबी, करे खुदायि
वढ़ी लै के हक् गवायि
जे को पुछै तो पढ़ सुणाये।

*(आसा दी वार)*

गुरु नानक देव ने जागीरदारी युग को 'मायाधारी' कहा और 'अति अन्ना बोला' (जो पूर्णतः अंधा और बहरा हो) कहा। बनिया जो कुछ रकम उधार देकर किसी गरीब की जमीन गिरवी रख लेता है और दिखावे के लिए 'बही खाता लेकर' बैठ जाता है। लूट-खसोट के इस सारे पासार को गुरु नानक ने 'कूड़े कूड़ियायि' (कूड़ा-करकट का धंधा) कहा।

आर्थिक असंतुलन का प्रभाव अन्य सभी स्तरों और क्षेत्रों पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। ब्राह्मण धार्मिक रूप से जबर करता, शूद्रों के लिए वेद-पाठ सुनने की भी मनाही थी। उन्हें मंदिरों से मारकर भगा दिया जाता था। कर्मकांड के इन पाखंडियों को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जी भरकर कोसा गया है :

जो तू ब्राह्मण ब्रह्माणी जाया
तऊ आन घाट काहे नहीं आया।

*(कबीर)*

कबीर का कहना है कि यदि ब्राह्मण ऊँची जात का है तो उसने अन्य लोगों की तरह माता के उदर से जन्म क्यों लिया? उन्हें सीधा आसमान से टपकना चाहिए था। ब्राह्मण अपने खोखले ज्ञान के अभिमान में ही खत्म हो जाएँगे और ये मूर्ख और शूद्र ही अंत में मानव जीवन का लक्ष्य प्राप्त करेंगे :

कबीर कोठी काठ की, दहिदिस लागी आगि
पंडित पंडित जल मुए, मूर्ख उबरे भागि।

*(कबीर)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में राजनीतिक चेतना में झाँकने का अवसर भी मिलता है। गुरु नानक देव ने बाबर के आक्रमण को 'पाप की बारात' कहा। 'बाबरवाणी' में उस आक्रमण से हुई बर्बादी के जिक्र से

इस संकटमयी स्थिति के कारणों पर भी गुरु जी ने रोशनी डाली है :

नऊ सत चऊदह तीनि चारि
करि महलति चारि बहाली
चारे दीवे चहु हथि दीये
ऐका ऐका वारी।

*(आदि ग्रंथ, पृ. 1190)*

**श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज बाणी का फलक अत्यंत विस्तृत है। यह व्यक्ति को सजग ढंग से प्रभु-नाम से जोड़ती है। यह सजगता ही सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों का विश्लेषण करने की चेतना प्रदान करती है।**

इस प्रकार गुरु नानक मुग़ल संस्कृति के प्रवेश से हिंदू परम्परा में हुई उथल-पुथल को बहुत खूबसूरती से प्रस्तुत करते हैं। हिंदू संस्कृति की अधोगति, मुग़लों की सत्ता प्राप्ति और गुरसिखों द्वारा परमात्मा के 'नाम' (जाप) को महत्त्व देने वाली परिस्थिति को एक साथ समेटते हुए उन्होंने भारतीयों के अवचेतन को झिंझोड़ने का प्रयास किया। तत्कालीन स्थिति की अत्यंत गिरती अवस्था को उन्होंने कुछ इस प्रकार पेश किया :

कालु नाहीं जोगु नाहीं
नाहीं सत का ढ़ब। *(श्री गुरु नानक)*

प्रशासन के सुचारु न रहने से धर्म-कर्म की पवित्रता नष्ट हो गई है और व्यक्तियों का भी कोई चरित्र नहीं रहा।

इस गिरती अवस्था को दूर करने के लिए उन्होंने सति (सत्य) का एक मार्ग प्रस्तुत किया, जिसमें सांसारिक सत्ताधारी को 'कूड़ा' कहकर एक ही परमात्मा की सत्ता को सर्वशक्तिमान माना और सभी की रक्षा करने वाले उस परमात्मा को ही 'सच्चा पातशाह' कहा। हक, (अधिकार), सति (सत्य) और न्याय का पालन करने वाली व्यवस्था को ही आदर्श राजसत्ता कहा। गुरु ग्रंथ साहिब में राजनीतिक चेतना के कई उदाहरण देखे जा सकते हैं। सारी व्यवस्था व्यक्ति पर प्रभाव डालती है और व्यक्ति प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से इस संकटमयी स्थिति में फँस जाता है। इन सारी समस्याओं का निराकरण तभी सम्भव हो सकता है, जब व्यक्ति परमात्मा की शरण में आ जाए।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज बाणी का फलक अत्यंत विस्तृत है। यह व्यक्ति को सजग ढंग से प्रभु-नाम से जोड़ती है। यह सजगता ही सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों का विश्लेषण करने की चेतना प्रदान करती है। जागरूक होने के पश्चात् यह बात किसी भी व्यक्ति को आसानी से समझ में आ सकती है कि खोखले धर्मकांडों को अपनाने से समय और ऊर्जा नष्ट होती है। 'किरत करने' (कर्म) से उसका सदुपयोग किया जा सकता है। सामंतवादी या अन्य किसी भी शासन व्यवस्था के मुकाबले मानव हितकारी प्रशासन में आदर्श न्यायशील व्यवस्था का होना अति आवश्यक है। व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में भी मनुष्य को सदाचारी मूल्यों को अपनाना चाहिए। इनके प्रभाव से ही व्यवस्था और सोच में संतुलन सम्भव होगा। इस प्रकार गुरबाणी मनुष्य को अपने अधिकारों के प्रति सजग और चेतन कर, उसी जीवंतता से ब्रह्मांड से एकात्म होने के लिए अंतर्प्रेरित करती है।

## विद्रोही सुर

गुरु साहिबान और संतों-भक्तों के साझेपन और एक सुर की बाणी में विद्रोही सुर की बात कुछ अचम्भित प्रतीत होती है। हम सभी जानते हैं कि विद्रोह का संबंध अन्याय के विरोध से संबंध रखता है। यह सुर अन्यायपूर्ण परिस्थितियों से पैदा होता है, जो निजी स्तर के स्थान पर देश की प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रति अपना विरोध प्रकट करता है। इस विद्रोही सुर का आधार निजी स्तर की सजगता होती है, जो राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक कारणों की ओर संकेत करती है। जब सामाजिक और आर्थिक ढाँचा इतना त्रुटिपूर्ण हो जाए कि उस जंग खाई व्यवस्था को बदलकर एक संतुलित व्यवस्था को लाना अति आवश्यक महसूस होने लगे। गुरु ग्रंथ साहिब में श्री गुरु नानक, कबीर, त्रिलोचन, बेणी, नामदेव और रविदास जैसे अनेक संतों की बाणी में ऐसे ही विद्रोही सुर देखने को मिलते हैं, जो मानव हितों की रक्षा के लिए उठाए गए। हमारे देश में सदा से केंद्रीय शासन व्यवस्था स्थापित होने के बावजूद छोटी-बड़ी रियासतों द्वारा बगावतें होती रहीं। हिंदू और इस्लाम दोनों प्रमुख धर्म हमेशा से अपने-अपने धार्मिक सर्वश्रेष्ठता के अहं भाव से जकड़े रहे। ऐसे में आम लोगों का मार्गदर्शन करने में वे असमर्थ रहे। ऐसे हालात को देखते हुए संत नामदेव ने हिंदू और तुर्क दोनों को शीश दिखाने का साहस किया और कहा :

हिंदू अन्ना तुर्कू काणा
दोहां ते ज्ञानी सयाणा
हिंदू पूजे देहुरा मुसलमाणु मसीति
नामे सोयी सेविआ जह देहुरा न मसीति।

*(आदि ग्रं. पृ. 875)*

जात-पात में बँटे समाज में नीची जाति पर होने वाले अत्याचारों का गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल सभी बाणीकारों ने खुलकर विरोध किया। उन्होंने उस समय के स्थापित ब्राह्मणवाद के अंधविश्वासों से भरे विचारों की असलियत दिखाने के लिए ऐसे स्वर उठाए, ताकि लोग अपने युग का चेहरा स्वयं पहचान सकें। सभी ने मनुष्य को अपनी जीवटता पर भरोसा करना सिखाया। उनके विद्रोही स्वर के कारण ही पिछड़ी जाति के लोगों में आत्मविश्वास जागा और वे अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ सके। किसी के हृदय में भी प्रभु-नाम का वास हो सकता है। परमात्मा भक्त की जात-पात नहीं देखता :

कबीर जाति जुलाहा किआ करै
हिरदै बसै गुपाल।

*(आदि ग्रं. पृ. 329)*

कबीर ने ब्राह्मणों द्वारा किए जाने वाले जबर और शोषण पर सख्त शब्दों से चोट करते हुए कहा :

जो तू ब्राह्मण ब्रह्माणी जाया
तऊ आन घाट काहे नहीं आया।

*(आदि ग्रं. पृ. 324)*

गुरु नानक देव ने राजसत्ता और जन-समूह के मध्य तनाव देखा, क्योंकि यह आपसी रिश्ता शोषक और शोषित का था। धार्मिक स्तर पर भी दोनों वर्गों में कोई तालमेल नहीं था, क्योंकि बादशाह मुसलमान था और प्रजा हिंदू थी। बाबर के आक्रमण का उन्होंने डटकर विरोध किया और कहा :

समाज में फैली आर्थिक असमानता के प्रति विरोध प्रगट करते हुए बाबा फरीद ने भी कहा है :
**फरीदा इकना आटा अगला, इकना नाहीं लोणु**
**अगै गये सिंझापसनि, चोटां खासी कऊणु**

पाप की जंझ लै काबलहु आया
जोरी मंगै दानु वे लालो।

*(आदि ग्रं. पृ. 722)*

वर्ण व्यवस्था के स्थान पर उन्होंने यह विचार दिया :

ऐक पिता ऐकस के हम बारिक।

जात-पात को कोई अहमियत न देकर कहा :

जाति जन्म नह पूछीयै, सच घरु लेहु बतायि
सा जाति सा पति है, जेहे करम कमायि।

*(आदि ग्रं. पृ. 1330)*

सभी बाणीकारों के विद्रोही सुर का कारण भेदभाव और असंतुलन भरे इस समाज को सदाचारी, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों से सरोबार कर जीवन योग्य बनाना रहा। इसका उद्देश्य ऐसे मनुष्य का निर्माण करना रहा, जो सभी प्रकार के बंधनों से मुक्त हो। भयमुक्त व्यक्ति ही सच्चा और आदर्श हो सकता है :

भै काहू को देत नहिं,
नहिं भै मानत आन (श्री गुरु तेग बहादुर)

बाणीकारों ने ऐसी मानसिकता विकसित करने का यत्न किया कि कोई भी मनुष्य निडर होकर अपने समय की परिस्थितियों का डटकर मुकाबला करने योग्य बने। समाज की जो नीतियाँ और मापदंड असंतुलित होकर डराएँ, उनका सख्त शब्दों में विरोध करने का साहस मनुष्य में पैदा हो।

समाज में फैली आर्थिक असमानता के प्रति विरोध प्रगट करते हुए बाबा फरीद ने भी कहा है :

फरीदा इकना आटा अगला, इकना नाहीं लोणु
अगै गये सिंझापसनि, चोटां खासी कऊणु

*(आदि ग्रं. पृ. 1380)*

असमानता और अन्याय के खिलाफ विरोध का स्वर उठाने का तात्पर्य यही है कि इसके माध्यम से समाज में फैले अहं भाव से मुक्त मनुष्य और समाज का निर्माण हो। जिसके लिए अति आवश्यक है कि मनुष्य अपने हाथों से कर्म करे और सेवाभाव को प्रभु प्राप्ति का मार्ग समझे।

## मुक्ति होने या मोक्ष-प्राप्ति का मार्ग

स्वतंत्रता मनुष्य को जन्म के साथ ही प्राप्त हो जाती है, मगर संसार उसे जल्दी ही अपने बंधनों में जकड़ लेता है, जिस कारण मनुष्य आंतरिक व बाहरी स्वतंत्रता को खोकर गुलाम हो जाता है। आंतरिक गुलामी से तात्पर्य संस्कारों, काल्पनिक डर और मिथकीय परम्पराओं से हैं, जिसका आधार निजी अज्ञान होता है। जबकि बाहरी तौर पर सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक दबाव से भय बना रहता है। अज्ञानता से उत्पन्न मनुष्य की अंदरूनी कमजोरियाँ और बाहरी दबाव उसे पूर्ण रूप से गुलाम बना देते हैं। गुलामी की यह प्रक्रिया मनुष्य के जन्म से आरम्भ होकर अंत समय तक जारी रहती है। इस कारण यह आवश्यक भी था कि मनुष्य को इन सभी जंजीरों से मुक्त किया जाए।

मुक्ति से अर्थ छुटकारा पाने की अवस्था से है। वैसे मुक्ति होने से तात्पर्य मोक्ष-प्राप्ति से भी है।

मुक्ति कोई सिद्धांत नहीं, अवस्था है। यह दुख रहित अवस्था का नाम है, जिसमें किसी भी प्रकार का शारीरिक, मानसिक और आत्मिक बंधन नहीं होता। यह बंधन-रहित अवस्था है। गुरु साहिबान का विचार है कि स्वतंत्रता मनुष्य का जन्म-सिद्ध अधिकार है। जन्म-सिद्ध से भाव है कि परमात्मा के राज्य में मनुष्य स्वतंत्र रहता है, जबकि मनुष्यों के राज्य में ही उसकी गुलामी का दौर आरम्भ होता है। इसी कारण गुरु ग्रंथ साहिब के बाणीकार मुक्ति-मार्ग पर बल देते हैं। उनका उद्देश्य है सांसारिक जीवन में सत्ता के अधीन रहते हुए कोई भी मनुष्य इन बंधनों से मुक्त होकर अपना आध्यात्मिक उद्धार कर सके। यह सर्वविदित है कि परतंत्र मनुष्य की सोच भी अधूरी रहती है, जिस कारण उसमें जल्दी साझेपन और समानता का भाव पैदा नहीं हो सकता।

गुरबाणी में मुक्ति के संकल्प के बारे में कहा गया है :

मुक्ति पाइयै साध संगत
बिनस जायै अंधार
नानक संत भावै ता
उस का भी होयै मोख।

बाणी गुरमुख पद्धति अवश्य है, परन्तु यह कोई सीधा उपदेश नहीं देती। सभी बाणीकार प्रभु-सिमरन पर बल देते हैं।

हिन्दू धर्म में मुक्ति या मोक्ष एक आदर्श है, जबकि गुरमति (गुरबाणी) में मुक्ति को एक जीवन-प्रक्रिया माना गया है। भारतीय दर्शन में संसार को दुखों का घर मानकर इससे मुक्ति की चाह की

जाती रही। घर-गृहस्थी, समाज से दूर किसी एकांत में जंगलों, वनों, पहाड़ों और गुफ़ाओं में बैठ, तपस्या कर इस सांसारिक मोह और दुखों से मुक्त होने का यत्न किया जाता था। जबकि गुरबाणी घर-गृहस्थी और समाज को त्यागकर, एकांत में बैठने की बजाय सभी सांसारिक जिम्मेवारियों को निभाते हुए, इसके बंधनों से मुक्त होने की प्रेरणा देती है। इस जीवन-प्रक्रिया को अपनाकर सहजता से मुक्त हो सकते हैं।

इस मुक्ति मार्ग पर चलते हुए बाणीकार प्रभु-सिमरन और साध-संगति को अपनाने पर ही जोर देते हैं। प्रभु-मिलन के लिए


**"सर्व समानता का यह संकल्प गुरु ग्रंथ साहिब के माध्यम से भली-भाँति स्पष्ट होता है। गुरु अर्जन देव ने इस ग्रंथ का संपादन इस प्रकार से किया है कि 'पाठ' करते समय कोई भी गुरबाणी से भक्त बाणी और भक्त बाणी से गुरबाणी में दाखिल हो जाता है।"**


किसी विशेष विधि-विधान की आवश्यकता नहीं, क्योंकि प्रभु का सुमिरन किसी भी समय, कहीं पर भी, किसी भी रूप में किया जा सकता हैं। इसके लिए सिर्फ अभ्यास की आवश्यकता होती है :

जिस अंतरि प्रीति लागै सो मुक्त
इन्द्री वसि सच संजमि जुगता।

## सर्व समानता का प्रतीक

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की प्रमुख विशेषता सर्व समानता (सरब साझीवालता) है। यह ग्रंथ बारहवीं सदी से लेकर सत्रहवीं सदी तक के अलग-अलग प्रांतों, जातियों, धर्मों और बोलियों-भाषाओं का ऐसा मिला-जुला रूप है, जिसका प्रमुख आधार निराकार प्रभु की आराधना से ओत-प्रोत हैं। गुरु साहिबान, संतों-भक्तों और भट्टों समेत सभी अलग-अलग समय, क्षेत्रों, मतों से संबंधित रहे, परंतु उन सभी की विचारधारा का केंद्र एक ही रहा। गुरबाणी मनुष्य, प्रभु, प्रकृति, संसार और समाज के आपसी संबंधों को बयान कर समूचे संसार को एक ही शृंखला में जोड़ती है। सारी सृष्टि को प्रकृति के कर्त्ता का स्वरूप कहा गया है :

इह जगु सचै की है कोठड़ी
सचै का विचि वासु।

*(आदि ग्रं. पृ. 493)*

विश्व की सारी विविधता ईश्वर की एकता से प्रगट होती है। एक ही परम ज्योति सभी जीवों में निवास करती है। ये एक से अनेक में और अनेक से एक की ओर लौटती है। इस प्रकार इस ग्रंथ की संरचना और संपादना का मौलिक आधार ही सर्व समानता है। तभी यह सांप्रदायिकता से पार जाकर सम्पूर्ण मानवता और भाईचारे का संदेश देता है। इस ग्रंथ की मौलिकता से यह स्पष्ट होता है कि प्रभु के असली भक्त सिर्फ एक ही सत्ता में यकीन रखते हैं, फिर भले वे किसी भी धर्म के क्यों न हों।

असाम्प्रदायिकता गुरु घर की परम्परा रही है। गुरु नानक देव ने लंगर की परम्परा चलाकर इस रीति का आरम्भ किया। गुरु घर में प्रत्येक व्यक्ति के लिए स्थान है। कोई भी गुरुद्वारे में आकर, बिना किसी भेदभाव के संगत में भी शामिल हो सकता है और सभी के साथ बैठकर लंगर खाने (छकने) का हक़दार भी होता है। श्री गुरु अर्जन देव ने इसी साझेपन को एक ग्रंथ में समाहित कर दिया।

जिस समय गुरु नानक देव का आगमन हुआ, उस समय उत्तरी भारत में बुद्ध मत का सफाया हो गया और ब्राह्मणवाद फिर से उभरने लगा था। सिख धर्म कर्मकांडों और अंधविश्वासों के दिखावटी और खोखलेपन के विरोध में उठा। श्री गुरु ग्रंथ साहिब इस विद्रोही लहर की सैद्धांतिक आधारशिला है। इस सिद्धांत में यकीन रखने वाले अपने आप को एक संगठन में बाँधकर, समाज की प्रमुख भेदभाव की नीति में परिवर्तन लाने के लिए कर्मबद्ध थे। इस परिवर्तन का मुख्य आधार सभी धर्मों, वर्ण-व्यवस्था, धार्मिक कर्मकांडों की दीवारें हटाकर मनुष्यों के लिए एक समान और स्वतंत्र समाज का निर्माण करना था।

गुरु ग्रंथ साहिब की रचना किसी भी विशेष धर्म या व्यक्ति को अहमियत न देकर जन-साधारण से जुड़ी हुई है। आम जन को सदा ही किसी के नेतृत्व या मार्गदर्शन की आवश्यकता महसूस होती रही है। यह आवश्यकता आम तौर पर कोई-न-कोई धार्मिक लीडर द्वारा ही पूरी होती रही, परंतु धीरे-धीरे इस राहनुमाई में गिरावट आने लगी। इसे परिवर्तित करने के लिए गुरु साहिबान ने साध-संगति का संकल्प दिया। ब्राह्मणवाद में निजता पर बल दिया गया है। सिख धर्म में अपने साथ समाज के दूसरों लोगों को साथ लेकर प्रभु मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी गई है। साध-संगति से आपसी दूरी और परायेपन का एहसास समाप्त होता है। सारी संगत एक इकाई के रूप में बैठी दिखाई देती है। साध-संगति के बिना गुरु के उपदेश को जीवन में नहीं उतारा जा सकता। गुरबाणी में कहा गया है :

होयि इकत्रि मिलहु मेरे भाई
दुबिधा दूरि करहु लिव लायि।

*(आदि ग्रं. पृ. 1185)*

सर्व समानता का यह संकल्प गुरु ग्रंथ साहिब के माध्यम से भली-भाँति स्पष्ट होता है। गुरु अर्जन देव ने इस ग्रंथ का संपादन इस प्रकार से किया है कि 'पाठ' करते समय कोई भी गुरबाणी से भक्त बाणी और भक्त बाणी से गुरबाणी में दाखिल हो जाता है।

ऐसी अखंडता और अभेदता अपने आप में बेजोड़ है। सारी बाणी का एक जैसा आदर-सत्कार होता है। सिख धर्म में प्रत्येक प्रार्थना (अरदास) 'सरबत के भले' अर्थात् सारे संसार की भलाई पर समाप्त होती है। इससे विश्व-बंधुत्व का एहसास होता है :

नानक नाम चढ़दी कलां
तेरे भाणे सरबत दा भला।

# बहुत दिनों के बाद

बहुत दिनों के बाद
जब झाँककर देखा
खिड़की से
तो नज़र आया
कि पड़ोसी का
बोगेनबेलिया
दीवारें फाँदकर
हमारी मधुमालती से
आँखें चार करता है

बहुत दिनों के बाद
बाड़ के पार देखा तो
पाया कि
चौकीदार के
पाले हुए पिल्ले
अब नहीं नज़र आते
अपनी माँ के साथ घूमते
जरूर बड़े हो गए हैं

बहुत दिनों के बाद
बालकनी के कोने में
देखा तो नज़र आया कि
मिट्टी के खाली
सकोरों के पास
बैठी चिड़िया
उदास है

बहुत दिनों के बाद
छत पर से
चाँद कुछ पास नज़र आया
तब याद आया कि
छोटे से हमारे
घर की छत
अब बदल गई है
बहुमंजिला इमारत में

बहुत दिनों के बाद
आज किसी ने
दरवाजा खटखटाया
खोला तो
डाकिए को पाया
तब याद आया
हम भले ही
भूल जाएँ रिश्ते
पर डाकिए
नहीं भूला करते
घर के पते

●●●


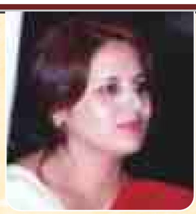

## अंजनी शर्मा

**शिक्षा :** एम.ए. समाजशास्त्र, संस्कृत

**प्रकाशित कृतियाँ :** रावण, बापू का हरिजन प्रेम, शिप्रा के किनारे

**सम्मान पुरस्कार :** ● भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् द्वारा अंतरराष्ट्रीय मौलाना आजाद पुरस्कार वर्ष 2002. ● भारत सरकार के मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा नवसाक्षर लेखन के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार वर्ष 2008. ● साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश द्वारा ज़हूर बख्श बाल साहित्य पुरस्कार वर्ष 2010.

**संपर्क :** meenaksheeswami@gmail.com


# माँ

ज्यों ही खटखटाता है
कोई दरवाजा
या होती है
किसी के आने की
आहट
माँ अब भी
झट से
पल्ला खींचकर
ढक लेती है
अपना सिर
कि आ रहा होगा कोई
परिवार का बड़ा बुजुर्ग
नहीं जाती है
माँ की
यह पुरानी आदत
झीनी साड़ी से
झाँकते हैं अब
माँ के सफेद बाल
माँ भूल गई हैं
कि अब परिवार में
नहीं रहा
उनसे कोई बड़ा बुजुर्ग

●●●

# कुंडलियाँ

(एक)
पावन धरणी राम की, जिसपे सबको नाज
घूम रहे पापी कई, भेष बदलकर आज
भेष बदलकर आज, नार को छेड़ें सारे
श्वेत रंग पोशाक, कर्म करते हैं कारे
नाम भजो श्री राम, नाम है अति मनभावन
होगा सकल निदान, राम की धरणी पावन।

(दो)
मानव सारे लीन हैं, राम लला की लूट
भक्ति भाव के प्रेम में, शबरी को भी छूट
शबरी को भी छूट, बेर भी झूठे खाए
दुःख का किया विनाश, हृदय में राम समाए
रघुपति हैं आदर्श, भक्त हैं प्रभु को प्यारे
राम कथा गुणगान, करें ये मानव सारे

(तीन)
रघुपति जन्मे भूमि पे, खास ये त्यौहार
राम कथा को फिर मिला, वेदों में विस्तार
वेदों में विस्तार, राम की लीला न्यारी
कहते वेद पुरान, नदी की महिमा भारी
निर्गुण सगुन समान, प्रजा के प्यारे दलपति
श्री हरि के अवतार, भूमि पर जन्मे रघुपति

(चार)
सारे वैभव त्याग के, राम गए वनवास
सीता माता ने कहा, देव धर्म ही ख़ास
देव धर्म ही ख़ास, नहीं सीता-सी नारी
मिला राम का साथ, सिया थी जनक दुलारी
कलयुग के तो राम, जनक को नहीं सहारे
होवे धन का मान, अधर्मी हो गए सारे

(पाँच)
आओ राजा राम फिर, दिल की यही पुकार
आज देश में बढ़ गई, लिंग भेद की मार
लिंग भेद की मार, दिलों में रावण जागा
कलयुग में तो आज, नार को कहे अभागा
अनाचार की मार, राज्य फिर अपना लाओ
रावण जाए हार, राम फिर वापिस आओ

(छह)
नारी ने ही रच दिया, अपना घर संसार
सुख दुख अपना भूल कर, खोले मन के द्वार
खोले मन के द्वार, लिखे खुशियों की पाती
चाहे दिन हो रात, गीत मंगल के गाती
माँ आँगन की धूप, करे ममता बलिहारी
गुणवंती, धनवान, जगत जननी है नारी।

(सात)
सीना चौड़ा कर रहे, वीर देश की शान
हर दिल चाहे वर्ग से, करिए इनका मान
करिए इनका मान, हमें धरती माँ प्यारी
बैरी जाए हार, यह जननी है हमारी
दिल में जोश उमंग, देश की खातिर जीना
युवा देश की शान, कर रहे चौड़ा सीना।

**शशि पुरवार**

स्नातकोत्तर उपाधि-एम.ए. (राजनीति शास्त्र)। भाषा ज्ञान- हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी।

प्रतिष्ठित समाचार-पत्र और पत्रिकाओं व साहित्यिक पत्रिकाओं में रचनाएँ, आलेख, व्यंग्य, गीत, गज़ल, लेख, लघुकथा, कविता का सतत् प्रकाशन होता रहता है। कई साझा संकलनों में शामिल है। अंतर्जाल की कई पत्रिकाओं में नियमित प्रकाशन।

अनहद कृति काव्य प्रतिष्ठा सम्मान, राष्ट्रभाषा सेवी सम्मान अकोला, मिनिस्ट्री ऑफ़ वूमेन एंड चाइल्ड डेवलपमेंट द्वारा भारत की 100 महिला अचीवर्स का सम्मान 2016।

संपर्क :

shashipurwar@gmail.com

# भूटान यात्रा

"ले चल मुझे भुलावा देकर मेरे नाविक धीरे-धीरे"– प्रसाद की यह कविता भीतर से निकलने का नाम ही नहीं ले रही– यूँ भुलावों के अंदाज भी ज़िंदगी में बदलते रहते हैं। कॉलेज के अपने अध्यापन के कार्यकाल में कुछ भी सोचने का समय ही नहीं था। अब कहने को तो हम अवकाश प्राप्त हैं पर देह की अपनी सीमाओं में बँधा मन कहीं यात्रा पर निकलने की ठान लेता है तो सच मायने में 'अभी ज़िंदा हैं और गतिशील हैं' का अहसास और आश्वस्ति मिलती है।


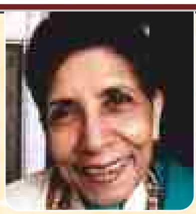

**मीरा सीकरी**

**जन्म :** 1941, गुजराँवाला (अविभाजित भारत)

**शिक्षा :** दिल्ली विश्वविद्यालय के इन्द्रप्रस्थ कॉलेज से 1962 में हिन्दी साहित्य में परास्नातक। 1972 में 'नई कहानी' शोध-प्रबंध।

**प्रमुख कृतियाँ :** अनकही, बलात्कार तथा अन्य कहानियाँ, तप्त समाधि तथा अन्य कहानियाँ, संकलित कहानियाँ, विसर्जन तथा अन्य कहानियाँ। ग़लती कहाँ, अनुपस्थित (उपन्यास)। एक रंग होता है नीला (यात्रा वृत्तांत)।

**संपर्क :** sikrimeera@gmail.com


भारत से इतर सार्क देश अपनी तरफ खींच रहे थे– नेपाल जा चुके थे– अब आकर्षित कर रहा था भूटान, सम्भवतः अपने प्राकृतिक सौंदर्य और विशिष्ट चरित्र के कारण। बुकिंग हो चुकी थी, पर भूटान के तापमान को जान मन कुछ-कुछ डरा हुआ-सा था– बड़ी मुश्किल से तो दिल्ली की सर्दी से छुटकारा पाया था– बहरहाल जाना तो था ही।

बागडोगरा हवाई जहाज से पहुँचे– बॉर्डर तक चार-पाँच घंटे की यात्रा सड़क से तय करनी थी– हवाई जहाज से यात्रा करने वाले नौ जन थे, किन्तु यात्रा प्रबंधक ने जिस वैन का प्रबंध किया हुआ था उसमें केवल आठ जन सुविधा से बैठ सकते थे– यात्री सभी वरिष्ठ जन प्रबंधक की बेटी को छोड़कर– घुटनों के दर्द आदि के शिकार– अपरिचयजन्य शिष्टता का मुखौटा उतार शिकायती रें-रें करते अपने लिए अगली पाँच सीटें घेर चुके थे– शेष रह गई थी हम तीन महिलाएँ प्रबंधक की बेटी के साथ पिछली सीट पर सटसटा कर बैठने के लिए।

अभी पिछले वर्ष ही तो इन्हीं सड़कों से सिक्किम-दार्जिलिंग गए थे– हरी-भरी पर्वतीय शृंखलाओं की गहरी खाइयों में दूध की धारा-सी बहती तिस्ता को देख संकीर्णता उदारता में डूब जाती है। उत्तराखंड में भी तो ऐसे ही रास्तों से जाना होता है– इस बार ये रास्ते बिल्कुल नए देश से मिलवाएँगे। पर मन भी कैसा अजीब है, रास्ते की खूबसूरती में रमने की जगह बेचैन हो रहा था कि कहीं खुली-सी जगह आराम करने को मिले– शायद इसका कारण था सुबह बहुत जल्दी उठ जाना– इस पर एक और बाधा आ खड़ी हुई– ममता बैनर्जी की गाड़ी निकलने की वजह से यातायात रोक दिया गया था– 'समय का अपव्यय'। ऐसे में जब चाय-पान के लिए गाड़ी रुकी तो लगा 'कुछ देर के लिए ही सही, कैद से तो छूटे'।

ताजादम हो जब गाड़ी में बैठे, तो मन में दो सवाल थे– "हम बॉर्डर कब पहुँचेंगे?"– इसके जवाब में ड्राइवर हर बार कह देता था– "बस एक घंटे में"– यह घंटा रात फूँट शैलिंग पहुँचने पर भी व्यक्त तौर पर एक घंटा ही रहा।

दूसरा, मन में दबा-छिपा बड़ा भोला-सा सवाल– "क्या भारत और भूटान के बीच कोई नो मैंस लैंड आएगा?"

उत्तर में सामने आया— एक बड़ा-सा भव्य बौद्ध कला में, सुंदर चित्र सरीखा— दोनों तरफ ड्रैगन-चित्रित स्तंभों वाला इंडिया गेट जैसा खुला दरवाजा— जिसके आर पश्चिमी बंगाल का जयगाँव है और पार भूटान का फूँटशैलिंग स्वागत करता-सा— बेरोक टोक—उन्मुक्त!

> **भूटान का इतिहास हो, राजनीति हो, समाज हो या सामान्य जनजीवन उसका केंद्र, उसकी धुरी बौद्ध धर्म है। पूरे हिमालय क्षेत्र के दिल की धड़कन है— 'बौद्धधर्म'...भूटान में बौद्धधर्म के प्रकाश को पहुँचाने और प्रसार का सम्पूर्ण श्रेय भारत के गुरु पद्मसंभव को ही जाता है।**

सुबह आँख फूँटशैलिंग के सिलेस्टयल होटल में खुली— अभी हम भूटान की दहलीज पर थे— आधिकारिक तौर पर प्रवेश पत्र प्राप्त करने के बाद ही भूटान की राजधानी थिंपू के लिए प्रस्थान किया जाएगा— यानी आज का दिन भी यात्रा में कटेगा— प्रबंधक सहित रेलगाड़ी से हमसे पहले ही पहुँचे हुए 29 और हम 9 जनों के प्रवेश की औपचारिकताएँ पूरी होनी थीं— दफ्तर के बाहर स्थानीय लोगों की भीड़ देख मन घबरा गया था— सोचा खुद भीतर जाकर पता किया जाए— काउंटर पर भूटानी युवती ने पेपर्स की माँग की थी— बिचौले युवक ने मुस्कुराते हुए कहा था, "आप आराम से बैठ जाइए सबका एक साथ होगा।"

सुविधा से जल्दी काम हो जाए इसके लिए युवक, उस दफ्तर के ही दूसरे हिस्से में ले गया था...

कमरे के भीतर एक समय में दो जन ही जा सकते थे... अपनी बारी पर जब मैं भीतर गई और मेज पर कम्प्यूटर और कुर्सी पर भूटान की पारम्परिक पोशाक 'घो' को यूनिफॉर्म के रूप में पहने अधिकारी को देखा तो परम्परा और आधुनिकता के इस सामंजस्य को देख मन खिल गया...उसके सामने बैठी महिला की उँगलियों की छाप नहीं आ रही थी— महिला के चेहरे की चिंता को देख, वह मीठे स्वर में उससे कह रहा था— "घबराइए नहीं आपको रोका नहीं जाएगा।"

उँगली पर पानी लगाकर वह फिर छाप लेता है— छाप आ गई या उसने कोई और विकल्प ढूँढ़ निकाला, नहीं जानती पर भूटान की हमारी शुरुआत मीठेपन से हो गई।

दोपहर के खाने के बाद ही, राजधानी थिंपू के लिए रवाना होना था— आकाश में बादलों को देख अपने पास एक स्वेटर रख लिया था— अच्छा ही किया क्योंकि चैकपोस्ट पर पहुँचते ही खूब जोरों से बारिश शुरू हो गई थी...धारासार बारिश-गर्म चाय-मुक्त मन, सब अच्छा ही अच्छा लग रहा था। थिंपू में 'शांतिदेवा' सारा होटल हम लोगों के लिए आरक्षित करवाया हुआ था— सुखद अनुभव होता है जब होटल के बाहर बस से उतरते हुए, 'कीरा' पहने होटल की लड़कियाँ हमारे हाथों से हैंडबैग पकड़ लेती हैं— प्यारभरे-प्रतीक्षारत-आत्मीय जन से आनंदित चेहरे पुलकित कर देते हैं। बारिशभीगी शाम भावभीगी अगवानी करती शाम बन जाती है।

चार रातें अब यहीं रहना होगा— यहीं से पारो, डा चूला, पुनाखा, बर्फ की घाटी आदि पर जाना होगा— ठहराव का अहसास देह और मन दोनों को शांत कर देता है।

पर्वत-आकाश-नदियाँ, सब एक जैसे होते हुए भी...अपने देश से बाहर घूमते हुए, सबकुछ नया नया-सा लगता है— शायद उस देश का पराग जो उसे विशिष्टता देता है। भूटान का इतिहास हो, राजनीति हो, समाज हो या सामान्य जनजीवन उसका केंद्र, उसकी धुरी बौद्ध धर्म है। पूरे हिमालय क्षेत्र के दिल की धड़कन है— 'बौद्धधर्म'... भूटान में बौद्धधर्म के प्रकाश को पहुँचाने और प्रसार का सम्पूर्ण श्रेय भारत के गुरु पद्मसंभव को ही जाता है। 'दूसरे बुद्ध' के रूप में मान्य इन्हें 'गुरु रिनपोचे' भी कहा जाता है। राष्ट्रीय पुस्तकालयों, राष्ट्रीय संग्रहालयों के भीतर हों या प्रकृति के उन्मुक्त प्रांगण में अथवा नागरिक चहल-पहल के बीच— प्रत्येक स्थल बुद्ध के आलोक से आलोकित है— 'श्रम और विश्राम' की मिलनवेला-सा संयत और शांत।

रास्ते के अनुकूल दो बाई दो की बसें न होकर एक बाई दो की बसें थीं, जो कम चौड़े रास्तों के लिए ज्यादा उपयुक्त थीं। गाइड नीरपा हर जगह हमारे साथ था। राजधानी थिंपू की लाइब्रेरी में 'पाँच बाई सात' सबसे बड़ी किताब देखने को मिली।

संग्रहालय का प्रमुख आकर्षण थे दीवार पर लगे अनेक मुखौटे ...वहीं छोटे-से सभागार में गुरु पद्मसंभव से संबंधित एक फिल्म दिखाई गई जिसमें गुरु पद्मसंभव के आठ अवतारों की जानकारी के साथ यह उद्घाटित किया गया था कि चंद्रमास की दस तारीख 'गुरु रिनपोचे' का जन्म दिवस है और उस दिन मेला लगता है... मेले में मुखौटा नृत्य होता है। जानवरों के ये मुखौटे, मनुष्य के भीतर की विकृतियों की अभिव्यक्तियाँ हैं. ...इनसे मुक्त होकर ही मनुष्य मनुष्य होने की गरिमा पा सकता है— बौद्ध धर्म के सार को सहज ढंग से सामने लाना ही गुरु रिनपोचे की विशेषता है।

ऐसा लगा था जैसे मूल्य और मान्यताएँ नृत्य करतीं उन युवतियों में रूपांतरित हो गए हों जब— 'क्राफ्ट स्कूल' के प्रवेशद्वार पर एक ऊँचे-से सामान्य मंच पर नृत्य करतीं उन लड़कियों को दूर से देखा था...स्कूल में प्रवेश करने पर पता चला था वे नृत्य नहीं कर रही थीं, दीवार बना रही थीं। सच तो यह है कि कर्मठता से आई उनके चेहरों की लाली उनके मुख पर आनंद या सुख के तेज की दीप्ति बन गई थी। स्कूल में लकड़ी की कारीगरी हो या स्केचिंग, पेंटिंग्ज सब बौद्ध कला के रंग में रंगी हुई थीं।

थिंपू से 'पारो' की ओर आगे बढ़ते हुए ही यह जान पड़ता है कि भूटान आना सार्थक हुआ। प्रदूषणमुक्त वातावरण में चैन की सहज साँस का अहसास– यहाँ किसी भी राह में हो, लगता है यही मंजिल है। कहीं भी रुक जाने को मनचाहे– तभी बस के रुक जाने पर– क्यों रुके हैं? सवाल नहीं उठा।

'पारो इंटरनेशनल एअरपोर्ट' गाइड बता रहा था–

"यह सुंदर हवाई अड्डा भारत सरकार के सहयोग से ही बना।"

प्रकृति की गोद में एक सुविधाजनक उपयोगी अलंकरण... पारो के रास्तों में आगे बढ़ते हुए किसी मंदिर या भवन के अंदर जाने का मन ही नहीं होता– कुछ आगे बढ़ने पर 'पाँचू नदी' हमारा हाथ पकड़कर साथ चलने लगती है– मन में इच्छा उठती है– 'पाँचू' के साथ कुछ वक्त गुजारने की... 'पाँचू ने हमारे मन की बात सुन ली थी' तत्काल हमें सौगात दे डाली– बसें रुक गई थीं और विजय जी कह रहे थे–

"लंच हम यहीं करेंगे।"

'पा यानी पारो और आचू माने पानी' कहते हुए गाइड नीरपा पाँचू नदी का परिचय करवा रहे थे।

किसी को भी परिचय की जरूरत नहीं थी– क्योंकि पाँचू तो सामने लहरा रही थी– बुला रही थी– पत्थरों पर सँभल-सँभलकर पाँव रखते हुए, सब आतुर थे उससे मिलने के लिए, उसके पास बैठने के लिए।

पाँचू से विदा लेकर, दो एक दिन पहले उद्घाटित हुई 'रॉयल भूटान फ्लॉवर एग्जीबिशन' में पहुँच गए–यह शोर-शराबे वाला मेला नहीं था– यह प्रकृति की उदारता को फूलों से किया कृतज्ञता ज्ञापन था– शिवम् और सुंदरम् का समागम– रंग-बिरंगे फूलों से ही सुंदर 'कीरा और घो' पहने भूटान वासी– फूलों के बीच में फूलों से ही खुशनुमा अपने बच्चों के साथ इन्हें देखना, इनसे मिलना कम सुखदायक नहीं!

फूलों के परिवेश से बाहर आ गए थे, अब बर्फ की घाटी पर पहुँचने की उत्सुकता थी– बीच में थी रात और रात में सपने में देखा बर्फ के बड़े-से कटोरे में ठिठुरते हुए अपने आपको– पिछले वर्ष के– 'नाथुला-पास' वाले बर्फ के कटोरे में पहुँच गए थे हम– सुबह मीठी-मीठी धूप तो निकल आई थी पर हवा में ठंडक थी, सावधानी के तौर पर गर्म कपड़ों के ऊपर जैकेट भी पहन ली थी– तैयार थे हम बर्फ की घाटी से मुलाकात के लिए... घुमावदार रास्ते में पाँचू नदी और वांग्चू नदी से मिलते

हुए हम– 'दाचुला' की ओर बढ़ रहे थे...धूप ने छाया को बुलाकर धूपछाँई खेल शुरू कर दिया था– शुक्र है बारिश नहीं थी।

'दाचुला' पहुँचे तो बादल घिर रहे थे, कोहरे ने हरियाली को जगह-जगह लपेट एक सपनीली दुनिया रची हुई थी– अर्द्धवृत्ताकार चबूतरों पर समाधिस्थ से स्तूप– आकाश को छू रहे थे या आकाश में?

इससे पहले कि बारिश शुरू होती हममें से कई इस प्रकृति रचित कलात्मक सृष्टि में प्रवेश करने के लिए सीढ़ियों की तरफ बढ़ गए थे– नीचे चौक में– 'स्मारक' के पास हमारे समूह के सब साथियों को बुला 'गाइड नीरपा' बता रहा था– "भूटान के तीसरे नरेश 'वांग्चुक' की यादगार में बना है यह स्मारक। नरेश सिंघे वांग्चुक की वीरता के प्रतीक स्वरूप मेरे दाँए तरफ वह भव्य बौद्ध मंदिर है तथा बाँए तरफ उल्फा उग्रवादियों वाले ऑलक्लीयर ऑपरेशन में शहीद नागरिकों के 108 स्तूप हैं।"

सीढ़ियों पर नीरपा की आवाज़ को सुनती मैं सोच रही थी कि सूर्य-जल-वायु-पृथ्वी-आकाश की तरह से सबके प्रति जो देने की कला में पारंगत हो जाए वह दिव्याभा को पा लेता है। कोहरे के झीने आवरण ने सड़क की दुनिया से अलग कर दिया था... स्मारक के ऊपर के खंड में खड़े होना बहुत सुखद लग रहा था– कैमरे को खोला इस अहसास को अपने साथ ले जाने के लिए पर मौसम के कारण शायद वह अटक गया था फिर भी कुछ क्लिक किए...

दाचुला से पुनाखा गए थे... मौनस्ट्री यानी बौद्ध मंदिर देखने के लिए– पुनाखा की मौनस्ट्री भी लद्दाख की आल्ची मौनस्ट्री की तरह नदी किनारे है। नदी पर बने पुल को पार कर मंदिर में प्रवेश किया जाता है– मन उसी पुल पर खड़े होने को कह रहा था– प्रार्थना मंत्रों मणि पद्म हुँ बजने लगा था... इतनी दूर आए थे तो भीतर जाना ही था।

भीतर प्रांगण में लकड़ी की बनी सीढ़ियों से चढ़कर मंदिर में पहुँचना था... ऊपर घूमकर हम फिर पुल पर लौट आए थे।

"पारो में कुछ ऐसा है जो बाँध लेता है।" पुनाखा से थिंपू पहुँचने के लिए बस में बैठे थे कि गाइड नीरपा पास आकर बैठ गया था... चीन, तिब्बत, नेपाल बॉर्डर के बारे में शायद वह कुछ कहने जा रहा था कि मैंने अपनी जिज्ञासा उसके सामने रखी– "यहाँ के भूगोल की बात छोड़ो, भूटान की राष्ट्रभाषा और यहाँ की प्रमुख भाषाओं के बारे में बताओ?"

"यहाँ की राष्ट्रभाषा 'जोंगखा' है– स्कूलों में शिक्षा का माध्यम इंग्लिश है– नेपाली और हिंदी जानने वालों की संख्या कम नहीं है।" वह बता रहा था।

'अप्पो दीपं भव' की दिशा देने वाले 'बुद्ध' के प्रकाश से तो सारा भूटान प्रकाशित है, पर मैं जानना चाहती हूँ कि 'महात्मा बुद्ध' के अनुयायी इस देश में, बल किस पर है... 'रिचुअल्ज यानी अनुष्ठानों' पर या 'उनकी दृष्टि और दर्शन पर।" इसके उत्तर में गाइड नीरपा ने केवल दो शब्द कहे– 'मिडल पाथ' इनको सुन मुझे जयशंकर प्रसाद की 'महात्मा बुद्ध' के संदेश वाली कविता की पंक्तियाँ याद आईं–

छोड़ कर जीवन के अतिवाद,
मध्य पथ से लो सुगति सुधार

**अशोक कुमार श्रीवास्तव**

कृषि वैज्ञानिक गन्ना अनुसंधान में विगत् 40 वर्षों का अनुभव, गन्ना सम्बन्धित 24 पुस्तकों का लेखन/सम्पादन; इण्डियन जर्नल ऑफ सुगर टेक्नोलॉजी का 5 वर्षों तक संपादन हिन्दी भाषा की प्रमुख पुस्तकें– 'गन्ना उत्पादन और उपयोग' (2010, 2011, 2015 में नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया से प्रकाशित) तथा 'उत्तर प्रदेश में गन्ना खेती की किसानोपयोगी आवश्यक जानकारी' (2013 में भारतीय अनुसंधान संस्थान से प्रकाशित)।

**संपर्क :**
shrivastavaashokindu@gmail.com

**सोमेन्द्र प्रसाद शुक्ल**

गन्ना अनुसंधान में वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी के रूप में विगत 36 वर्षों का अनुभव, शर्करा के विभिन्न आयामों पर लोकप्रिय लेखन में अभिरुचि।

**संपर्क :**
somendraprasads@gmail.com

**अनीता सावनानी**

गन्ना अनुसंधान में वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी के रूप में विगत् 14 वर्षों का अनुभव, शर्करा के विभिन्न आयामों पर लोकप्रिय लेखन में अभिरुचि।

**वरूचा मिश्रा**

गन्ना अनुसंधान में रिसर्च फैलो के रूप में कार्यरत; शर्करा के विभिन्न आयामों पर लोकप्रिय लेखन में अभिरुचि।

# व्रत-पूजन तथा त्योहारों में गन्ने व गुड़ का स्थान

धरनीकोश के पर्व पद में यह उल्लेख मिलता है कि जिस प्रकार गन्ने की संरचना में एक निश्चित अंतराल पर पर्व संधियाँ गन्ने की शर्करा व मिठास को संजोए रहती हैं, उसी प्रकार विभिन्न त्योहारों (पर्वों) का निश्चित समय के अंतराल पर आना मानव तथा समाज को गतिशीलता प्रदान करता है। साथ ही नवजीवन व उत्साह प्रदान कर उनके जीवन में सौंदर्यबोध कराता है जिसकी कमी से मानव जीवन कठिन, नीरस, असंतुष्ट व बोझिल हो जाता है।

गन्ना तथा गन्ने से बने गुड़ को हिन्दू धर्म तथा संस्कृति में भी पवित्र एवं महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। गणेश चतुर्थी तमिल अवनि माह (अगस्त-सितम्बर) में पूर्णिमा के चौथे दिन मनाई जाती है। इस दिन गणपति के घर/मंदिर को केले के पत्तों, गन्ने, टहनी सहित आम की पत्तियों से सजाया जाता है, जिससे यह मंदिर एक छोटे सुरम्य जंगल का आभास देता है। पंचगणपति या पंचमुखी गणपति के पूजन का त्योहार 21 से 25 दिसम्बर तक पाँच दिनों तक मनाया जाने वाला त्योहार है। इस दिन गणपति के मंदिर को दूर्वा घास, गन्ने तथा मोदक की मालाओं से सजाया जाता है। भगवान गणपति के 32 रूपों में दूसरे रूप तरुण गणपति, सातवें रूप सिद्धी गणपति, नौवें रूप विघ्न गणपति, तेरहवें रूप महा गणपति, सोलहवें रूप ऊर्ध्व गणपति, चौबीसवें रूप उद्दंड गणपति तथा तीसवें रूप योग गणपति द्वारा अपने कर कमलों में अन्य वस्तुओं के साथ-साथ गन्ने को भी धारण करके गरिमा प्रदान की है।

मानवता के कल्याण के लिए
अपने कर-कमलों में गन्ने को धारण किए
देवी राज राजेश्वरी भगवती महात्रिपुर सुंदरी।

देवी राजराजेश्वरी भगवती महात्रिपुर सुंदरी तथा ललिता देवी गन्ने को अपने

कर-कमलों में मानवता के कल्याण के लिए धारण करती हैं। भगवान शंकर का ध्यान भंग करने के लिए देवताओं द्वारा प्रेरित किए जाने पर कामदेव ने जिस धनुष से तीर चलाकर त्रिपुरारी का ध्यान भंग किया

कामदेव द्वारा गन्ने से बने धनुष से तीर चलाकर देवताओं के कल्याण के लिए भगवान शंकर का ध्यान भंग करना

और उनके कोपभाजन बने, वह धनुष गन्ने से ही बना था। वैभव प्रदान करने वाली, वैभव लक्ष्मी के व्रत/पूजन का उत्तर भारत में विशेष महत्त्व है। इनके कर-कमलों में भी गन्ना सुशोभित होकर गरिमा पाता है।

भारतीय संस्कृति में गन्ने को जीवात्मा के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। गन्ने की बुआई, कटाई इसके प्रमुख उत्पाद गुड़ का विभिन्न धार्मिक क्रिया-कलापों में उपयोग इसके प्रमुख उदाहरण हैं। 'देवोत्थानी एकादशी' तथा दीपावली के बाद आने वाले 'छठ पर्व' पर गन्ने की पूजा की जाती है। गन्ने की कटाई देव उठानी एकादशी (डिठवन) के दिन प्रारम्भ की जाती है। इसके लिए गन्ने के परिपक्व खेत में ईशान कोण की ओर पाँच या सात गन्नों को बाँधकर पत्तियों से महिला के सिर का आकार देकर चुनरी (पीली या लाल) साड़ी ओढ़ा दी जाती है। गन्ने को हसुली, हार आदि आभूषण भी पहनाए जाते हैं, फिर उस दिन भद्रा नक्षत्र लगने पर गन्ने की कटाई प्रारम्भ की जाती है। गन्ने की पेराई के बाद रस को बाल्टी में रखकर किसान अपने घर तक ले जाते हैं। घर के द्वार पर किसान की पत्नी व अन्य पारिवारिक जन चावल के आटे को जमीन पर फैलाते हैं (चाक पुराते हैं), फिर किसान उस पर अपने दोनों पैर रखकर पंजे से चलता हुआ ईशान कोण में स्थित रसोई घर में गन्ने का रस ले जाता है, जहाँ उसकी पत्नी इससे खीर बनाती है जो प्रसाद के रूप में सभी बंधु-बांधवों में वितरित किया जाता है। पहले श्री सत्यनारायण व्रत कथा में चरणामृत बनाने के लिए गन्ने के रस से प्राप्त गुड़ का ही प्रयोग किया जाता था, चीनी का नहीं। समस्त शुभ कार्यों में मंगल कामना के रूप में गन्ने के रस से बने गुड़ का ही प्रयोग किया जाता है।

उत्तर प्रदेश के पूर्वी क्षेत्रों में देव उठानी एकादशी के अवसर पर गन्ना काटकर घर लाते हैं तथा उसे घर के पूजा-अर्चना स्थल पर रखकर ईश्वर को अर्पित करते हैं, फिर प्रसाद स्वरूप गन्ने की कम-से-कम पाँच पोरियाँ घर का प्रत्येक सदस्य चूसता है तथा अगले दिन प्रातःकाल गन्नों के नीचे का बचा भाग सूप में डालकर यह कहते हुए 'घर की समस्त विपदाएँ-आपदाएँ बाहर जाएँ', इन्हें बाहर फेंक दिया जाता है। इस दिन आँगन में बड़ी कुशलता से उजले ऐपन से विस्तृत 'नारायणी चौक' बनाई जाती है। चौक में बीचोंबीच 'प्रभु चरण' रखे जाते हैं। चौक पर प्रमुख रूप से गन्ना सजाया जाता है। पूजा में आँवला, कमरख, इमली, शकरकंद, सिंघाड़ा, चने का साग, झरबेरी के बेर और उड़द की फली चढ़ती है। दशहरे की चौक पर रखे गए रावण-शीश के प्रतीक गोबर के दस पुतले उसी दिन एक मिट्टी के प्याले में दहकाकर भगवान को जाड़े में तपाया जाता है। संझाबाती के समय (सायंकाल) पूजा कर नारी गौर से सुहाग लेती है। पुरुष गन्ने का अगौला तोड़कर अलग डाल देते हैं। भगवान के श्री चरण मूँज की रंगीन डलिया से मूँद दिए जाते हैं, ताकि उनकी अवमानना न हो। देवोत्थानी एकादशी से माना जाता है कि गन्ने में चीनी की मात्रा भरपूर आ गई है, यानी गन्ना परिपक्व हो गया। गाँवों में मान्यता है कि इसके पूर्व गन्ना तोड़ने पर पाप लगता है। मान्यता है कि जो नौजवान लड़के-लड़कियाँ इस रात उस चौक को लाँघ लेते हैं, उनका विवाह हो जाता है। मुँह अंधियारे घर का कोई बड़ा व्यक्ति नहाकर बिना देखे डलिया में रखे भगवान के श्री चरण गोबर से लीप देता है। उधर स्त्रियाँ तड़के-तड़के पुराने सूप को अगौले से पीटते हुए 'ईश्वर आए, दरिद्रता जाए' कहती हुई घर से दूर जाकर अगौले को फेंक देती हैं। गन्ने से दरिद्रता भगाने का अर्थ ही है कि गन्ना बोने वाले किसान के घर समृद्धि आती है और उसकी गरीबी दूर हो जाती है। अगली सुबह लोग एक दूसरे के घर चौक देखने जाते हैं। इस त्योहार से एक

**"मुँह अंधियारे घर का कोई बड़ा व्यक्ति नहाकर बिना देखे डलिया में रखे भगवान के श्री चरण गोबर से लीप देता है। उधर स्त्रियाँ तड़के-तड़के पुराने सूप को अगौले से पीटते हुए 'ईश्वर आए, दरिद्रता जाए' कहती हुई घर से दूर जाकर अगौले को फेंक देती हैं। गन्ने से दरिद्रता भगाने का अर्थ ही है कि गन्ना बोने वाले किसान के घर समृद्धि आती है और उसकी गरीबी दूर हो जाती है।"**

ग्रहण किया जाता है। इस भोजन में मीठा (गुड़-पराठा, गुड़-रोटी, या चीनी-दही) खाते हैं। गुड़धनियाँ को भगवान श्री जगन्नाथ की रथ यात्रा पूजा में भी प्रसाद स्वरूप भक्तों में वितरित किया जाता है।

संतोषी माता के व्रत में शुक्रवार को तथा इस व्रत के उद्यापन में गुड़-चने का प्रसाद वितरित किया जाता है।

नवान्न पूजन में रबी की फसल में गेहूँ की बाली (जब उसमें दाना पड़ जाता है) में गुड़ मिलाकर इसकी पूजा की जाती है तथा घर में सभी को प्रसाद स्वरूप वितरित किया जाता है। फिर घर में तथा निकट स्थित अपने परिवार के बुजुर्गों के चरण स्पर्श कर उनसे, 'पुराना खाओ नया धरो' का आशीर्वाद प्राप्त किया जाता है। खरीफ की फसल में सावाँ की बाली (जब उसमें दाना पड़ जाता है) में गुड़ मिलाकर इसकी पूजा की जाती है तथा घर में सभी को प्रसाद वितरित किया जाता है।

भारतवर्ष में मकर संक्रांति का विशेष महत्त्व है, क्योंकि इसी दिन सूर्य दक्षिणायण से उत्तरायण होते हैं। ऐसी मान्यता है कि इस दिन सूर्य की आराधना से न केवल मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है, अपितु दान-पुण्य का अवसर भी प्रदान करता है। हिमाचल, हरियाणा व पंजाब में संक्रांति से एक दिन पूर्व लोहड़ी का पर्व मनाया जाता है। इसमें नए चावल, तिल, गन्ने के रस से निर्मित गुड़ व मक्के के लावे से आहुति दी जाती है। तिल, गुड़, नारियल के गोले के टुकड़ों से मीठे लड्डू बनाए जाते हैं। पंजाब में 'लोहड़ी' त्योहार पर 'रौ दी खीर' बनाई जाती है। यहाँ 'रौ' गन्ने के रस को कहते हैं। इस पर्व के एक दिन पूर्व लड़के घर-घर लोहड़ी माँगने जाते हैं तथा दुल्हा भट्टी की याद में गीत गाते हैं।

**तुलसी विवाह में**– तुलसी के पौधे का गमला गेरू आदि से रंगकर उसके चारों ओर ईख का मण्डप बनाकर उसके ऊपर ओढ़नी या सुहाग की प्रतीक चुनरी ओढ़ाते हैं। गमले में साड़ी लपेटकर तुलसी को चूड़ी पहनाकर उनका शृंगार करते हैं। राजस्थान में तुलसी विवाह को 'बटुआ-फिराना' कहते हैं।

विद्या की अधिष्ठात्री देवी भगवती सरस्वती का पूजन बसंत पंचमी को किया जाता है। इनके पूजन में प्रयुक्त अधिकांश सामग्रियाँ श्वेत रंग की होती हैं। जैसे– दूध, दही, मक्खन, धान का लावा, सफेद तिल का लड्डू, गन्ना व गन्ने का रस, पका हुआ गुड़, श्वेत चंदन, श्वेत पुष्प, चाँदी के आभूषण, पके केले की फली का पिष्टक, नारियल, नारियल पानी, श्रीफल, बेर आदि।

गुणवान बहू की पहचान भी हो जाती है। मशहूर अवधी कहावत– 'मोर गुन देखेउ डिठवन भोर' इसी का परिचायक है।

होलिका दहन में भी गन्ने को होलिका की आग में गर्म करके पटका जाता है। कर्नाटक में उगाडी (नववर्ष का प्रथम दिन) में 'बेवु-बेल्ला' (जो नीम की मुलायम पत्तियों तथा गन्ने के गुड़ को मिलाकर छोटी-छोटी गोली के रूप में बना होता है) खाया जाता है, जो यह प्रदर्शित करता है कि हम आने वाले नववर्ष में अच्छे तथा बुरे दोनों प्रकार के अवसरों के लिए मानसिक रूप से तैयार रहें।

सकट पूजा में पुत्रवती महिलाएँ निर्जला व्रत रखती हैं। पूजा में गुड़ तथा परमल (लईय्या) से बने 'बकरे' को काटा जाता है तथा प्रसाद स्वरूप सब में वितरित किया जाता है। गुड़ और घी से बनी सुपारी से पूजा होती है तथा इसको माँ अपने पुत्रों को मंगल कामना के साथ प्रसाद स्वरूप देती है।

उत्तर भारत के कुछ ग्रामीण अँचलों में मंगलवार के दिन हनुमान जी की पूजा में प्रसाद के रूप में गुड़ और गेहूँ से बनी 'गुड़धनियाँ' को हनुमान जी की प्रतिमा को अर्पित करके प्रसाद स्वरूप भक्तों में वितरित किया जाता है। मंगलवार के व्रत में एक समय ही भोजन

दक्षिण भारत में नव वर्षारम्भ को 'वर्ष पिरप्पु' (तमिलनाडु में), 'उगाडी पाडया' (कर्नाटक में) तथा 'विषु' (केरल में) कहते हैं। तमिलनाडु में इस दिन पंचांग की पूजा कर उसे पढ़ा जाता है तथा आने वाला वर्ष सुखद् एवं समृद्धशाली हो, ऐसी शुभकामनाओं के साथ 'पानगम्' (गुड़ से निर्मित मीठा शर्बत) वितरित किया जाता है। इस दिन उत्सव भोज में एक विशेष प्रकार की चटनी 'पच्चड़ी' परोसी जाती है जो आम, गुड़, नमक, हरी मिर्च तथा नीम के कसैले-कड़वे फूलों के सागोंपांग मिश्रण से बनती है। यह 'पच्चड़ी' हमारे जीवन में विभिन्न प्रकार के रसों के मेल को दर्शाती है।

आंध्र प्रदेश में 'पंचादि चटनी' उगादी पर्व का विशेष उपहार नीम की नरम कोपलों, गन्ना, गुड़, कच्चे आम की फाँकें तथा नमक के मिश्रण को पीस कर बनती है। इसका मीठा, खट्टा व नमकीन स्वाद यह परिलक्षित करता है कि जीवन मीठा ही नहीं है; उसमें कटुता भी है, जिसको सहन किए बिना वास्तविक जीवन का रसास्वादन नहीं मिलता।

मकर संक्रांति पर दक्षिण भारत में पोंगल पर्व मनाया जाता है। पोंगल एक कृषि उत्सव है। इस दिन सूर्य भगवान की उपासना की जाती है। लोग घरों के सामने मनोहारी रंगोली (कोलम) बनाते हैं तथा अनेक कृषि उत्पाद जिसमें गन्ना भी शामिल होता है, केले के पत्तों में सजाकर भगवान सूर्य, गणपति तथा अन्य देवों को अर्पित किए जाते हैं। तमिलनाडु में पोंगल चार दिन का पर्व होता है। पोंगल में एक बर्तन रखा जाता है, जिसे ताजी हल्दी की पत्तियों तथा गन्ने के टुकड़ों से बाँधकर रुचिपूर्वक सजाया जाता है। इसे पहले दिन को भोगी पोंगल, दूसरे दिन को पोंगल, थई पोंगल या पेरूम पोंगल, तीसरे दिन को मट्टू पोंगल कहते हैं। इस दिन गाय, बैलों को नहलाकर उनके सींगों पर पेंट लगा इनकी पूजा करते हैं तथा भरपेट खिलाते हैं। खाने में इन्हें चावल व गन्ना आदरपूर्वक अर्पित किया जाता है। गन्ना व ताजी हल्दी से इनका पूजन करते हैं। चौथे दिन के उत्सव को कअनुम पोंगल कहते हैं। पोंगल का प्रसाद नए चावल, नए गुड़ को ताजे गन्ने के रस में पकाकर बनाया जाता है।

महाशिवरात्रि पर श्रद्धालु भगवान शंकर को प्रसन्न करने की कामना से व्रत रखते हैं। इस दिन व्रत के साथ-साथ शिव कथाओं का श्रवण एवं भगवान भोलेनाथ का अभिषेक किया जाता है। दूध, दही, घी, मधु, गन्ने का रस, गंगाजल, ताँबे या चाँदी के पात्र से शिव का जलाभिषेक किया जाता है। उसके बाद पूजन सामग्री में बेल पत्र, धतूरा पुष्प, गन्ना, भाँग व जौ की बाली का प्रयोग करते हैं। अबीर व गुलाल से शिवार्चन भी किया जाता है।

दक्षिण भारत में कार्तिगै उत्सव बहनों द्वारा अपने भाई के लम्बे एवं सुखमय जीवन की मंगल कामना के साथ कार्तिक पूर्णिमा के दिन दीप जलाकर मनाया जाता है। 'पोरी लड्डू' इस शुभ दिन का पवित्र व्यंजन है, जो धान के लावे एवं चूड़े को गुड़ के साथ मिश्रण करके बनाया जाता है।

दीपावली के छह दिनों बाद मनाया जाने वाला छठ पर्व भगवान सूर्य का उनके द्वारा पृथ्वी पर प्रदत्त धन-धान्य व प्रकाश के लिए तथा इच्छित मनोकामनाओं जैसे— पुत्र प्राप्ति, पुत्र का विवाह आदि को पूर्ण करने के लिए धन्यवाद देने का पर्व है। इस पर्व में गन्ने से आच्छादित मंडप में दीपों से युक्त मिट्टी का हाथी तथा सूर्य भगवान को अर्पित चढ़ावा रखा जाता है। सूर्य-षष्ठी अथवा छठ-पूजा

सूर्योपासना का महोत्सव है। सूर्य अंधकार को विजित कर चराचर जगत को प्रकाशमान करता है। सरिताओं, सागरों का जल सोखकर बादलों द्वारा तपती धरती की प्यास बुझाता है। इसी जल द्वारा धरती अन्नपूर्णा बनती है तथा सभी प्राणियों की क्षुधा का शमन करती है। दो दिनों तक अति पवित्रता से किया जाने वाला उपवास के विधान से युक्त छठ एक कठिन पूजन है। छठ पूजा के समय हम उन्हीं वस्तुओं से सूर्य को सायं एवं प्रातः अर्घ्य देते हैं, जो उनकी अनुकम्पा से हमें प्राप्त होती हैं, तथा विभिन्न अन्नों से बने पकवान, अनेक प्रकार के फल जो शरद् ऋतु में उपलब्ध रहते हैं, विशेषकर केला, सेब, नाशपाती, नारियल, आदि। मधुर रस के स्रोत गन्ने के पौधों को भी नदियों/तालाबों/पोखरों के घाटों पर सजाया जाता है।

भगवान शिव अपने शक्ति और संहारक स्वरूप में महाकाल या कालभैरव कहे जाते हैं तथा अपने शरणागतों का क्लेश हरने वाले हैं। शिव पुराण में कालभैरव जी की उत्पत्ति गाथा शिवसत्ता के सर्वोच्च प्रमाण रूप में है। काल भैरवाष्टमी पर उनकी पूजा शोड्सोपचार रूप से की जाती है। इन्हें प्रतिदिन अलग-अलग नैवेद्य अर्पित किए जाते हैं। सोमवार– आटे का लड्डू, मंगलवार– गुड़, घी, गेहूँ का हलवा, बुधवार– दही बरा, बृहस्पति– बेसन का लड्डू, शुक्रवार– भुने चने, शनिवार– तेल में तली उड़द की पकौड़ी। मूलतः अनंत रहस्यमयी शिव शक्तियों का स्वरूप बन कालभैरव संरक्षक और शरण प्रदाता बन समाज में व्याप्त दुष्ट प्रवृत्तियों का संहार करते हैं।

जैन शास्त्र (आदि पुराण, जैन भारती) के अनुसार, जैन के प्रथम तीर्थंकर भगवान आदिनाथ (या ऋषभ देव) को सर्वप्रथम हस्तिनापुर में राजा श्रेयांस द्वारा गन्ने के रस (इक्षु रस) का आहार दिया गया था, उस दिन तृतीय तिथि थी। इसीलिए यह दिन 'अक्षय तृतीया' के नाम से प्रसिद्ध हो गया। मेरठ जिले में आज भी यह पर्व अक्षय तृतीया के नाम से मनाया जाता है, साथ ही यह भी मान्यता है कि मेरठ के आसपास गन्ने की फसल अक्षय हो गई (अर्थात कभी भी समाप्त नहीं होगी)। जैन पर्वों में प्रयुक्त पंचामृत में गन्ने का रस एक प्रमुख अवयव है।

आंध्र प्रदेश में गृह प्रवेश के सुअवसर पर पत्तियों सहित गन्ने को मुख्य प्रवेशद्वार पर दोनों ओर सजाया जाता है। प्रायः सभी त्योहारों में मंदिरों के मंडप की गन्ने के वृक्षों से सुरुचिपूर्ण सजावट की जाती है। गन्ने के कटे हुए टुकड़ों को संक्रांति के अवसर पर प्रसाद के रूप में वितरित किया जाता है। विनायक चतुर्थी त्योहार में भगवान गणेश जी को गन्ना सादर अर्पित किया जाता है। शक्कर को सूजी (रवा) के साथ मिलाकर श्री सत्यनारायण भगवान की पूजा में मुख्य प्रसाद के रूप में वितरित करते हैं। श्री राम नवमी में गुड़ का शर्बत आगंतुकों में वितरित किया जाता है। आंध्र प्रदेश में अप्रैल में नववर्ष के आगमन को 'उगाड़ी' त्योहार के रूप में मनाया जाता है। इस दिन प्रातः काल पूजा-अर्चना के बाद 'उगाड़ी पच्चड़ी' का सेवन करते हैं। इसमें सभी सात प्रकार के स्वाद (मीठा, खट्टा, कसैला, नमकीन, तीखा, कड़ुआ, बकठा) वाली वस्तुएँ मिलाते हैं। मीठे के लिए गन्ने के रस से बने गुड़ का प्रयोग होता है। यह इस बात का द्योतक है कि आने वाला नववर्ष सभी प्रकार के अनुभवों का मिश्रित रूप होगा।

गन्ने का सिंधी समाज में विशेष महत्त्व है। गन्ने तथा गन्ने से बने उत्पाद सिंधी लोग अपने रीति-रिवाजों में बखूबी अपनाते हैं। गन्ने का रस, गन्ने के टुकड़े, राब, गुड़ सभी का इनके व्यंजनों में भरपूर योगदान है। सिंधियों का प्रमुख त्योहार 'चेटी चंद' बड़े ही धूमधाम से मनाया जाता है। इस दिन को ये अपने प्रमुख गुरु संत झूलेलाल के जन्मदिन के रूप मनाते हैं। इस त्योहार के प्रसाद के रूप में एक मिट्टी की हाँडी में चावल, दूध तथा गन्ने का रस डाल कर उसे पकाते हैं तथा उसे आटे से चारों ओर से सील कर देते हैं और बिना खोले उसे नदी में प्रवाहित करते हैं। मान्यता है कि उनके संत श्री झूलेलाल जी जल देवता की असीम कृपा से पैदा हुए थे अतः जल देवता को यह चढ़ावा जिसे 'अक' कहते हैं चढ़ाते हैं जो प्रवाहित होने के बाद मछलियों द्वारा खाया जाता है। इसके अलावा होलिका दहन की पूजा के दिन 'गुड़ जो लोलो' अर्थात 'गुड़ से भरी हुई रोटी' अग्नि को अर्पित की जाती है। 'थदड़ी' सिंधियों का एक प्रमुख त्योहार माना जाता है। इस दिन लोग अपने परिवार को कष्टों से बचाने के लिए सर्व शक्तिमान ईश्वर की पूजा करते हैं तथा सारे भोज्य पदार्थ ठंडे ही खाए जाते हैं। 'थदड़ी' से एक दिन पूर्व स्त्रियाँ गुड़ के मोटे-मोटे रोट बनाकर रखती हैं तथा उनको लस्सी के साथ 'थदड़ी' वाले दिन खाया जाता है। इस दिन वे गन्ने के रस का सेवन भी करते हैं। इसके अलावा, सिंधियों का एक प्रमुख त्योहार होता है 'सगड़ा', जिसमें माताएँ अपने पुत्र की लम्बी आयु की दुआ करती हुई व्रत रखती हैं। इस व्रत को ज्वार, घी तथा गुड़ से बनी हुई 'कुट्टी' खाकर तोड़ा जाता है। सिंधी समाज में इस 'कुट्टी' का एक अपना ही महत्त्व है।

उत्तराखंड के कुमाऊँ क्षेत्र में दीपावली के दिन गन्ने को काट कर पत्तों सहित मंदिर व द्वार पर रखा जाता है तथा गन्ने से बनाई हुई लक्ष्मी की पूजा की जाती है। यह समृद्धि का प्रतीक माना जाता है। हरिबोधिनी एकादशी पर इसे 'भुइयंन' के रूप में निकाला जाता है। उत्तराखंड के कुमाऊँ क्षेत्र में स्त्रियाँ बैशाख में सौंफ, काली मिर्च मिले शर्बत का दान करती हैं तथा गुड़-पापड़ी (पंजीरी) ब्राह्मणों को सादर खिलाई जाती है।

भारतीय समाज के उत्थान एवं कल्याण में हमारे ऋषियों का विशिष्ट योगदान रहा है। उन्होंने हमारे जीवन से कुत्सित विचारों को हटाकर हमारे आत्मजागरण का प्रयास किया तथा समाज का उत्थान करने की चेष्टा की। 'ऋषि पंचमी' के दिन हम इन ऋषियों के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं। इस दिन हल से जुते खेत का अन्न, मिर्च-मसाले, नमक, घी, तेल, गुड़ इत्यादि का सेवन नहीं किया जाता है। भोजन भी दिन में केवल एक बार ही किया जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न व्रत-पूजन, पर्व तथा त्योहारों में गन्ना एवं गुड़ सांग-पांग रूप से रच-बसकर हमारे जीवन में नवीन उत्साह का संचार करते हैं तथा हम जीवन की चुनौतियों का भली प्रकार सामना करने में समर्थ हो जाते हैं।

# ईद की वो शाम

धड़ाम-धड़ाम की आवाज़ और बच्चों की चीख-पुकार सुनकर सिन्हा जी चीखते हुए घर से बाहर निकले—

"जरूर यह इरफ़ान खान की ही कोई शरारत है। ये आदमी अब हमें नहीं जीने देगा। आस्तीन का साँप कहीं का।"

दरअसल ईद की उस शाम घर के सामने वाले पार्क में अन्य बच्चों के साथ ही उनके दोनों बच्चे विनीत और सुषमा भी खेल-कूद रहे थे। उन्हें लगा जरूर उनके साथ कुछ अनहोनी घटी है। उन्हें चिल्लाता देखकर श्रीमती सिन्हा और घर के अन्य सदस्य भी बदहवास से शोर करते हुए बाहर की ओर भागे। सिन्हा जी जोर-जोर से चीखते जा रहे थे—

**किशोर श्रीवास्तव**

विगत् तीन दशकों से भी अधिक समय से लेखन, संगीत, कला, मंचीय हास्य, व्यंग्य चित्रकारी आदि के क्षेत्र में सक्रिय। कहानी, लघुकथा, हास्य-व्यंग्य एवं बाल साहित्य की एक दर्जन के करीब पुस्तकें प्रकाशित। अपनी कार्टून प्रदर्शनी 'खरी-खरी' के माध्यम से विगत् तीस वर्षों से विभिन्न सामाजिक विसंगतियों के खिलाफ जन जागरूकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव/राजभाषा के प्रचार संबंधी अभियान में संलग्न।

**संपर्क :**

kishorsemilen@gmail.com


"जरूर इरफ़ान और उनकी बेगम ने फिर कोई नापाक हरकत की है। अभी ही तो वे हमारे घर से गुस्से में बाहर निकले हैं। ... धोखेबाज और आतंकी कहीं के—"

गुस्से में भरी श्रीमती सिन्हा भी बुदबुदा उठी थीं—

"मैं तो पहले ही इन्हें अच्छी तरह से समझ गई थी और माँ जी तो अब इनकी शक्ल भी देखना नहीं चाहती थीं, इन मुओं को आज ईद का दिन ही मिला था अपनी इस कारगुजारी के लिए...।"

सिन्हा और श्रीमती सिन्हा के घर से बाहर निकलते ही विनीत और सुषमा उनसे लिपटकर जोर-जोर से रोने लगे थे। बाकी बच्चे भी दहशत में खड़े चीखे जा रहे थे। बाहर निकलते ही जब उन सबकी नज़र कुछ ही दूरी पर पड़े इरफ़ान खान और उनकी बेगम के क्षत-विक्षत शव पर पड़ी तो उनकी चीखें ही निकल गईं। इरफ़ान के हाथों में एक जले हुए बम का तार उलझा हुआ था और उन दोनों के शरीर के आसपास खून के छीटें-ही-छीटें नजर आ रहे थे।

विनीत ने दहशत और भय के साथ सिसकते-सिसकते पापा को इस घटना के बारे में बताते हुए कहा,

"पापा! हम लोग घर के बाहर वाले पार्क में खेल रहे थे, तभी अचानक हमें सामने वाले पीपल के पेड़ के नीचे एक गेंद जैसी चीज में चिंगारी उठती दिखी। उसी समय इरफ़ान अंकल और आंटी घर से निकले तो हमने उन्हें उस चिंगारी के बारे में बताया, तो वो यह कहते हुए चिल्ला पड़े थे— "अरे बच्चों! पीछे हटो... यह तो बम-सा लगता है। इसके साथ ही इरफ़ान अंकल ने उस गेंदनुमा चीज को अपने हाथों में उठा लिया था। वह उसे लेकर आगे सुनसान जगह पर ले जाने के लिए तेजी से बढ़े ही थे कि वह उनके हाथों में ही जोर के धमाके के साथ फट गया था। उनके पीछे भागती आंटी भी उसकी लपेट में आ गई थीं और फिर दोनों वहीं पर ढेर होकर गिर पड़े थे।"

सुषमा भी रोते-रोते माँ के सीने से लिपटकर बोल पड़ी,

"माँ! यदि अंकल बम लेकर आगे की ओर न भागे होते तो हम सभी बच्चों के चिथड़े आज यहीं पर उड़ गए होते।"

"तो क्या इरफ़ान भाई साहब वैसे नहीं थे, जैसा हमने उनके बारे में सोच-समझ रखा था। हे भगवान! उन्होंने हमारे बच्चों की खातिर अपनी जान भी दे दी और हम उनके बारे में न जाने क्या-क्या बोले जा रहे हैं।"

श्रीमती सिन्हा ने यह सब कहते हुए अपना माथा पकड़ लिया था।

सभी को साथ लेकर सिन्हा साहब इरफ़ान और उनकी बेगम की क्षत-विक्षत लाश तक जा पहुँचे थे। दोनों का चेहरा जलकर काला पड़ चुका था। इरफान की आँखें खुली हुई थीं और होठों पर एक अजीब-सी मुस्कान तैर रही थी। ऐसा लग रहा था मानो वो हमसे कुछ कहना चाह रहे हों। शायद यही, कि "दोस्त मैं बेकसूर हूँ। प्लीज़ मुझे गलत मत समझना और अपने दिल में हमारी यादों के चिराग हमेशा-हमेशा जलाए रखना।"

निश्चय ही आज उन्होंने शक और सुबहा का पूरा नकाब उतार फेंका था अपने शरीर से।

अचानक शोरगुल के साथ ही बम निरोधक दस्ता और पुलिस भी वहाँ पर आ

पहुँची थी। बम निरोधक दस्ते ने बम के जले टुकड़ों और पुलिस ने दोनों के क्षत-विक्षत शवों को अपनी कस्टडी में ले लिया था। धीरे-धीरे वहाँ अच्छी-खासी भीड़ इकट्ठी हो

मुश्किल से पुलिस वालों ने सिन्हा और उनकी पत्नी को इरफ़ान और उनकी बेगम के शव से छुड़ाकर दूर किया था। वहाँ उपस्थित सभी लोग इरफ़ान और उनकी

गई थी। दूर-दराज की कॉलोनियों के काफी सारे लोग भी वहाँ इकट्ठे हो गए थे। कल तक सिन्हा जी के घर के सामने वाले पार्क में जहाँ केवल छोटे-छोटे बच्चों की चहल-कदमी रहती थी, वहाँ आज चारों ओर अफरा-तफरी और दहशत का माहौल था।

जब इरफ़ान और उनकी बेगम की डेड बॉडी को बम निरोधक दस्ते व स्थानीय पुलिस की टीम आगे लेकर बढ़ी तो अचानक न जाने कैसे इरफ़ान का हाथ लटककर नीचे आ गया। मानो वह हमें सलाम ठोककर हमारे घर से विदा हो रहे हों।

सिन्हा जी ने दौड़कर उनका हाथ थाम लिया था। उनकी पत्नी इरफ़ान साहब का हाथ पकड़ते हुए पुलिस से गुहार लगाते हुए चिल्लाई थी–

"प्लीज़ इन्हें मत ले जाइए, ये बेकसूर हैं... ये लोग अभी ज़िंदा हैं। अभी इन्हें कुछ समय हमारे साथ ही रहने दीजिए, हमें इनके साथ ईद मनाने दीजिए... अभी-अभी तो आए थे हमारे घर ये लोग... आज तो इन्हें मैं अपने हाथों की कॉफी भी नहीं पिला पाई थी।"

और इसके साथ ही मिसेज सिन्हा इरफ़ान और उनकी बेगम के शव से लिपटते हुए जोर-जोर से विलाप करने लगी थीं। बड़ी बेगम के शव को दूर तक जाते हुए देखते रहे थे। इधर कुछ समय से जो सिन्हा जी इरफ़ान खान से नफरत करते हुए उनसे दूर-दूर रहने लगे थे, आज उनको इरफ़ान की मृत्यु पर विलाप करते हुए देखकर सभी आश्चर्य-चकित थे। इरफ़ान खान की असलियत से अनभिज्ञ आसपास के लगभग सारे लोग आज बहुत खुश थे और उन सभी के मुँह से आज बस यही निकल रहा था–

"अच्छा हुआ मारा गया, अपने ही आतंकवादी भाई-बंधुओं के हाथों।"

अब समाज व सिन्हा जी को उन्हें यह समझाने में शायद वक्त लगता कि इरफ़ान खान खुद अपनी मौत नहीं मरे थे, बल्कि उन्हीं के बच्चों की जान बचाने के लिए उन्होंने अपनी जान कुर्बान कर दी थी।

लखनऊ से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के पश्चात सिन्हा जी का परिवार लगभग 10 वर्ष पूर्व ही यहाँ आया था। दरअसल सिन्हा जी का जन्म इसी शहर के पास के एक गाँव में हुआ था और उनकी ग्रेजुएशन तक की पढ़ाई इसी शहर में कॉलेज के हॉस्टल में रहते हुए हुई थी, अतः उनका इस शहर से खासा लगाव था। माता-पिता की मृत्यु और घर-खेत सभी के बिक जाने के पश्चात उनके लिए गाँव जाना सम्भव नहीं था, अतः उन्होंने अपनी पेंशन व ग्रेच्युटी के पैसों से इस सरकारी कॉलोनी में ही एक दो बीएचके का फ्लैट खरीद लिया था। यहाँ लगभग सभी धर्मों के लोग रहते थे, पर मुस्लिमों की संख्या काफी ज्यादा थी। अपने मधुर व्यवहार के चलते सिन्हा परिवार के लोग जल्दी ही कॉलोनी के लोगों के बीच घुल-मिल गए थे। जिस दिन सिन्हा का परिवार यहाँ आया था उसी दिन कॉलोनी के बी ब्लॉक में रहने वाले इरफ़ान खान को उनके आने की सूचना मिल गई थी और वह अपनी बेगम व बच्चों को लेकर उनके यहाँ आ धमके थे। उन्होंने अपना परिचय देते हुए न केवल उनकी ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया था अपितु किसी भी तरह की परेशानी के लिए उन्हें तुरंत कॉल करने को भी कहा था। कॉलोनी में खान साहब काफी प्रसिद्ध थे। किसी के घर में सुख-दुख की कोई घटना घटे और खान साहब वहाँ तक न पहुँचें, ऐसा कभी सम्भव ही नहीं होता था। कभी वो किसी काम में ज्यादा व्यस्त होते या बीमार पड़े होते तो उनकी बेगम साहिबा ही उस परिवार का हाल-चाल जानने जा पहुँचती थीं।

इरफ़ान खान से जल्दी ही सिन्हा जी भी काफी अच्छी तरह से घुल-मिल गए थे। इरफ़ान खान के जरिए ही कॉलोनी के डिसूजा और परमिंदर भी सिन्हा साहब के मित्र बन गए थे। धीरे-धीरे उनकी मित्रता इतनी बढ़ती चली गई थी कि आसपास के अनेक लोगों की आँखों में वे चारों खटकने ही लग गए थे। कुछ कट्टरपंथी और धर्मांध लोग कदापि नहीं चाहते थे कि वे सभी एक साथ ज्यादा उठे-बैठें और उनका प्रयास यही रहता कि किसी-न-किसी तरह से उनकी चौकड़ी बिखर जाए। परन्तु यह काम इतना आसान नहीं था। उनके बीच यदि कभी कोई मतभेद या मनभेद पैदा भी होता तो वे आपस में मिल-बैठकर उसका समाधान ढूँढ़ निकालते। वे सभी अक्सर परिवार सहित एक-दूसरे के परिवारों से मिलते और कभी-कभी तो चारों परिवार दूर कहीं घूमने-फिरने भी निकल जाते

और दो-चार दिन मौज-मस्ती करके ही वापस घर लौटते।

सिन्हा साहब की माँ काफी पुराने विचारों की थीं और उनमें छूत-छात की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी। यही वजह थी कि उन्हें इरफ़ान का ज्यादा घर में आना रास नहीं आता था। यद्यपि सिन्हा साहब माँसाहारी भोजन के शौकीन थे, परन्तु उनकी माँ इससे दूर-दूर भागती थीं। जिस दिन कभी घर में चिकन, मीट या मछली पकने की बारी आती वह नाक-भौं सिकोड़कर एक कोने में दुबक कर बैठ जातीं। माँसाहारी और शाकाहारी बर्तन, चूल्हा आदि अलग-अलग होने के बावजूद वह दूर बैठकर खाना बनाने वाले को "ये मत छूना, उसे हाथ मत लगाना" आदि-आदि का निर्देश देती रहतीं। इसके अलावा घर में जूते-चप्पल पहनकर किसी का इधर-उधर घूमना भी उन्हें नागवार लगता था और गलती से कहीं कोई जूता-चप्पल पहने घर के किसी कोने या किचन तक पहुँच गया तब तो माँ जी पूरा घर ही धुलवाकर मानती थीं। इन सब बातों से अनभिज्ञ इरफ़ान खान अक्सर जूते-चप्पल पहनकर सिन्हा जी के घर में घुस आते थे। कभी-कभी तो, "भाभी जी, आज आप क्या पकवान बना रही हैं" कहते हुए वह सीधे किचन तक भी पहुँच जाते थे। और उस दिन उनके चले जाने के बाद माँ जी माथा पकड़कर घंटों बैठी रह जाती थीं। घंटों उन्हें कोसती रहती थीं। एक दिन तो जैसे ही इरफ़ान खान सिन्हा जी के घर से बाहर निकले उनके कानों से माँ जी के चीखने-चिल्लाने की आवाज़ जा टकराई। उस दिन पहली बार इरफ़ान को सारा माजरा समझ में आया था। वह अपने किए पर वास्तव में बहुत शर्मिंदा थे। उन्होंने उसी समय वापस आकर माँ जी से न केवल माफी माँग ली थी अपितु अपने दोनों कानों को पकड़ते हुए आगे फिर कभी जूते-चप्पल पहनकर उनके घर में न घुसने की प्रतिज्ञा भी कर डाली थी। उस दिन भी माँ जी ने उनके चले जाने के बाद फिर से पूरा घर धुलवाया था। एक दिन तो माँ जी ने हद ही कर दी। इरफ़ान खान जब बकरा-ईद के दिन सिन्हा जी को दावत देने घर आए थे, तब माँ जी ने सिन्हा को उनके घर जाने से साफ रोक दिया था। माँ जी ने इरफ़ान को झिड़कते हुए कहा था— "क्यों हर वक्त मेरे छोरे को बिगाड़ने में लगा रहता है, न जाने काहे-काहे की दावत देता रहता है यह खान का बच्चा भी। अरे तुम ससुरों का क्या भरोसा कि अपने घर में ले जाकर मेरे बच्चे को क्या खिला दो। हमारा तो तुम लोगों ने सारा धर्म ही नाश कर रखा है।"

यद्यपि माँ जी ने बड़ी तल्ख़ बातें कह डाली थीं, परंतु इरफ़ान ने बुरा लगने के बावजूद माँ जी की बातों को हँसी में टालना

ही उचित समझा था। किन्हीं बातों में उलझकर वह आज अपने पाक त्योहार का मजा भी किरकिरा नहीं करना चाहता था। वह बड़े-बूढ़ों व मैत्री और भाईचारे का सदा सम्मान करता था और आज भी वह इन बातों को लेकर आपस में कोई मनमुटाव नहीं पैदा करना चाहता था। सिन्हा जी समझ गए थे खान साहब को माँ जी के इस व्यवहार से कुछ ठेस पहुँची है, अतः वह माँ जी को ही समझाते हुए बुदबुदाने लगे, "अम्मा, तुम भी क्या ये फालतू की बातें लेकर बैठ जाती हो। बजाय खान साहब को उनके त्योहार पर बधाई देने के तुम उनका दिल छोटा कर रही हो?"

"हुँह! बड़ा आया त्योहार वाला। अरे इन लोगों ने ही तो इस देश का सत्यानाश कर रखा है। आए दिन देश में कहीं-न-कहीं जो बम फटता है, उसमें इनके अलावा क्या कोई और लोग भी शामिल रहते हैं?"

अम्मा जी बिना रुके ही बोलती चली गई थीं।

बात को ज्यादा बिगड़ता देख सिन्हा इरफ़ान के कंधे पर हाथ रखते हुए उन्हें घर से बाहर की ओर खींच ले गए थे। उन्होंने इरफ़ान खान को समझाते हुए कहा—

"इरफ़ान भाई! बुरा मत मानना, माँ जी की बातों का। वह तो बिना सोचे-समझे कुछ भी बोलती चली जाती हैं। दरअसल देश के बँटवारे के समय हुए दंगे में उनके एक रिश्तेदार मारे गए थे, यद्यपि उनकी मौत में प्रत्यक्ष रूप से मुसलमानों का कोई हाथ नहीं था परंतु उनके मन में यह बात तभी से घर किए हुए है कि यदि मुसलमानों की वजह से देश का बँटवारा न हुआ होता तो उनके वह रिश्तेदार अकारण नहीं मारे जाते।"

"कोई बात नहीं दोस्त। इन बातों में अब कुछ भी नहीं रखा है कि वर्षों पहले किसकी वजह से क्या हुआ था और किसकी वजह से क्या नहीं हुआ था। बीती बातों को भूलकर हमें घर-बाहर के लोगों के सामने ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करना होगा, जिससे अपने देश की धर्मनिरपेक्षता पर कभी कोई आँच न आने पाए। आखिर हम सभी एक ही खुदा के बंदे हैं। परवरदिगार ने हमें पहले एक इंसान के रूप में पैदा किया है। हिंदू, मुसलमानों आदि में तो हम बाद में खुद-ब-खुद ही बँटते चले गए हैं।"

इरफ़ान खान ने सिन्हा जी को समझाते हुए कहा था। सिन्हा ने भी माँ जी की तरफ से इरफ़ान से माफी माँगते हुए और उसकी बातों का समर्थन करते हुए उसे सीने से लगा लिया था।

शाम को सिन्हा जी बगैर माँ जी से बताए इरफ़ान के घर की दावत में पहुँच गए थे। वहाँ पर उनके दोस्त डिसूज़ा और

परमिंदर पहले से ही मौजूद थे। इरफ़ान खान ने शाकाहारियों के लिए अलग से खाने-पीने का इंतजाम कर रखा था। स्वादिष्ट भोजन का आनंद लेने के पश्चात सभी ने एक-दूसरे से गले मिलते हुए आपस में एक-दूसरे को बकरा-ईद की बधाई दी।

इस प्रकार चारों दोस्त जाति-धर्म से परे हटकर अपने-अपने त्योहार मनाते हुए एक-दूसरे के साथ अत्यंत प्रसन्नतापूर्वक जीवन बिता रहे थे।

उस दिन सिन्हा जी और उनकी पत्नी किसी रिश्तेदार की शादी में अहमदाबाद गए हुए थे कि बाथरूम में पैर फिसलने के कारण माँ जी बेहोश होकर गिर पड़ी थीं। सिन्हा जी का छोटा बेटा घर में था, पर वह कुछ समझ नहीं पा रहा था कि वह क्या करे। उसने परमिंदर और डिसूजा अंकल के यहाँ फोन मिलाया तो पता चला कि वो दोनों भी शहर से बाहर हैं। वह इरफ़ान अंकल को नहीं बुलाना चाहता था, क्योंकि वह जानता था कि दादी माँ उनसे कुछ ज्यादा ही छुआछूत की भावना रखती हैं, पर ऊपर वाले को शायद यही मंजूर था। अचानक न जाने कैसे इरफ़ान खान स्वयं ही सिन्हा जी के घर उनका हाल-चाल लेने आ पहुँचे थे। माँ जी की ऐसी हालत देखकर वह परेशान हो उठे। उन्होंने सिन्हा जी के बेटे को उन्हें इस बारे में तत्काल सूचित न करने के लिए झाड़ भी लगाई और फिर तुरंत ही फोन लगाकर उन्होंने अपनी बेगम साहिबा और अपने पारिवारिक डॉक्टर को वहीं बुला लिया था। काफी देर तक माँ जी का उपचार चला और अंततः उन्हें होश आ गया। इस बीच इरफ़ान और उनकी बेगम लगातार उनकी सेवा में लगे रहे। उपचार के दौरान ही डॉक्टर के कहे अनुसार उनकी बेगम साहिबा किचन में जाकर माँ जी के लिए मूँग की दाल की खिचड़ी भी बनाकर ले आई थीं। डॉक्टर साहब उन्हें माँ जी का विशेष ध्यान देने और कोई गड़बड़ी होने पर उन्हें तत्काल सूचित करने की कहकर वापस चले गए थे। डॉक्टर साहब ने अम्मा जी को हार्ट की कुछ प्रॉब्लम बताई थी। इरफ़ान खान ने स्थिति की नाजुकता को देखते हुए सिन्हा को भी फोन पर अम्मा जी के बीमार होने की सूचना दे दी थी। सिन्हा जी के आने तक दोनों दंपत्ति तन, मन और धन से माँ जी की सेवा में लगे रहे और उन सबके अथक प्रयास से माँ जी जल्दी ही ठीक होकर उठ बैठी थीं। जब माँ जी को पता चला कि उनके ठीक होकर खड़े होने में इरफ़ान खान और उनकी बेगम का अथक प्रयास रहा तो वह पसीज कर गद्गद हो उठी थीं और फिर उन्होंने दोनों को गले से लगाते हुए उनका माथा भी चूम लिया था। उस दिन के बाद से तो उस घर में इरफ़ान खान की चाँदी ही हो गई थी। दूसरी ओर सिन्हा जी के घर में दिन-प्रतिदिन उनके स्वागत सत्कार में बढ़ोत्तरी और उस घर में बेरोकटोक आने-जाने से इरफ़ान खान कई लोगों के आँखों की किरकिरी भी बनते चले गए थे और यहीं से उनके बुरे दिनों ने भी उन्हें न्योता दे दिया था।

**"पहले तो सिन्हा को इन बातों पर विश्वास ही नहीं हुआ, परन्तु जब प्रिंट और इलैक्ट्रॉनिक मीडिया इन घटनाओं के पीछे इरफ़ान खान और उनके साथियों का हाथ होने की लगातार पुष्टि करते रहे तो उनका मन भी इरफ़ान खान की ओर से फिर गया था। इरफ़ान खान की पोल पट्टी खुलने से डिसूजा और परमिंदर भी सकते में आ गए थे।"**

उस दिन शहर में आतंकी घटनाओं के चलते सिलसिलेवार कई बम क्या फटे, कई मुस्लिम संगठन और उनके सदस्य संदेह के घेरे में आ गए थे। इस हादसे में अनेक हिंदुओं सहित काफी सारे मुस्लिम व अन्य धर्म के लोग मारे गए थे। पुलिस के छापे में अनेक लोग पकड़े गए थे और उस दिन तो सिन्हा जी के पैरों तले से जमीन ही खिसक गई थी जब उन्हें पता चला कि विभिन्न आतंकी घटनाओं में संलिप्तता के चलते इरफ़ान खान और उनके कुछ साथियों को भी पुलिस ने हिरासत में ले लिया है। इरफ़ान के ये साथी कुछ ही महीने पूर्व कुछ महीनों के वीजा पर इस शहर में रहने आए थे और इरफ़ान खान ने अपने घर में ही ऊपरी मंजिल पर उन्हें रहने के लिए जगह दे दी गई थी। आसपास के लोगों को बस यही मालूम था कि इरफ़ान खान के ये दोस्त स्टडी टूर पर यहाँ आए हुए हैं। पहले तो सिन्हा को इन बातों पर विश्वास ही नहीं हुआ, परन्तु जब प्रिंट और इलैक्ट्रॉनिक मीडिया इन घटनाओं के पीछे इरफ़ान खान और उनके साथियों का हाथ होने की लगातार पुष्टि करते रहे तो उनका मन भी इरफ़ान खान की ओर से फिर गया था। इरफ़ान खान की पोल पट्टी खुलने से डिसूजा और परमिंदर भी सकते में आ गए थे। किसी को भी इस बात पर यकीन नहीं हो रहा था कि सबके बीच घुलमिल कर रहने व सदा मानवता और इंसानियत की बातें करने वाला इतना नीचे भी गिर सकता है। सिन्हा की माँ जी तो यह खबर सुनकर सुन्न सी हो गई थीं और वह बड़बड़ा उठी थीं—

"उसने तो झूठी सेवा व दिखावे से मेरी मति भी भ्रष्ट कर दी थी। मुआँ कितना प्यार और शराफत दिखाता था, पर मैं तो इन जैसे लोगों को पहले से ही जानती थी। न जाने कैसे मैं भी उसकी सेवा व शराफत पर रीझ गई थी।"

परमिंदर और डिसूजा को भी यद्यपि इन घटनाओं के पीछे इरफ़ान खान का हाथ होने पर आश्चर्य हो रहा था, परन्तु परिस्थितिजन्य साक्ष्यों को देखते हुए उनका दिमाग भी इरफ़ान खान की ओर से फिर गया था। इरफ़ान खान के हिरासत के चलते ही पुलिस भी उनके सभी मित्रों को अलग-अलग बुलाकर उनसे पूछताछ कर रही थी। इसके लिए सिन्हा, परमिंदर और डिसूजा को भी कई-कई बार थाने के चक्कर लगाने पड़े थे। तभी उन तीनों ने इरफ़ान खान से अपने सारे रिश्ते-नाते तोड़ लेने की प्रतिज्ञा भी कर डाली थी। दोस्त ही क्या इरफ़ान खान के तो नाते-रिश्तेदारों तक ने उनसे मुँह मोड़ लिया था। इस संवेदनशील मामले में लोग इरफ़ान

खान का नाम भी अपनी जुबान से लेना नहीं चाहते थे। सब तरफ से मुसीबतों का पहाड़ तो टूट ही पड़ा था, इरफ़ान खान को उनकी नौकरी से भी सस्पेंड कर दिया गया था। अगर कोई इरफ़ान खान के साथ था तो वह केवल उनकी बेगम साहिबा ही थीं, जो रात दिन एक करके इरफ़ान खान को पाक-साफ घर वापस लाने के लिए पुलिस और थाने के चक्कर-पे-चक्कर लगाए जा रही थीं। यद्यपि लोग उनकी भाग-दौड़ का भी मजाक उड़ाने में पीछे नहीं थे। सभी की जुबान पर बस एक ही बात थी, 'जैसी करनी वैसी भरनी।'

अचानक एक दिन पुनः शहर के भीड़-भाड़ वाले बाज़ार में जब एक शक्तिशाली बम फटा तो सारी स्थितियाँ ही पलट गईं। पुलिस के हाथ जो लोग लगे उनसे पता चला कि इन घटनाओं के तार सीधे पाकिस्तान से जुड़े हुए हैं और इन घटनाओं के पीछे किसी भी भारतीय का हाथ नहीं है। उन लोगों ने यह भी बताया कि आतंकवादियों ने अपने साथियों के जरिए ही चुपके से इरफ़ान खान के घर में आपत्तिजनक चीजें रख दी थीं। इरफ़ान खान को मोहरा बनाने के पीछे भी बस यही एक कारण था कि वह सभी इरफ़ान खान की धर्मनिरपेक्षता और उनके सभी धर्मों के साथ हिलमिल कर रहने के उनके मंसूबे पर पानी फेरना चाहते थे।

आज जब ईद के पाक मौके पर इरफ़ान खान को जेल से रिहा किया गया तो वह एकदम खामोश से थे। बढ़ी हुई दाढ़ी, पीला और निस्तेज चेहरा उनके भीतर के छिपे दर्द की कहानी साफ कह रहे थे। इरफ़ान अपनी बेगम को लेकर जब जेल से रिहा हुए तो बजाए अपने घर जाने के रास्ते से एक किलो मीठी सेवइयाँ खरीदते हुए सीधे सिन्हा जी के घर जा पहुँचे। जब उन्होंने सिन्हा जी के घर का दरवाजा खटखटाया तो बड़ी देर बाद दरवाजा खुला जरूर, परंतु इरफान खान और उनकी बेगम को देखकर पहले वहाँ सबके चेहरे पर जो रौनक नज़र आती थी, वह आज किसी के भी चेहरे पर नहीं दिखलाई पड़ी। इरफान खान व उनकी बेगम सेवइयों का डिब्बा मेज पर रखते हुए बिना किसी के कहने का इंतजार किए, चुपचाप सामने रखे सोफे पर पसर गए थे। उस दिन न किसी ने उन्हें ईद की मुबारकबाद दी और न ही उनसे कबूल ही की। अचानक उनकी आहट सुनकर माँ जी अपने कमरे से निकल कर बैठक में आईं, तो इरफान खान उनके पैरों से लिपटकर जोर-जोर से बच्चों जैसे विलाप करने लगे। परंतु माँ जी के ऊपर उनके विलाप का कोई असर नहीं हुआ और वह यूँ ही बुत बनी

**"सिन्हा जी ने आकर इरफ़ान खान को उठाकर चुप जरूर कराया, पर साथ में यह भी कह दिया कि आपको जेल से छूटते ही सीधे इस तरह से मेरे यहाँ नहीं आना चाहिए था। लोग हमारे बारे में न जाने क्या-क्या सोचेंगे।"**

खड़ी रहीं। सिन्हा जी ने आकर इरफ़ान खान को उठाकर चुप जरूर कराया, पर साथ में यह भी कह दिया कि आपको जेल से छूटते ही सीधे इस तरह से मेरे यहाँ नहीं आना चाहिए था। लोग हमारे बारे में न जाने क्या-क्या सोचेंगे।

"तो क्या तुम भी मुझे गलत समझते हो। भाई अब तो मुझे पुलिस से भी क्लीन चिट मिल गई है।"

इरफ़ान खान कातर दृष्टि से सिन्हा जी को निहारते हुए बोले।

"देखो इरफ़ान भाई, सच जो कुछ भी हो परंतु अब आपकी छवि ऐसी नहीं रही कि हम खुलेआम आपको अपने घर में बैठा सकें। अब हमारे जीवन में पहले वाली बात तो होने से रही। बेहतर यही होगा कि आप तत्काल यहाँ से चले जाएँ, इससे पहले कि यहाँ कोई और नई बात हो जाए।"

सिन्हा जी द्वारा कही गई इन बातों ने इरफ़ान खान को अंदर तक बींध कर रख दिया था। उनका चेहरा सफेद पड़ गया था। उन्होंने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि उन्हें अपने इस सबसे प्यारे दोस्त के घर में ये दिन भी देखना पड़ेगा।

इरफ़ान खान सिन्हा जी के घर जब भी आते उनका तकिया कलाम होता—

"भाभी जी एक बड़े गिलास में गरमा-गरम कॉफी हो जाए।"

और श्रीमती सिन्हा तुरंत किचन में जाकर कॉफी के इंतजाम में जुट जातीं। परंतु आज तो इरफ़ान खान के ऐसा बोलने की नौबत ही नहीं आई। अलबत्ता श्रीमती सिन्हा अनमने ढंग से अपने आप ही उठकर गैस पर कॉफी रखने चली गई थीं। परंतु यह क्या, जब तक वो कॉफी लेकर बाहर आतीं इरफान खान अपनी बेगम के साथ उदास मन से पैर पटकते हुए बाहर की ओर निकल गए थे। और फिर उसके बाद का सारा माज़रा सबके सामने था।

कुछ ही देर में कॉलोनी में चारों ओर सन्नाटा पसर गया था। सभी लोग अपने-अपने घरों की ओर प्रस्थान कर चुके थे। दोनों बच्चे अभी भी मम्मी और पापा के सीने से लगे रजाई में दुबके सिसक रहे थे। माँ जी एक कोने में पड़ी चारपाई पर निस्तब्ध-सी बैठी उस दीवार को निहारे जा रही थीं, जिस पर काफी समय से सिन्हा और खान परिवार के सभी सदस्यों की फोटो टंगी हुई थी। इस बीच थोड़ी-थोड़ी देर में वह अपना चश्मा उतार कर आँखों में उतर आए आँसुओं को भी धोती के कोर से पोंछ ले रही थीं। अचानक दरवाजे पर खट की आवाज़ हुई तो सिन्हा जी को लगा मानो इरफ़ान खान पुनः वापस लौट आए हों और दरवाजा खोलने के लिए उन्हें पुकार रहे हों। श्रीमती सिन्हा का ध्यान भी अचानक टूट गया था। उन्हें भी पल भर को ऐसा लगा मानो इरफ़ान खान ड्राइंग रूम में आकर सोफे पर पसर गए हों और उनसे कह रहे हों—

"अरे, भाभी जी जल्दी से जाकर एक बड़े गिलास में गरमा-गरम कॉफी तो लेकर आइए, बड़ी जोर की तलब लग रही है।"

परंतु शीघ्र ही उन दोनों का भ्रम टूट गया था। इरफ़ान दंपत्ति अब वहाँ, कहाँ लौटकर आने वाले थे?

# पूजा

आज फिर झुमरू ने अपनी पत्नी कमला को झकझोरते हुए उसका आँचल पकड़कर उससे दिनभर की कमाई छुड़ा ली थी। कमला ने भी पूरी कोशिश की थी अपनी कमाई बचाने की, पर वह असफल रही थी। झुमरू ने उसे ऐसा धक्का मारा कि उसका सिर दीवार में जा लगा और सिर से खून बहने लगा। वह चीख पड़ी और सिर को जोर से दबाने की कोशिश करने लगी। झुमरू इन बातों से बेखबर उसके पैसे लेकर निकल पड़ा शराब के ठेके की ओर। आज कमला व्रत से थी। अभी उसे पूजा की तैयारी भी करनी थी। कमला ने सोचा था कि आज की कमाई से वह घर का कुछ राशन-पानी व व्रत का सामान ले आएगी, पर अब वह क्या करती। कैसे वह पूजा करेगी और वह आज बच्चों को क्या खिलाएगी, यही सोचते-सोचते वह अपनी सहेली गीता से कुछ रुपए उधार लेने उसके घर पहुँच गई। गीता ने भी उसकी परेशानी को समझते हुए उसे रुपए दे दिए।

कमला बाज़ार से राशन व अन्य सामान लाकर रसोई में खाना बनाने व पूजा की तैयारी करने लगी। कुछ ही देर में नशे में लुढ़कता झुमरू, "कमली...कमली...कहाँ मर गई है तू..." चिल्लाता हुआ घर में आ धमका। अंदर आकर वह शराब की बोतल मुँह से लगाए जोर से चिल्लाया, "जल्दी खाना दे, करमजली, मुझे जोरों की भूख लगी है।" इस पर कमला ने शांत भाव से उससे कहा, "खाने में थोड़ी देर लगेगी अभी मुझे पूजा भी करनी है।" "अभी देर लगेगी... और किस बात की पूजा, मैं भूख से मरा जा रहा हूँ और तुझे पूजा की पड़ी है?" यह कहते हुए वह उस पर बुरी तरह से टूट पड़ा। अंत में उसे पीटते-पीटते वह थक कर नशे की हालत में ही एक ओर लुढ़क गया।

काफी देर बाद उसे होश आया तो उसने अपने आपको पूजा घर में पाया। कमला पूजा की तैयारी में लगी हुई थी।

"क्यों री, क्या करने जा रही है, कुछ खिलाएगी नहीं, जोरों की भूख लगी है।" वह फिर गुर्राया।

"बस पाँच मिनट और रुक जाओ, अभी खिलाती हूँ। जरा पूजा हो जाने दो... आज करवा चौथ का मेरा व्रत है ना..." शांत भाव से जवाब देकर कमला फिर से पूजा के कार्यों में लग गई। झुमरू उसका मुँह निहारता रह गया था।

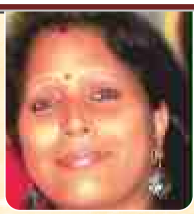

**शशि श्रीवास्तव**

'हम साथ-साथ हैं' पत्रिका की संपादक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के लिए सतत् लेखन।

**संपर्क :**
shashi.srivastava49@gmail.com

# कजरी पर्व पूर्वांचल के लोक जीवन का प्रतिरूप

**ब्रजराज सिंह**

बी.ए., एम.ए. (हिन्दी) और फिर "मनन द्विवेदी 'गजपुरी' और उनका साहित्य" विषय पर पी.एच-डी (2009) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी से। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित। 2009 से शोध पत्रिका 'वीक्षा' का संपादन। साहित्य अकादमी, दिल्ली के लिए मनन द्विवेदी पर विनिबंध लेखन।

**संप्रति :**
हिन्दी विभाग, दयालबाग एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, दयालबाग, आगरा-282005

**संपर्क :**
brizbhu@gmail.com


सावन के महीने में पूर्वांचल के क्षेत्र में कजरी पर्व मनाया जाता है। इस अवसर पर जगह-जगह मेला भी लगता है। खासतौर से बनारस और मिर्जापुर में यह पर्व बहुत ही उल्लास और उत्सवधर्मी तरीके से मनाया जाता है। यह मुख्य रूप से महिलाओं का त्योहार है। इस अवसर पर महिलाएँ रतजगा करती हैं। रात भर कजरी के गीत गाए जाते हैं। हिंदुस्तानी संगीत में भी कजरी का विशेष महत्त्व है। कजरी सिर्फ गाई ही नहीं जाती है बल्कि खेली भी जाती है। इसका संबंध सावन के महीने से है। सावन भर कजरी के गीत पूर्वांचल के विभिन्न हिस्सों में खूब गाए जाते हैं। नई ब्याहता स्त्रियाँ पहला सावन अपने मायके में बिताती हैं। पेड़ों पर झूले लग जाते हैं। लड़कियाँ महिलाएँ अपनी-अपनी सहेलियों के साथ झूला झूलती हैं और कजरी के गीत गाती हैं।

भारतीय समाज में महिलाओं की दोयम दर्जे की नागरिकता किसी से छुपी नहीं है। घर की चारदीवारी के भीतर उनके पास मनोरंजन और अभिव्यक्ति के साधन बहुत सीमित हैं। ऐसे में इस तरह के पर्व-त्योहार उन्हें जीवनदान जैसा लगता है। आज भी इस पर्व की लोकप्रियता उसी तरह बरकरार है। कजरी की रात को गाँवों में मुहल्ले की महिलाएँ किसी एक जगह इकट्ठा होकर जलेबी बनाती हैं और खाती हैं। जलेबी कजरी माई को चढ़ाई भी जाती है। कस्बे और बाज़ारों में इस दिन दुकानें रातभर खुली रहती हैं। दुकानों पर जलेबा (बड़ी जलेबी) बनता है। रातभर खूब चहल-पहल रहती है। यूँ तो कजरी पूरे सावन के महीने में गाई जाती है, लेकिन इस रात विशेष रूप से। कजरी का क्षेत्र मुख्य रूप से बनारस और

मिर्जापुर है। बनारस (काशी) और मिर्जापुर दोनों जिलों का ऐतिहासिक महत्त्व रहा है। मिर्जापुर का कुछ इलाका काशी नरेश के राज्य में ही आता है। इन गीतों को कजरी कहे जाने के पीछे भी सावन महीने के काले बादल ही माने जाते हैं।

कजरी का जन्म कहाँ और कब हुआ, यह कह पाना कठिन है। फिर भी हम कह सकते हैं कि कजरी का उद्‌गम स्थल मिर्जापुर ही है, क्योंकि इतनी धूमधाम से कजरी और कहीं नहीं मनाई जाती। लेकिन कजरी के गीतों को संगीतबद्ध करने और उसे राग-रागिनियों से संबद्ध करने का काम बनारस में हुआ। कजरी गीतों की रचना काशिका (काशी प्रांत की भाषा) में ही मिलती है। पहले पहल यह ग्रामीण इलाकों में फैली, फिर व्यापारी और सामंत वर्ग ने भी इसे हाथोंहाथ अपनाया। कजरी पर्व की शुरुआत नागपंचमी के दिन कजरहिया तालाब से होता था। शायद इसलिए भी इसे कजरी कहते हैं। इसकी लोकप्रियता को देखते हुए एक बहुत बड़े व्यापारी ने नर्तकियों से अपनी महफिल में कजरी गाने को कहा। यहीं से इस गीत में अभिजात्यता आने लगी। बाद में यह काशी नरेश के किले तक पहुँची। कजरी का मेला देखने काशी नरेश खुद मिर्जापुर तक आते थे। कजरी मेले का अंत काशी नरेश की सवारी से ही होता था। आज भी नागपंचमी के दिन इन क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के खेल-कूद का आयोजन कराया जाता है। मुख्य रूप से कुश्ती के दंगल खूब आयोजित किए जाते हैं। इसी दिन महिलाएँ कजरहिया तालाब तक आती थीं और वहाँ से जयी ले जाकर घर पर लगाती थीं। वही जयी भादों की दूसरी/तीसरी रात को नाचते-गाते रतजगा करते उसी कजरहिया तालाब में बहा आती थीं। वहाँ ढुनमुनिया भी खेलती थीं। ढुनमुनिया एक देशज नृत्य शैली है, जिसमें कमर के ऊपरी हिस्से को मोड़कर समूह में नृत्य किया जाता है। कजरी तीज, हरियाली तीज और हरितालिका तीज के मध्य भाद्र कृष्ण तृतीया को पड़ती है। गौरतलब है कि मिर्जापुर विंध्य धाम के लिए भी प्रसिद्ध है। देवी के शक्तिपीठों में से विंध्याचल की विशेष महत्ता है। यही दिन विंध्याचल देवी की जयंती के रूप में भी मनाया जाता है। इसलिए भी इस रात मिर्जापुर में पर्व का माहौल रहता है। काशी नरेश भी इस अवसर पर मंदिर में उपस्थित होते थे। मिर्जापुर से कजरी के संबंध को खुद एक कजरी ही व्यक्त कर देती है—

दसमी राम नगर कै जाहिर, कजरी मिरजापुर सरनाम।
राम नगर में काशी के राजा, मिरजापुर जयराम।

रामनगर काशी प्रांत का हिस्सा है। बनारस में गंगा के उस पार रामनगर स्थित है। यहीं काशी नरेश का किला है। यहाँ आज भी विश्वप्रसिद्ध रामलीला खेली जाती है। यूनेस्को ने इसे विश्व धरोहर में शामिल किया है। दशहरे के दिन यहाँ आज भी बहुत बड़ा मेला लगता है और आसपास के लोग इकट्‌ठा होकर दशमी का त्योहार मनाते हैं। काशी नरेश भी इसमें शामिल होते हैं। गौरतलब है कि हमारे दूसरे प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री उसी रामनगर के रहने वाले थे। उपरोक्त कजरी के जयराम जी वही व्यापारी थे, जिन्होंने इसे लोकप्रिय

बनाया और शास्त्रीयता दी। धीरे-धीरे यह पर्व का रूप लेता गया। मिर्जापुर में ही अनेक जगहों पर मेले लगने लगे। कजरी का त्योहार और गीत दोनों भोजपुरी जनता के उल्लास और जिजीविषा की कहानी कहते हैं।

इस अवसर पर गाए जाने वाले कजरी गीतों के विषय बहुत दिलचस्प और विविधता से भरे हुए हैं। इसमें कहीं पारिवारिक रिश्तों की जीवंतता खास तौर से ननद-भौजाई की नोक झोंक है, तो कहीं बहुत ही सूक्ष्म और सचेत रूप से उपनिवेशवाद का विरोध भी है। सामाजिक शोषण और राजनीति पर व्यंग्य भी है। इसमें दाम्पत्य जीवन का प्रेम और विश्वास है। इसमें ग्रामीण सौंदर्य है।

यह बनारस और मिर्जापुर में एक साथ क्यों मनाया जाता है इसको लेकर एक कहानी भी है। इस कजरी गीत के पीछे दिलचस्प कथा है। प्राचीन समय से बनारस धर्म-संस्कृति, साहित्य, कला और संगीत का केंद्र रहा है। संगीत को लोकप्रिय और आगे बढ़ाने की गुरुतर जिम्मेदारी रूपजीवाओं के पास थी। बनारस में गंगा किनारे एक गली है जिसका नाम कचौड़ी गली है। बनारस गलियों का शहर है। बनारस की जीवंतता का स्रोत उसकी गलियाँ ही हैं। एक रूपजीवा स्त्री की एक सामंत से आशनाई थी। सामंत प्रतिदिन उसके ठिकाने पर गीत सुनने आता था। कुछ दिनों के बाद किसी कारणवश सामंत को बनारस छोड़कर मिर्जापुर में जाकर रहना पड़ा। उनके जाने से वह गली उसे सूनी-सूनी लग रही है। उनके बिरह में उस रूपजीवा स्त्री ने एक कजरी गीत गाया, जिसके बोल कुछ इस प्रकार थे— “मिर्जापुर कइला गुलजार हो कचौड़ी गली सून कइला बलमू।” इसी गीत के अंत में एक पंक्ति आती है— “हथवा में हमरे जे होत कटरिया बहा देतीं गोरवन के खून हो।” स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने वाले क्रांतिकारियों पर अनेक कजरी गीत सुनने को मिलते हैं। आरा के वीर कुँवर सिंह और उनके भाई अमर सिंह के बलिदानों को आधार बनाकर अनेक लोकगीत प्रचलित हैं। इसमें कई गीत कजरी के रूप में भी हैं। लोक अपने नायकों का महिमामंडन जितने जोर-शोर से करता है; खलनायकों की उतनी ही मलामत भी करता है।

भोजपुरी लोकगीतों की यह विशेषता रही है कि बेहद निजी और ग्रामीण परिवेश के बावजूद उनमें औपनिवेशिक शासन के प्रति विद्रोह भाव दिखाई देता है। हिन्दी प्रदेश भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की अगुआई कर रहा था। उसकी प्रतिध्वनि उसके लोकगीतों में भी दिखाई देती है। भोजपुरी गीतों में विस्थापन का दर्द भी बहुत ही मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त होता आया है। भोजपुरी इलाके हमेशा से विस्थापन का दंश झेलने के लिए अभिशप्त रहे हैं। वहाँ से कोलकाता और अन्य जगहों पर भारी संख्या में लोग विस्थापित हुए हैं। रोजी-रोटी की तलाश में यहाँ से युवाओं का विस्थापन देश में ही नहीं, बल्कि विदेशों में भी हुआ है। मॉरीशस, त्रिनिदाद, फिजी, सूरीनाम आदि कई देशों में लोग गिरमिटिया बनके गए हैं। उनके विस्थापन और शोषण की कहानी बहुत ही मार्मिक है। मिर्जापुर का चुनार व्यापारिक और सामरिक मामले में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रखता था। गंगा में चलने वाले जलपोतों के लिए वह बंदरगाह का काम करता था। यहीं कजरी के बोल व्यष्टि से समष्टि की ओर रुख कर जाते हैं। अब यह समस्या सिर्फ नायिका की नहीं, बल्कि पूरे प्रदेश की है। पूरा गीत इस प्रकार है :

मिर्जापुर कईला गुलजार हो, कचौड़ी गली सून कईला बलमू
सेजिया पे लोटे काला नाग हो, कचौड़ी गली सून कईला बलमू
एही मिर्जापुर से उड़े ले जहजिया हो गुइया,
सैंया चली गईले रंगून हो, कचौड़ी गली सून कईला बलमू
पनवा से पातर भईल तोर धनिया,
देहिया गलेला जैसे नून हो, कचौड़ी गली सून कईला बलमू
हथवा में हमरे जे होत कटरिया,
बहा देती गोरवन के खून हो, कचौड़ी गली सून कईला बलमू

यूँ तो कजरी में अनेकानेक भावों की अभिव्यक्ति हुई है, परंतु एक कजरी जो आज भी खूब प्रसिद्ध है– "कइसे खेले जइबू सावन में कजरिया, बदरिया घिर आई ननदी।" इससे यह भी प्रमाणित होता है की कजरी सिर्फ लोकप्रिय गायन विधा ही नहीं है, बल्कि उसका संबंध किसी पर्व, उत्सव और मेले-ठेले से भी है। कजरी मुख्य रूप से स्त्री गीत है। इसमें एक स्त्री अपनी किशोरवय ननद से कहती है कि कजरी खेलने अर्थात कजरी के मेले में कैसे जाओगी। रास्ते में गुंडे तुम्हें घेर लेंगे। छेड़छाड़ करेंगे। तुम्हारा रास्ता रोक लेंगे। अपनी भाभी

के इस व्यंग्य और कटाक्ष का जवाब वह लड़की बड़े ही आत्मविश्वास और निडरता के साथ देती है। वह कहती है कि उनमें से बहुत सारे मारे जाएँगे और जो बचेंगे वे जेल भेजे जाएँगे।

कइसे खेले जइबू सावन में कजरिया, बदरिया घिर आई ननदी
एक त जात हऊ अकेली, कवनो संग न सहेली
गुंडा घेरी लिहें तोहरी डगरीया, बदरिया घिर आई ननदी
कुछ त डामल फाँसी चढ़िहें, कुछ त गोली खाके मरीहें
कुछ त पीसे जइहें जेहल में चकरिया, बदरिया घिर आई ननदी

कुछ इसी तरह का भाव एक अन्य कजरी में भी देखने को मिलता है। यह बहुत ही लोकप्रिय कजरी है। सबकी जुबान पर होती है। बनारस में सिगरा के पास एक हवेली है, जो आज भी वहीं स्थित है। उसमें शायद कभी मेहंदी का बाग हुआ करता था। दाम्पत्य जीवन और स्त्रियों के साज-शृंगार में मेहंदी का अहम किरदार होता है। एक स्त्री अपने पति से कह रही है कि वह उसके लिए उसी मोतीझील से मेहंदी ला दे। वह उस पर दबाव डाल रही है और यह भी कह रही है कि इसमें यदि कोई खतरा भी हो तो उसे डरना नहीं चाहिए। वह जो मेहंदी लाएगा, उसे ही वह अपने हाथों पर लगाएगी। वह पति को आश्वस्त भी करती है यदि बागबान पकड़ लेगा तो वह वकील करके उसे छुड़ा लेगी।

पिया मेंहदी लिया दा मोतीझील से, जाके साइकिल से ना
पकड़ लेई बागबान सजा होई जे चलान
तोहके लड़ के छोड़ाइब हम वकील से

लोकगीतों की रचना सामूहिक होती है। इसमें स्वाभाविकता और प्रवाह बहुत अहम होता है। इसमें पांडित्य का प्रदर्शन नहीं चलता। इसीलिए जब-जब कोई इस प्रक्रिया में व्यावधान उपस्थित कर लोकगीत की रचना करना चाहता है, तो उसके लिए सफलता के अवसर कम होते हैं। ऐसे गीत लोगों की जुबान पर नहीं चढ़ते। इस तरह के प्रयास अनेक लोगों ने समय-समय पर किए हैं। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने भी कजरी गीत लिखे हैं, लेकिन उन्हें लोक ने अपने मानस में जगह नहीं दी। लोकगीत एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित होते हैं। ऐसे में उनके पाठ में भेद मिलना स्वाभाविक है। ऊपर के गीतों के भी कई पाठ मिलते हैं। यह ऐसा पर्व है, जो संगीत की दुनिया में भी अपना खास मुकाम रखता है। भोजपुरी लोकगीतों में हास-परिहास के माध्यम से अभिजात्यता और खोटी नैतिकता पर लगातार चोट की गई है। यहाँ प्रतिरोध की जन संस्कृति विकसित है। इन स्वतः स्फूर्त अभिव्यक्तियों से असभ्य, गँवार और अंधविश्वासी कहे जाने वाले लोगों के जबर्दस्त 'कॉमन सेंस' का पता चलता है। इन गीतों में परम्परा का अनुभव बोलता है। कजरी के गीत और पर्व मनुष्य के प्रकृति के साथ रिश्ते को भी व्याख्यायित करते हैं। उपभोक्तावादी समय में अपनी संस्कृति और स्थानीयता को बचाकर रख पाना बेहद ही कठिन काम है; फिर भी यह कठिन काम हमारे ग्रामीण अंचल के लोगों ने अपने कंधों पर उठा रखा है। वे काल से होड़ लगा रहे हैं।

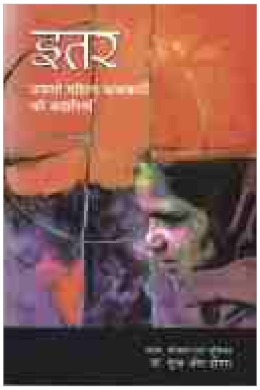


*समीक्षक* : **डॉ. रमेश तिवारी**

**इतर (कहानी-संग्रह)**

*हिन्दी चयन, संपादन एवं भूमिका* :

**डॉ. सुधा ओम ढींगरा**

*प्रकाशक* : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, *संस्करण* : 2015, *पृष्ठ* : 264, *मूल्य* : रु. 270/-

# समकालीन प्रवासी महिला लेखन की एक बानगी है 'इतर'

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली ने प्रवासी महिला कहानीकारों की कहानियों को 'इतर' शीर्षक से प्रकाशित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। डॉ. सुधा ओम ढींगरा ने संग्रह के लिए कहानियों का चयन, संपादन के साथ-साथ भूमिका लिखने का महत्त्वपूर्ण कार्य भी किया है। इस संग्रह में कुल 21 कहानियों का संकलन किया गया है।

अमेरिका में रह रहीं पुष्पा सक्सेना की कहानी 'उसके हिस्से का पुरुष' में प्रेम संबंधों में किसी तीसरे की उपस्थिति मात्र से उत्पन्न तनाव को जिया गया है। ऐसे प्रेम संबंधों की जटिलताओं को लेखिका ने बड़ी ही बारीकी से समझते हुए पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। साहित्य अपने समय और समाज से निरपेक्षता में नहीं, बल्कि सापेक्षता में ही रचा जाता है। प्रमाणस्वरूप हम अंशु जौहरी की कहानी को देख सकते हैं। अमेरिका में अल्जायमर के मरीजों की बढ़ती संख्या ने कहानीकार अंशु जौहरी को इतना द्रवित और विचलित किया है कि इन्होंने 'एक निर्विकार' शीर्षक कहानी रचकर इस रोग से उत्पन्न होने वाली पीड़ा और त्रासद स्थितियों को ही अपनी रचनात्मकता का विषय बना डाला है और न सिर्फ विषय बनाया, बल्कि बड़ी ही बारीकी से उसके एक-एक पक्ष को पाठकों के समक्ष रखने में सफल भी रही हैं। 'यों ही चलते हुए' पूर्णिमा वर्मन द्वारा शारजाह के प्राकृतिक सौंदर्य और जीवन पर केंद्रित कहानी है, तो पश्चिमी देशों की सभ्यता-संस्कृति को केंद्र में रखकर ब्रिटेन की नीना पॉल की कहानी 'आखिरी गीत' रची गई है। 'आखिरी गीत' कहानी में रिश्तों और हमारे संबंधों के साथ-साथ संगीत, आनुवंशिकता आदि की परतों को भी लेखिका ने कहीं-कहीं स्पर्श करने की कोशिश की है। जकिया जुबेरी की कहानी 'साँकल' पश्चिमी दुनिया के परिवेश में माँ-बेटे के संबंधों की पड़ताल करती है। रंग, जाति, क्षेत्र, धर्म, भाषा पर आधारित समाज हमारे पिछड़े होने अथवा परम्परावादी होने का प्रमाण है। सामान्यतया आज की पीढ़ी इन बातों में विश्वास नहीं करती। किंतु किसी ज़माने में ये हमारे जीवन की गतिविधियों में निर्णायक भूमिका निभाते थे। समय के साथ-साथ मनुष्यों की सोच में भी बदलाव आता है। इस परिवर्तन के कारण ही पीढ़ियों के अंतराल में विचारों के अंतराल भी दिखाई देने लगते हैं। ये अंतराल कभी-कभी परिवारों और समाज में टकरावों का भी कारण बनते हैं। इस दृष्टि पर आधारित कुछ कहानियों में शैल अग्रवाल की कहानी 'विच' और अर्चना पेन्यूली की कहानी 'कठिन चुनाव' महत्त्वपूर्ण हैं। परम्परा-आधुनिकता जब आमने-सामने एक दूसरे का रास्ता रोक लें तो तनाव स्वाभाविक है। इसी तनाव को लेखिकाओं ने अपनी कहानियों में बुनते हुए रचनात्मकता के सहारे प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। थोड़े-थोड़े परिवेशगत अंतर के बावजूद इन दोनों कहानियों के पीछे की मूल भावना लगभग एक जैसी ही प्रतीत होती है। इसी प्रकार एक माँ जब अपने बच्चों के लिए पूरी पितृसत्तात्मक व्यवस्था से लोहा लेने के लिए खड़ी हो जाती है, तो शैलजा सक्सेना की कहानी 'उसका जाना' की रचना सम्भव होती है। स्त्री के योद्धा रूप को दर्शाती यह कहानी लम्बे समय तक पाठकों के मन-मस्तिष्क पर अपना प्रभाव छोड़ने में सक्षम है। सुधा ओम ढींगरा का 'नई लकीरें खींचती कहानियाँ' शीर्षक के अंतर्गत यह कथन उल्लेखनीय है कि, "इस संग्रह की कहानियाँ विदेश की भूमि से उपजे अनुभव और यथार्थ को समेटे हैं, ...ये कहानियाँ किस्सागोई से भरपूर हैं। कथ्य, शिल्प और बुनावट में बेजोड़ हैं।"

मुझे जिस कहानी ने सर्वाधिक बेचैन किया, उसका शीर्षक है 'आंत्रप्रेन्योर', उषा राजे सक्सेना की यह कहानी अत्यंत मर्मस्पर्शी है। इस कहानी को पढ़ते हुए मुंशी प्रेमचंद याद आते रहे हैं। प्रेमचंद की महत्त्वपूर्ण कहानी है–'बड़े घर की बेटी'। उस कहानी का आखिरी वाक्य है, "बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं। बिखरता घर भी टूटने से बचा लेती हैं।" इस कहानी में भी ऐसा ही कुछ घटित होता है। समकालीन समस्याओं से बचकर निकलना आज की महिला की फितरत नहीं है। वह समस्याओं से दो-दो हाथ करते हुए उनके बीच से अपने जीवन का रास्ता निकलने में विश्वास रखती है। इस दृष्टि से ये आधुनिक युग की स्त्री है जो पुरुष की अनुगामिनी नहीं सहगामिनी की भूमिका का निर्वहन करती है और कहीं-कहीं तो बखूबी नेतृत्व भी करती दिखाई देती है। इस दृष्टि से इस कहानी को भी एक बेहतरीन उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है। जब इस कहानी की नायिका तिश अपने पति के दुर्घटनाग्रस्त होने की खबर अपने ससुर (नायक के पिता जो विदेश में पत्नी के साथ रह रहे हैं और बहू तिश को बहुत पसंद नहीं करते हैं) को देते हुए उन्हें मुंबई आ जाने के लिए कहती है और उनकी यात्रा संबंधी सारी आवश्यक व्यवस्था पहले ही कराते हुए पर्याप्त दृढ़ता और सूझ-बूझ के साथ अपनी जिम्मेदारियों का निर्वाह करती है, उस वक्त ऐसा लगता है जैसे इस कहानी को रचते हुए

प्रेमचंद की 'बड़े घर की बेटी' कहानी का प्रभाव निश्चय ही लेखिका के मन-मष्तिष्क पर रहा होगा।

सुधा ओम ढींगरा की एक कहानी भी इस संग्रह में शामिल है– 'बेघर सच।' इस कहानी में स्त्री-पुरुष संबंधों और उन संबंधों में स्त्री के अस्तित्व, अस्मिता और समता की पड़ताल की गई है। इस कहानी की कथा मात्र इतनी-सी है– रंजना नामक एक स्त्री के चरित्र के प्रति सशंकित पति संजय नाराज होकर कटु वचन बोलते हुए उससे सच जानना चाहता है। यहीं से कथा का आरम्भ दिखाया गया है। बीच-बीच में कथा में अतीत की घटनाएँ भी प्रस्तुत की जाती हैं, कभी संवादों के सहारे कभी परोक्ष रूप में। इस कथा में दादी, नानी, चाची और रंजना के बहाने स्त्री जाति की तीन पीढ़ियों की वैचारिक भिन्नता को भी भली-भाँति दिखाया गया है। दादी, नानी जहाँ परिवार में बेटियों को बेटों के बराबर स्थान देने के खिलाफ हैं, वहीं माँ ने इन मान्यताओं से असहमत होकर भी शील-संकोचवश कभी मर्यादा नहीं तोड़ी है। जब बेटी रंजना इन मान्यताओं को कुतर्क कहती है तो उसे जवाब मिलता है–"यह कुतर्क नहीं वेदों-पुराणों में लिखा है।" (पृष्ठ 80) बुजुर्ग स्त्रियों की नज़र में बेटियाँ 'पराया धन' हैं। माँ इस मुश्किल घड़ी में रंजना को ढाँढस बँधाते हुए कहती है– "पहले पढ़-लिखकर अपने पाँव पर खड़ी हो जाओ, फिर हक की लड़ाई लड़ना।" (पृष्ठ 80) माँ अपनी बेटी का विवाह बहुत सोच-समझकर संजय से करती है। आरम्भिक वर्षों में तो दोनों का दाम्पत्य जीवन भी ठीक ही व्यतीत होता दिखाई देता है। माँ भी बेटी रंजो के सहयोग और स्नेह से मूर्तिकला के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा को निखार तथा प्रदर्शित कर पाती है। किंतु माँ-पिता के निधन के बाद बेटे तो माँ की सारी निशानियों को कूड़े में फेंक देते हैं और इधर रंजना भी नौकरी करते हुए अपने पति के शक का शिकार हो जाती है। दोनों के बीच जीवन में नीरसता के बढ़ते दायरे से उत्पन्न रिक्तता के कारण एक मूर्तिकला विशेषज्ञ एम. सदोष का सान्निध्य रंजना को मिलता है, किंतु उन दोनों में प्रेमसंबंध अथवा नाजायज संबंध जैसी कोई बात नहीं है। शुरुआती दिनों में रंजना स्वयं इसके बारे में पति संजय को बताती रहती है, किंतु तब संजय अपने काम में इतना व्यस्त रहता था कि उसे इन बातों को सुनने की न तो रुचि थी और न समय ही। संजय के बढ़ते शक के दायरे से हैरान-परेशान रंजना के पास स्वयं को पति से अलग करने के अतिरिक्त कोई रास्ता ही नहीं बचा है। यह अलग होना भी उसकी इच्छा के अनुरूप नहीं, बल्कि पति द्वारा घर से उसके निष्कासन का परिणाम है। क्योंकि घर का मालिक पति संजय है। विवाह से पूर्व माता-पिता के घर के मालिक भाई हो गए और विवाह के बाद घर पति का हो गया। स्त्री का कहीं कुछ भी नहीं। न मायके में, न ही ससुराल में। पहले घर पिता का, भाई का और बाद में विवाह के उपरांत ससुर का या पति का। स्त्री का पूरा जीवन घर के बिना ही बीत जाता है। इसलिए यह कहानी स्त्री को बिलकुल ठीक ही 'बेघर सच' के रूप में दिखाती है। जब रंजना पति द्वारा घर से निकाले जाने पर अपना घर लेकर उसमें रहना शुरू करती है तो सोचती है, "आज घर तो उसका है पर माँ नहीं।" (पृष्ठ 88) सदियों से चली आ रही गैरबराबरी आधारित इस दुनिया के तमाम विकास और बड़े-बड़े वादों पर एक चुभता सवाल है यह कहानी। उनकी इन पंक्तियों का मर्म पाठक के मर्म को छूने में सफल है "नारी के भीतर तो प्यार के झरने बहते हैं, माँ, बहन, बेटी, पत्नी, प्रेमिका बन बस सब पर प्यार ही लुटाती है। पुरुष प्रेम और नारी के इस संबंध को कभी समझना नहीं चाहता। तभी हर युग में अहल्या और सीता दोनों मिलती हैं।" (पृष्ठ 87) इसी प्रकार शुचिता और पवित्रता को लेकर लेखिका ने जो विचार प्रस्तुत किए हैं वह उसके ज्ञान की गहराई और अभिव्यक्ति कौशल की व्यापक दृष्टि का एक बेहतरीन प्रमाण है। 'बेघर सच' कहानी हमें गहरे तक प्रभावित करती है।

## कहानी के नव स्वर

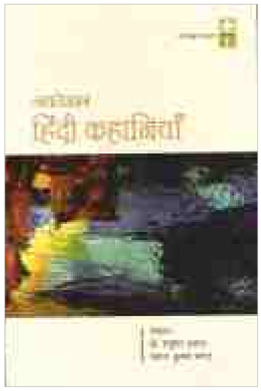


*समीक्षक* : **आदित्य कुमार पाण्डेय**
*संपादक* : **प्रो. शत्रुघ्न प्रसाद, अरुण कुमार भगत**
*प्रकाशक* : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली।
*पृष्ठ* : 170, *मूल्य* : रु. 175/-

भारतीय पुस्तक न्यास द्वारा प्रकाशित हिन्दी कहानियों की एक अद्भुत 'नवलेखन माला' 'नवलेखन हिन्दी कहानियाँ' हैं, जिसमें आधुनिक समाज का साफ प्रतिबिम्ब बनाती पचीस कहानियों को एक साथ संग्रहित किया गया है। इस नवलेखन माला का संपादन प्रो. शत्रुघ्न प्रसाद और अरुण कुमार भगत ने किया है। इस पुस्तक की प्रत्येक कहानी आधुनिक समाज और उस समाज में घटित जीवंत घटनाओं का प्रतिबिम्ब बनाती है। नवलेखन माला में नवलेखकों को अपने हुनर आजमाइश का पूरा अवसर होता है, उस मौके का हर नवलेखक ने पूरे सौ प्रतिशत उपयोग किया है। कहानी में गजब के शब्दविन्यासों का चुनाव किया गया है, साथ ही हर मुद्दे को इस तरह से व्यक्त किया गया है कि मौके पर मौजूद प्रत्यक्षदर्शी भी ऐसा बयाँ न कर पाए। आधुनिक जमाने के ज्यादातर एकल परिवारों में माँ-बाप की अपने ही बच्चों से बन रही दूरियों, खूनी रिश्तों में बढ़ रहे स्वार्थ, बेटा-बेटी में भेदभाव जैसे तमाम प्रभावशाली मुद्दों को बड़े मार्मिक ढंग से पन्नों पर उतार दिया गया है।

नवलेखन माला की पहली कहानी 'ग्रे' अनिल चतुर्वेदी ने लिखी है। कहानी को बिल्कुल आधुनिक लेखन विधा में प्रस्तुत किया गया है। इसमें लेखक ने एक बेटे का पिता के साथ स्वार्थ का हू-ब-हू स्वरूप प्रस्तुत किया है। माँ-बाप जिनका अति पुत्र मोह ही उनके गले की फाँस बन जाता है और जीवन के अंतिम क्षणों में उन्हें बेटा-बेटी में

बराबरी की अनुभूति होती है। तो वहीं पुत्र माता-पिता के प्रति अपने दायित्वों का निर्वहन करना तो दूर केवल उनके द्वारा अर्जित संपत्ति को अकेले ही पा लेना और हमेशा के लिए उनसे मुँह मोड़ लेना चाहता है। बेटी जो परम्पराओं और विसंगतियों के फाँस में लिपटी हर बार की तरह इस बार भी तड़फड़ाती ही रह जाती है। चूँकि वह पुत्री है जिसका पिता खुले आसमान के नीचे दम तोड़ देना उचित समझता है, पर उसके लिए बेटी के घर का पानी पीना भी बहुत दूर की बात है।

दूसरी कहानी 'पता बदल गया है' को सारिका कालरा ने लिखा है। आज के अति व्यस्ततम और अतिसुव्यवस्थित दिनचर्या के बीच किस तरह से दो युगल वैवाहिक जीवन को आगे बढ़ाते हैं, इसे विषय के बतौर चुना है। लेखिका ने अपने महिला होने का भरपूर लाभ उठाया है, वरना एक स्त्री के मनोभावों को इतनी गहराई से समझाना और उसे पृष्ठबद्ध करना मामूली बात नहीं है। पूरी कहानी एक के बाद एक दृश्य बनाती आपस में जुड़ती हुई आगे बढ़ती है।

अगली कहानी 'हयात शहर और एक नज्म लड़की' डॉ. सुभाष जॉनवाल ने लिखी है। कहानी में एक लड़का जो अपनी कभी न मिल पाने वाली प्रेमिका के ख्वाबों को पूरा करने के खातिर अपना घर-बार छोड़ बिल्कुल नए शहर की ओर डॉक्टरी की पढ़ाई करने निकल पड़ा है, उसके साथ हैं तो बस उसकी प्रेमिका के श्याह ख्वाब। कहानी में प्राकृतिक चित्रण अविस्मरणीय हैं। यह कहानी इंटरमीडिएट की इंग्लिश लिट्रेचर में पढ़ी विलियम वर्ड्स वर्थ की लिखी कविता 'ट्र्यू ब्यूटी' में लूसी ग्रे की याद ताजा कर देती है।

नवनीत नीरव द्वारा लिखित कहानी 'मरुस्थल' बिल्कुल अपने नाम के समानांतर लिखी गई है। कहानी का मुख्य पात्र शर्मा का किरदार पढ़कर समाज में मौजूद उन तमाम शख्सियतों का चेहरा आँखों के सामने प्रतिबिम्बित होने लगता है जो आज भी अपने उसी अड़ियल स्वभाव की वजह से अपनी अतिप्रिय चीजों के बगैर जीने और हमेशा के लिए तड़पने के लिए पीछे छूट जाते हैं। 'कर्ज' कहानी को सुधीर मौर्य ने बड़े ही सहज और सरल ढंग से लिखा है। यह एक ऐसे अनजान सफर में किसी अनजान रास्तों पर यूँ ही चलते हुए निःस्वार्थ भाव से की गई किसी अनजान की मदद की कहानी है। कैसे उस अनजान ने अपना कर्ज तो उतार दिया, लेकिन कर्ज देने वाले उस क्षणिक सहयात्री से जीवन भर यादों का रिश्ता बना लिया, इसे मार्मिकता के साथ रचा गया है।

नवलेखन माला की बेहद मर्मस्पर्शी, ज्ञानमार्गी कहानी 'नफरत' को धर्मेन्द्र कुमार सिंह ने लिखा है। इस कहानी में लेखक ने पात्रों को आधुनिक परिवेश में पिरोते हुए बेहतरीन ढंग से बताने की कोशिश की है कि, "नफरत के दो शिखरों की ऊँचाई जितनी बढ़ेगी दोनों के बीच की खाई उतनी ही गहरी हो जाती है।" अगली कड़ी अनूप मणि त्रिपाठी की लिखी कहानी 'अधूरी कहानी' है। यह कहानी किसी देश के उसके बदलाव (आधुनिक भाषा में विकास) के दौरान मानवीय जीविकोपार्जन को श्रेणी-दर-श्रेणी समझाने की कोशिश है। एक भिखारी की जिजीविषा की श्रेणी में बैठे उच्चतम शिखर वाले व्यक्ति के प्रति उसकी सोच और उसके उलट उस उच्चतम श्रेणी वाले व्यक्ति का उस भिखारी के प्रति सोचने का नजरिया कैसा होता है, इसे समझना आसान काम नहीं होता है।

कहानी 'आईना' मेघा थानवी ने लिखी है। कहानी में आज की युवा पीढ़ी और उनके अभिभावकों के आपसी तालमेल को समझाया गया है। खासकर बेटियों का अपने माँ, बाप और जहाँ पर वह काम करती हैं, वहाँ पर लोगों के बीच उनके रिश्तों को बारीकी से समझाया गया है। लेखक की भाषा सहज और सरल है।

इसी कड़ी में आगे बढ़ते हुए अगली कहानी है 'माँ का जेहाद', जिसे राजेश श्रीवास्तव ने लिखा है। लेखक ने बड़ी ही गम्भीरता और सरलता से आतंकवाद को समझाना चाहा है कि किस तरह हमारे देश के युवाओं को कुछ बाहरी ताकतें, धर्म और कुछ नामचीन मुद्दों के नाम पर भड़काती, उकसाती हैं। देवेन्द्र चौधरी की लिखी कहानी 'अनुभव' है, जो रेलवे स्टेशनों के अगल-बगल, शहर के कोनों, पुलों के नीचे बनी झुग्गियों में रहने वाले भिखारी और उनके बच्चों का जीवन दर्शन कराती है। यह एक सच्चाई है जिसे लेखक ने कलमबद्ध कर दिया है। अगली कहानी 'क्योंकि हर इमारत घर नहीं होती' शिवानी कोहली द्वारा लिखी गई है। यह कहानी उन बुजुर्गों के दर्द को उजागर करती है जो अपने हाथों से बनाए घरौंदे से दूर कर दिए गए हैं और ओल्ड एज होम में रहने को मजबूर हैं। कहानी आम बोलचाल की भाषा में लिखी गई है।

किन्नरों के जीवन, समाज में उनके स्थान और उनकी मनोदशा को उभारती कहानी 'अधूरे जीवन' को मेघा दुग्गल मेहरा ने लिखा है। कहानी में एक व्यक्ति के जीवन और जैसे-जैसे उसके आगे बढ़ने का सिलसिला शुरू होता है, कैसे वह इसी जीवन जंजाल में उलझ जाता है, समझाने का प्रयास किया है।

अभिषेक पाण्डेय द्वारा लिखी गई 'वजीफे की कीमत' बेहद मार्मिक कथाचित्र है। इस कहानी में गजब ढंग से एक गाँव के गरीब बच्चे के मनोभावों को दर्शाया गया है। आज जिस तरह से आधुनिकता ने चारों तरफ अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया है, ऐसे में गाँव की वह मासूमियत जो इस कहानी में डाली गई है उसे देख पाना और समझकर लिख पाना मामूली काम नहीं है। अगली कहानी डॉ. प्रीत अरोड़ा की 'एहसास' मालिक, मजदूर, छोटे, बड़ों के फर्क को मिटाते हुए बेहद साफ शब्दों में लिखी गई है। कहानी कम शब्दों में पूरा एहसास समेटे हुए है। कहानी 'गुनहगार' राकेश योगी ने लिखी है, जिसमें कुछ कुत्सित मानसिकता के लोगों के कारण किस प्रकार समाज का हर भाई, पिता खुद को संदिग्धों जैसा महसूस करने लगा है को दर्शाया गया है। किसी पराई नन्ही बच्ची को छूना, पुचकारना प्यार देना क्या गुनाह है? शायद लेखक ने अपनी इस कहानी के जरिए लोगों से यह सवाल पूछे हैं।

नवलेखन माला की अगली कड़ी में श्रद्धा थवाईत की लिखी कहानी 'हवा में फड़फड़ाती चिट्ठी' है, जो सीमा पर तैनात उन सिपाहियों की दास्तान सुनाती है जिन्होंने अपने लहू से हमारी जमीन

को सींच कर हरा किया है। जो अपने माता-पिता, पत्नी की यादों को हर पल दिल में समेटे सीमा पर डटे रहते हैं। इस कहानी में लेखक ने उन लोगों पर तगड़ा कटाक्ष किया है जो इन जवानों की शहादत का अपमान करते हैं। अगली कहानी 'अंतरद्वंद्व' है, जिसे ललित सिंह राजपुरोहित ने लिखा है। अंतरद्वंद एक ऐसी कहानी है जिसमें महिलावादी विचारों की प्रत्येक बार दी जाने वाली बलि को उकेरा गया है कि कैसे अनादिकाल से महिलाओं का पुरुषों के प्रति समर्पण अथवा प्रेम नाम दे दिया जाता है। लेकिन आज की पढ़ी-लिखी आधी आबादी ने अपने ऊपर पुरुषों द्वारा थोपी गई इस वर्चस्व रूपी मानसिकता के विरुद्ध खुद को खड़ा करना शुरू कर दिया है। शायद अब और नहीं।

रजनी गोसाईं द्वारा लिखी गई कहानी 'मोबाइल फोन' उन तमाम बच्चों की याद दिलाती है, जो किसी ढाबे या टी स्टॉल पर प्लेट साफ करते हैं। ज्यादातर लोगों के लिए यह नन्हे मजदूर 'छोटू' नाम से सम्बोधित किए जाते हैं। कभी किसी के मन में आया तो कोई उन्हें बेचारा समझकर पुचकार देता है, कभी मन में आया तो अपने अंदर की सारी भड़ास उस छोटू पर उतार भी सकते हैं। लेकिन शायद ही कोई ऐसा हो जिसे पता हो कि यह छोटू अपने घर परिवार को कमा कर पालने का एकमात्र जरिया है। आज बेटियाँ किसी भी क्षेत्र में पुरुषों से कम नहीं हैं, फिर भी समाज के कई ऐसे लोग हैं जो आज भी बेटियों को खूंटे से बाँधकर अथवा दासी बनाकर रखने की वस्तु मानते हैं। ऐसी कुत्सित मानसिकता वाले लोगों पर प्रहार करती कहानी 'पक्षपात' है, जिसे कुलदीप शर्मा ने लिखा है।

'गर्भनाल' कहानी को मंजरी श्रीवास्तव ने कलमबद्ध किया है। गर्भनाल यानी एक माँ की कोख पर लिखी गई कहानी। कहानी बेहद मर्मस्पर्शी तरीके से समाज की एकमार्गी सोच पर गहरी चोट करती है। लेखिका ने कहानी को रंगमंच के दृष्टिकोण से लिखा है जो उनके रंगमंच के प्रति गहरे लगाव और समझ को दर्शाता है। हेमलता पाठक लिखित कहानी 'समझौता' मनुष्य को अपने सत्कर्मों पर दृढ़ निश्चय रहने की ओर प्रेरित करती है। यह लोगों में ईश्वर के प्रति अटूट विश्वास भी जगाती है। सुधांशु दीक्षित ने वाकई एक बेहतरीन एहसास कराती कहानी 'निर्वाण' की रचना की है। लोग किस प्रकार अपने ही बनाए जाल में उलझे हुए हैं कि उन्हें अपने आसपास की तमाम सुंदरतम विविधता दिखाई ही नहीं पड़ रही है। लेखक ने कहानी के माध्यम से लोगों की जमी नसों को खोलने का प्रयास किया है, ताकि वह एक बार फिर से नए सिरे से जीवन को जी सकें। 'ग्रहण-मोक्ष' कहानी को अनामिका 'त्रिवि' ने लिखा है। यह कहानी भी परिवार में एक बेटी और उसके अपने भविष्य के फैसले तय करने के हक पर सवाल करती है।

'पता है मम्मा!!' कहानी को पदमा कुमारी ने लिखा है। यह एक नन्ही बच्ची की अपनी माँ से की गई बातचीत है, जिसे इतनी बारीकी से बस एक माँ ही समझ सकती है। पदमा कुमारी ने इस कहानी के माध्यम से मातृत्व रूप को गहराई से रेखांकित किया है।

भारतेन्दु कुमार शुक्ल की लिखी कहानी 'दूसरा रास्ता' तेजी से पढ़-लिखकर आगे बढ़ रही आबादी पर बढ़ रहे रोजगार के दबाव का रेखाचित्र तैयार करती है। इलाहाबाद, बनारस, दिल्ली जैसी जगहों पर अपनी पारिवारिक क्षमता के हिसाब से नौकरी पाने के लिए प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करने प्रतियोगी आते हैं। आजकल तो किसी प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी करने वाले छात्र की खुदखुशी का मामला बेहद साधारण खबर मात्र बनकर रह गई है पर क्या कभी किसी ने उस दबाव को महसूस किया है जो उस प्रतियोगी छात्र पर बन जाता है, जिसकी वजह से वह खुद को ही समाप्त कर लेने में ही सबकी भलाई समझने लगता है।

---

## लोक संग्राम की नेत्री : रानी लक्ष्मीबाई

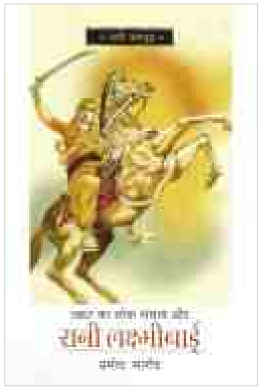

*समीक्षक* : **डॉ. संध्या भार्गव**

**1857 का लोक संग्राम और रानी लक्ष्मीबाई**

**प्रमोद भार्गव**

*प्रकाशक* : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, *पृष्ठ* : 125

*मूल्य* : रु. 170/-

भारतीय इतिहास में रानी लक्ष्मीबाई एक ऐसा व्यक्तित्व है जो जनमानस में रचा-बसा है। जब-जब नारी अस्मिता एवं स्वाभिमान की बात आती है, तब-तब रानी लक्ष्मीबाई का नाम लोकमानस की जुबान पर आ ही जाता है।

इतिहास को आमतौर पर एक नीरस एवं कठिन विषय के रूप में जाना जाता है। सामान्यतः लोकधारणा है कि इतिहास क्या है, गड़े-मुर्दे उखाड़ना है। क्या आवश्यकता है इसे पढ़ने की? राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा 'नारी अग्रदूत' पुस्तकमाला के अंतर्गत प्रकाशित '1857 का लोक संग्राम और रानी लक्ष्मीबाई' नामक यह पुस्तक पाठकों को एक नई दृष्टि प्रदान करती है। हालाँकि इससे पूर्व न्यास द्वारा लक्ष्मीबाई पर तीन अन्य पुस्तकें प्रकाशित हैं, लेकिन यह पुस्तक लक्ष्मीबाई के साथ लोक के संग्राम को उभारती है।

इस पुस्तक को लिखते समय लेखक ने ऐतिहासिक तथ्यों का सूक्ष्म शिक्षण किया है एवं तथ्यों से बिना छेड़छाड़ किए उन्हें ऐतिहासिक संदर्भों के साथ प्रस्तुत किया है। पुस्तक की भाषा सरल, सुबोध एवं रोचक है। प्रमोद भार्गव ने 1857 के स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े उन पत्रों को पढ़ा है जो तात्या टोपे के बस्ते से प्राप्त हुए थे। तात्या के बस्ते से कुल 225 पत्र प्राप्त हुए। इनमें से 125 हिन्दी में तथा 100 उर्दू में लिखे गए हैं। इन पत्रों में राजा-महाराजाओं के साथ-साथ आम जनता के भी पत्र हैं, जिनमें तत्कालीन परिस्थितियों

में क्रांति की योजना बनाई गई है। 1857 के स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास लिखते समय उन पत्रों की उपेक्षा हुई, किंतु प्रमोद भार्गव ने इन मौलिक स्रोतों का अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला है कि 1857 का स्वतंत्रता संग्राम लोक संग्राम था। राजा-महाराजा या सामंत वर्ग ही नहीं, अपितु आम आदमी भी सर्वस्व न्योछावर करने को तत्पर एवं तैयार था। सामान्यतः यह माना जाता है कि 1857 का स्वतंत्रता संग्राम एक खास वर्ग के हितों की लड़ाई था, असंतोष का परिणाम था किंतु प्रमोद भार्गव ने तथ्यों के आधार पर यह माना है कि 1857 का स्वतंत्रता संग्राम न केवल अभिजात्य वर्ग अपितु लोकमानस का संग्राम था। इसमें उन्होंने किसान, सिपाही, संन्यासी जैसी आम जनता के योगदान का वर्णन किया है। यद्यपि 1857 का स्वतंत्रता संग्राम सफल नहीं हुआ, किंतु आगामी 90 वर्षों तक राष्ट्रीयता की मशाल जलाए रखने में जनमानस के योगदान को नकारा नहीं जा सकता।

भारतीय उद्योग-धंधों एवं तकनीक पर अंग्रेजों के कुठाराघात से उपजा जनमानस का क्षोभ 1857 की क्रांति का कारण बना। लेखक ने पुस्तक में सम्पूर्ण घटनाक्रम का बड़ा ही सजीव चित्रण किया है। सैनिकों को ईसाई बनाने और न बनने पर प्रताड़ित करने का वर्णन बड़ा मार्मिक है। ईसाई बनने पर विभिन्न प्रलोभन दिए जाते थे, किंतु क्षुब्ध सैनिक ईसाई बनने के ब्रिटिश शासन की नीतियों के विरुद्ध होते गए। डलहौजी की हड़पनीति जहाँ सात राज्यों में असंतोष का कारण बनी, वहीं जनता भी आक्रोशित हुई। कारण कुछ भी हो, प्रभाव जनता पर ही पड़ रहा था और यही जनमानस अंग्रेजों का विरोधी बन गया जिसने 1857 के संग्राम में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया।

आमतौर पर यह माना जाता है कि रानी लक्ष्मीबाई अपनी रियासत झाँसी को बचाने के लिए अंग्रेजों से जूझ गई थी, किंतु प्रमोद भार्गव ने अपनी इस पुस्तक में लिखा है कि झाँसी के किले को बचाने का संग्राम वस्तुतः किसान, मजदूर एवं आम गरीबों का था। ये वे लोग थे जो ईस्ट इंडिया कंपनी के शोषण और अपमान से आहत, हैरान-परेशान थे। यह इन हैरान लोगों का स्वतंत्रता के लिए संघर्ष था। रानी लक्ष्मीबाई देश की नारी अस्मिता की रक्षा का प्रतीक थीं। उनके साहस, संगठन, युद्ध कौशल का सजीव चित्रण इस पुस्तक में किया गया है।

---

# 'नतोऽहं' - सांस्कृतिक उपन्यास की उल्लास मुद्रा

*समीक्षक* : **डॉ. शत्रुघ्न प्रसाद**

**डॉ. मीनाक्षी स्वामी**

किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली

*पृष्ठ* : 314,

*मूल्य* : पेपरबैक- रु. 250/-

हार्ड बाउंड- रु. 500/-

हिन्दी की विदुषी कथाकार मीनाक्षी स्वामी ने 'नतोऽहं' नामक यात्रापरक सांस्कृतिक उपन्यास लिखकर एक नया प्रतिमान स्थापित किया है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने 'अनामदास का पोथा' लिखकर सांस्कृतिक उपन्यास का शुभारम्भ किया था। 'नतोऽहं' उज्जयिनी और सिंहस्थ कुम्भ के परिदर्शन द्वारा भारतीय संस्कृति के प्रति गहन अनुभूति कराता है।

मीनाक्षी स्वामी ने 'नतोऽहं' में सर्वथा भिन्न उज्जयिनी के युगयुगीन सांस्कृतिक-सामाजिक जीवन से पहचान कराई है। प्राचीन काल में विदेशी यात्रियों मेगस्थनीज, फाह्यान, ह्नेनसांग, अलबरुनी आदि ने भारत भ्रमण का वर्णन अपने यात्रा ग्रंथों में किया है। विदेशी युवक एल्विस की सांस्कृतिक यात्रा को मीनाक्षी ने रोचक कथानक में ढालकर उपन्यास का रूप दे अपनी लेखनी के स्पर्श से अनन्य बना दिया है। उपन्यास का नायक है एल्विस। वह जिज्ञासु बनकर आता है, श्रद्धालु बनकर लौटता है। कथावस्तु तो उज्जयिनी का युगयुगीन पुरातात्विक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप है। इसमें भारतीय जीवन की यथार्थता और जीवन की उज्ज्वलता है। उज्जयिनी के अतीत और वर्तमान में सतत प्रवाहशील सांस्कृतिक जीवन को, जो सम्पूर्ण भारत से जुड़ा हुआ है, उपन्यस्त किया है। इस कृति में इतिहास की विकृति का प्रयास नहीं है। यहाँ नायक संशयग्रस्त भी नहीं है। वह तो मात्र जिज्ञासु है। कथानक के विस्तार के साथ जिज्ञासा शांत होती चलती है। औत्सुक्य आस्था में परिणित होता है।

स्वामी विवेकानंद ने अपने तेजस्वी व्यक्तित्व, नववेदांत का तलस्पर्शी मानवीय विवेचन और प्रत्यक्ष सांस्कृतिक संकट की व्याख्या से विश्व को प्रभावित किया था, भारतीयता में आस्था जगाई थी, तभी तो शासक देश की मार्गरेट नोबल भारत आकर भगिनी निवेदिता बन गई थी। इस उपन्यास में भी इंग्लैंड का एल्विस सिंहस्थ के अवसर पर भारतीय संस्कृति की सारी विशेषताओं को देखकर, जिज्ञासाओं को शांत कर श्रद्धा से नत होता है। आज के सांस्कृतिक द्वंद्व व पश्चिमी सांस्कृतिक आक्रमण के समय एल्विस का श्रद्धापूर्वक नत होना भारतीयता की विजय है।

एल्विस उज्जयिनी आकर पौराणिक जी से मिलता है और कभी-कभी रहस्यमयी काकी से भेंट हो जाती है। मुख्यतः पौराणिक जी के माध्यम से एल्विस सम्पूर्ण उज्जयिनी के पौराणिक, सांस्कृतिक, अकादमिक आदि सभी रूपों से परिचित होता है। सिंहस्थ के सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, भौगोलिक, वैज्ञानिक आदि सारे आयामों को देख अभिभूत होता है।

श्रद्धा की शिप्रा में स्नान के महत्त्व को समझता है। उपन्यास में शिप्रा स्नान, करोड़ों की भीड़ का पारस्परिक स्नेह, सामाजिक समरसता, नागा साधु, अखाड़ों, रहस्यमयी तांत्रिक साधना आदि के

जीवंत शब्द चित्र प्रत्यक्ष हो लुभाते हैं। हिंदू सनातन धर्म की वैज्ञानिकता के सप्रमाण दर्शन उपन्यास में होते हैं। शिप्रा नदी की पौराणिक महत्ता, ऐतिहासिक स्वरूप और वर्तमान स्थिति सबके सामने है। ऐतिहासिक पुरुष सम्राट द्वय विक्रमादित्य व भर्तृहरि की चर्चा भी उपन्यास में की है। पौराणिक जी के संयुक्त परिवार को देखकर एल्विस आश्चर्यपूर्ण हर्ष से भर जाता है। यूरोप में परिवार ही टूट चुके हैं, भारत में संयुक्त परिवार स्नेह की गोद में मुस्करा रहे हैं।

'नतोऽहं' अवन्तिका नगरी और सिंहस्थ का जीवंत दस्तावेज है। महाकाल दर्शन की अलौकिक अनुभूति हो या आस्था का उमड़ता सैलाब, शिप्रा आरती हो या शिप्रा स्नान, उज्जयिनी जाने पर हर समय अनुभव होता है कि अरे ऐसा ही तो लिखा है उपन्यास में। प्रशंसनीय है कि भ्रमण, प्रश्न, जिज्ञासा तथा समाधान के साथ उपन्यास गतिशील होता है। कथानक की गति कहीं शिथिल नहीं होती। द्वंद्वों से मुक्त है नायक एल्विस। उसकी जिज्ञासाएँ शांत होती रहती हैं।

सम्पूर्ण उज्जयिनी तथा सिंहस्थ की सारी विशेषताओं की प्रामाणिक प्रस्तुति मीनाक्षी स्वामी की लेखनी कुशल व सरस तरीके से कर देती है। सर्वथा नई शैली की यह रचना भाषा के स्तर पर भी सशक्त है। आवश्यकतानुसार मालवी भाषा व कहावतों का सहज प्रयोग बहुत भाता है।

अंत में कहना है कि डॉ. मीनाक्षी स्वामी ने उपन्यास की सरस कथा के माध्यम से विद्वतापूर्ण आधुनिक दृष्टि से सिंहस्थ व भारतीय सनातन धर्म की वैज्ञानिक व्याख्या करने की सफल चेष्टा की है। उपन्यास में भारतीयों से अपनी जड़ों की ओर लौटने का और विश्व को भारत आने का आग्रह है। यह अभिनंदनीय है। समग्रतः 'नतोऽहं' हिन्दी उपन्यास की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। जैसे उषाकिरण खान का उपन्यास 'भामती', मृदुला सिन्हा का 'विजयिनी', नीरजा माधव का 'गेशे जम्पा' और क्षमा कौल का 'दर्दपुर' हिन्दी के विशेष अवदान हैं। मीनाक्षी स्वामी को शतशः बधाई।

## संस्कृति के प्रश्न

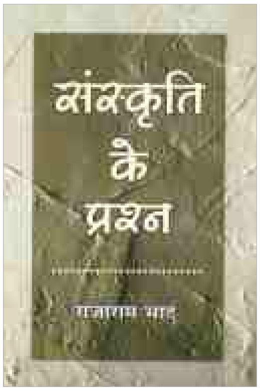


*समीक्षक* : **दीपक मंजुल**

**राजाराम भादू**

वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर

*पृष्ठ* : 152,

*मूल्य* : रु. 240/-

विश्व प्रख्यात मानवशास्त्री मेलिनोवस्की ने मानव जाति की समस्त 'सामाजिक विरासत' या मानव की समस्त संचित सृष्टि को ही संस्कृति नाम दिया है। इसका मतलब हुआ कि जगत में जो भी मूर्त या अमूर्त चीजें हैं, वे सभी इस संस्कृति में शामिल हैं। वैसे, आम बोलचाल और समझ में संस्कृति शब्द से साहित्य, संगीत, नाटक, नृत्य, स्थापत्य आदि कलाओं के सामूहिक रूप का बोध होता है। विगत कई दशकों से शिक्षा और संस्कृति पर ही विशेष रूप से काम करने वाले लेखक राजाराम भादू का संस्कृति के प्रश्नों पर विचार ही इस पुस्तक का केंद्रीय स्वर है। पाँच खंडों में विभक्त इस पुस्तक में स्त्री विमर्श है, दलित विमर्श है और संस्कृति के विभिन्न आयामों के विभिन्न प्रश्न हैं। 'उत्तर-आधुनिकता' पर विचार करते हुए लेखक ने इसके अंतर्विरोध को समझने-समझाने का प्रयास किया है। 'संस्कृति' को एक संश्लिष्ट प्रत्यय कहते हुए लेखक कहते हैं कि संस्कृति पद को लेकर तथाकथित शिक्षित वर्ग भी भ्रमित है। अधिकांश लोग तो लोकगीत-नृत्य आदि जैसी विधाओं को ही संस्कृति समझते हैं, जो अकसर सांस्कृतिक कार्यक्रम के नाम से प्रदर्शित होते रहते हैं। जबकि लेखक के अनुसार, संस्कृति एक व्यापक फिनोमिना है जिसमें संचित ज्ञान-राशि, शिक्षा, मीडिया, धर्म, सृजन और आचार-व्यवहार सभी कुछ समाहित हैं। देशज संस्कृतियों के विलोपन अथवा विकृतिकरण पर भी चिंता जताई गई है।

नालंदा, तक्षशिला और उज्जयिनी आदि विश्वविद्यालय प्राचीन भारत के वैसे ज्ञानकेंद्र रहे हैं, जहाँ से ज्ञान की रोशनी समस्त संसार में फैली। लेकिन दुखद ये रहा कि ज्ञानकेंद्र की यह शृंखला बहुत आगे नहीं गई। यूरोपीय पुनर्जागरण से उद्भूत भारतीय नवजागरण हमारे निकट अतीत में ज्ञानोदय का नवीन उदाहरण रहा है। परतंत्र भारत में मैकाले का ज्ञान या शिक्षा मॉडल जब से शुरू हुआ, उसका अंत अब तक दिखाई नहीं देता। मैकाले की शिक्षा ने आंतरिक उपनिवेशन को सुदृढ़ करने में महती भूमिका निभाई। मैकाले की शिक्षा के बरक्स गाँधी जी की बुनियादी शिक्षा का प्रयोग एक तरह से असफल रहा। इस शिक्षा सिद्धांत में श्रम पर मुख्य जोर था। भारतीय परम्परा में शिक्षा को सदैव सर्वोच्च, गरिमापूर्ण और गम्भीर हैसियत मिलती रही, लेकिन आज के भूमंडलीकरण के दौर में भारतीय शिक्षा की देशज अवधारणा पर चिंतन नहीं के बराबर हो रहा है। लेखक का मानना है कि यदि शिक्षा की ऐसी कोई भारतीय अवधारणा आज विकसित होकर सामने आती है, तो यह पुरातनोन्मुखी नहीं होगी, बल्कि वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भविष्योन्मुखी होगी।

स्वराज के स्वप्न पर विचार करते हुए गाँधी जी का जिक्र आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी प्रतीत होता है। लेखक स्वयं एक भारतीय गाँव (राजस्थान) से संबंध रखते हैं। उनका सामाजिक परिवर्तन लाने की आकांक्षा रखने वाले लोगों के समूह से रिश्ता-नाता रहा है। इसीलिए स्वराज की अवधारणा पर उनके विचार के आधार में गाँव व गाँधी का होना अनिवार्य ही है। प्रकृति और मनुष्य के सहजीवन को अपरिहार्य मानने वाले भारतीय दर्शन से अनुप्रेरित गाँधी जी की स्वराज की अवधारणा में समस्त प्राणी जगत के लिए जगह थी।

'साहित्य की संस्कृति : संस्कृति का साहित्य' पर विचार करते हुए लेखक कहता है— साहित्य प्रथमतः और अंततः एक माणिक संरचना है। यह मानवीय अभिव्यक्ति का संश्लिष्ट और उत्कृष्ट रूप है। संस्कृति पर उनकी अवधारणा है— चूँकि संस्कृति बहुरूप और गतिक है, इसलिए साहित्य की विषयवस्तु भी बदलती रहती है। 'आधुनिकीकरण और भाषायी अस्मिता' के सवालों से जूझते हुए लेखक आधुनिकीकरण के विभिन्न आयामों और घटकों की चर्चा करते हुए स्थापना देते हैं कि— आधुनिकीकरण एक प्रक्रिया भी है जो समाज के सभी घटकों और जीवन-शैलियों में गुणात्मक परिवर्तन लाती रही है। आलेख में आधुनिकीकरण के वैश्विक परिप्रेक्ष्य, फिर भारत में इसके प्रतिफलन और भाषायी अस्मिता तथा अंत में बहुलवाद पर विचार किया गया है। हिन्दी को लेखक ने प्रतिरोध और संघर्ष की भाषा कहा है।

'धर्मसत्ता और राज्य सत्ता : द्वंद्व और सहमेल' पर विचार करते हुए राज्य सत्ता को शक्ति का केंद्र निरूपित करते हुए धर्मसत्ता में भी 'अपनी ही तरह से शक्ति विद्यमान' रहने की बात यहाँ कही गई है। "दोनों सत्ताएँ अपनी अर्जित शक्ति का उपयोग अधीनस्थों के नियंत्रण और नियमन में करती हैं।" "दोनों सत्ताएँ अपने आधिपत्य विस्तार और निहित स्वार्थों के चलते कई बार टकराती हैं तो अकसर यथास्थिति बनाए रखने के लिए सहमेल कर लेती हैं।" लेखक यह स्थापना देते हैं।

दलित विमर्श के क्रम में दलित साहित्य के उभार पर यह बताया गया है कि हिन्दी दलित साहित्य मूलतः मराठी दलित साहित्य से अनुप्राणित है। यह भी कि, लगभग सभी भारतीय भाषाओं मे दलित साहित्य की अभिलाक्षणिकताएँ विद्यमान हैं। समकालीन सृजन-परिदृश्य में दलित विमर्श की अपरिहार्य उपस्थिति को भी लक्षित किया गया है। यह मुख्यधारा साहित्य के एक समानांतर हैसियत में खड़ा है, इस आम धारणा को भी रेखांकित किया गया है। इस क्रम में जोतिबा फुले, डॉ. आम्बेडकर, दया पवार आदि की चर्चा स्वाभाविक रूप से हुई है। फिर, दलित सैद्धांतिकी के अंतर्विरोध पर भी बहस उठाई गई है। दलित विमर्श के हिंदू वर्ण-व्यवस्था के गहरे संबंध की भी छानबीन है। लेखक के ये लेख विभिन्न समय-कालों में प्रकाशित होने के बावजूद आज भी प्रासंगिक हैं। लेखक अभी भी सक्रिय हैं।

---

# संघर्ष में जीवन मूल्यों की पैरवी करती आत्मकथा

*समीक्षक* : **संदीप राशिनकर**

**सदाशिव कौतुक**
*प्रकाशन* : अयन प्रकाशन,
नई दिल्ली-110030
*पृष्ठ* : 252
*मूल्य* : रु. 500/-

साहित्य की बहुतेरी विधाओं में एक विधा है आत्मकथ्य या आत्मकथा। इन दिनों आत्मकथा लिखने का एक दौर-सा दिखाई देता है। वैसे देखा जाए तो हर व्यक्ति का अपना जीवन, जीवनानुभव अपने संघर्ष, अपनी हार-जीत होती है, तो क्या हर व्यक्ति को आत्मकथ्य या आत्मकथा लिखनी चाहिए? नहीं! बिल्कुल नहीं, क्योंकि कोई भी साहित्य हो उससे सकारात्मकता का सरोकार अपेक्षित ही नहीं, अनिवार्य भी है। आत्मकथा वह हो, जो समाज के संघर्षरत व्यक्ति को जीवन जीने के लिए न सिर्फ प्रेरित करे, वरन् विपरीत दौर में भी जीवन और जीवन मूल्यों के प्रति आस्था का निर्माण करे और उन्हें जीने का संबल प्रदान करे।

यह आत्मकथा गरीबी व अभावों में जन्मे उस सदाशिव की है, जिसके रात-दिन न सिर्फ विषम परिस्थितियों से जूझ रहे थे, वरन् दलितों के हिस्से का शोषण सह रहे थे। भूख, गरीबी, लाचारी में शुरू हुए जीवन के इस सिलसिले में संबल उस सोच, उन विचारों का था जिन्हें सदाशिव ने अपने पिता, अपनी दादी में देखा, जिन्हें ताउम्र वह गुरु मानता रहा। दादी से ही उन्होंने सीखा कि, "सौभाग्य को कहीं ढूँढ़ना है तो वह परिश्रम के साथ खड़ा नज़र आता है।" वे कहते हैं कि दादी पुरुषार्थी महिला थीं, बारहों महीने श्रम उनका व्रत था। दादी कहती थीं कि धूप से उपजा यह बहता पसीना एक हवा का झोंका आते ही मस्त कर देने वाली ठंडक पैदा कर देगा। पसीना बहेगा, तभी ज़िंदगी जीने का मजा भी आएगा। तभी तो बचपन में ही सदाशिव के बालमन पर यह अंकित हो गया कि आलस्य व्यक्ति को दफना देता है इसलिए 'हारिये न हिम्मत, बिसारिये न काम!' और उसने यह जीवन की पाठशाला में सीख लिया था कि 'काम ही उसका राम है!'

जीवन में हर पड़ाव पर भरण-पोषण, बीमारी, अंधविश्वास व आर्थिक विपन्नता के चलते चिकित्सा के अभाव में बचपन में ही सुदर्शन चेहरे के सदाशिव को न सिर्फ चेचक से पीड़ित होना पड़ा, वरन् अपनी एक आँख से भी हाथ धोना पड़ा। बावजूद इसके वह इन विषम परिस्थितियों और कम उम्र का होते हुए भी भीतर और बाहर की दुनिया से टकराव का मन बना चुका था। वह जानता था कि उसके न पढ़ने के कई कारण हो सकते थे— कमजोर शरीर, एक आँख का भरोसा, पेट भरने की व्यवस्था न होना, कुपोषण, किताब या फीस की पूर्ति न होना या घर में शिक्षा का वातावरण न होना, किंतु यह सोच थी कि पढ़ने के कारण नौकरी लग गई तो जीवन बसर हो जाएगा अन्यथा समय से पहले दुनिया से उसकी छुट्टी हो सकती है। वह अपने पिताजी की ईमानदारी और साफगोई तथा दादी की कर्मठता से प्रभावित होने और अभावों में भी ग्राम्य जीवन की सरलता व सहजता के चलते सच से विमुख नहीं हुआ।

हालाँकि मुसीबतें उठाने व छात्रवृत्ति के लिए हाथ नहीं फैलाने के चलते तीन छोटे भाइयों की शिक्षा के लिए सदाशिव को अपनी शिक्षा बंद करनी पड़ी। परंतु शिक्षण में सहपाठी रही मनोरमा दुबे के योगदान को न भूलते हुए वह कहते हैं कि, "उसने मुझे कुरेद कर कविता लिखने के लिए न सिर्फ प्रोत्साहित किया वरन् जो मेरी कुरूपता मन में संकोच कर बैठी थी, उसे खत्म कर दिया।"

नियति की क्रूरता के चलते भीतर से बिखर चुकने के बावजूद हिम्मत न हारते हुए मन को हल्का करने के लिए वे अपने विचारों को कविता में ढालते रहे। विचारों के पदार्पण के चलते अंदर ही अंदर संवाद करते सदाशिव कहते हैं कि, "शायद मेरे पास कविता का कैप्सूल न होता तो कभी का दिल का दौरा पड़ जाता। कविता रुलाती रही, हँसाती रही और इस हँसने-रोने की आज़ादी में मैं अपना जीवन पूरा कर रहा था। अपने अनगिनत दुखों की गिनती में वे मानते हैं कि अगर हर दुख को मैं कविता बनाता, तो पूरा महाकाव्य बन जाता।"

अपने पिता के साथ परिवार के जीवन यापन के लिए जीवन को केवल कर्म मानकर जीवन संघर्ष में उतरे सदाशिव ने सुबह चार बजे महुआ बीनने के लिए खेतों पर जाने, निंदाई-कपास-चुनाई, मक्का तोड़ने, मूगफली उखाड़ने, ज्वार की लाणी-डलणी करते, खेतों की रखवाली करने, चने उखाड़ने, गेहूँ काटने, तुअर झाड़ने, दावण चलाने, पतार फोड़ने, चिनाई करने से लेकर सारे परिश्रम के कार्य करते हुए जीवन को आगे बढ़ाया। वे मानते हैं कि जहाँ पेट भरने का संकट हो, विचार पीछे छूट जाता है। ऐसे समय में मनुष्य के हिंसक न बनने का कारण था धार्मिक मान्यताएँ, भाग्य का भरोसा। मजहबी सहिष्णुता और निस्वार्थपन ने समाज को मारकाट से बचा रखा है। ग्रामीण पृष्ठभूमि ने मनुष्यता को बचाए रखा है। वे मानते हैं कि हमारी संस्कृति के भंडार में व्यक्ति को ईमानदार मनुष्य बनाए रखने के लिए कितनी अच्छी कहावतें, मुहावरे और अमृतवाणी उपलब्ध हैं, जो मनुष्य को भटकाव से बचा लेती हैं।

हालाँकि श्रीकृष्ण सरलजी द्वारा अंतरात्मा से 'कौतुक' कहे जाने से सदाशिव सिसोदिया 'सदाशिव कौतुक' हो गए, किंतु उनके आत्मकथ्य को पढ़ने और उनके संघर्ष को जानने के बाद यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि 'कौतुक' के अलावा अन्य कोई सार्थक शब्द नहीं होगा जो उनका मूल्यांकन कर सके।

हाथ न फैलाना, झूठ नहीं बोलना और धोखा नहीं देना ये जीवन के तीन मंत्र मानने वाले कौतुक मानते हैं कि दुखों ने उन्हें नेक इंसान बनने का मौका दिया। और तो और उनकी मान्यता है कि जिसने कभी दुख नहीं देखा, वह सबसे बड़ा दुखियारा है। अपने गाँव से इंदौर आना, यहाँ आकर जीवन के लिए किया गया अनवरत संघर्ष व अपने आप को आर्थिक व साहित्यिक रूप में स्थापित करने की जद्दोजहद आत्मकथा में प्रस्तुत हो अभिभूत करती है। इतनी विपन्नता, उपेक्षित व अनजाने परिवेश से अपने संघर्ष, अपनी सामर्थ्य व जीवन मूल्यों को सहेजकर खुद को व परिवार को संपन्नता, समाज व साहित्य में वरेण्य साबित करते कौतुक के पुरुषार्थ का प्रभावी दस्तावेज है ये आत्मकथा।

इस पुस्तक में गाँवों की घटनाओं, विपन्नताओं, दारुण गरीबी, भेदभाव, धूर्तता की झकझोरती घटनाओं के बरक्स, प्रकृति, परिवेश, परिश्रम व मूल्यों के समर्थन में संघर्षरत जीवन, निश्चित ही विपरीतताओं से जूझते लोगों को संबल देगा। भोगे हुए यथार्थ का चित्रण निश्चित ही कुछ जगह या जगह-जगह पाठकों को झकझोरेगा, उद्वेलित करेगा, किंतु इसमें निहित सकारात्मकता, आस्था व जीवन मूल्यों के प्रति अडिग आग्रह उन लोगों के लिए मार्गदर्शक साबित होगा जो विपरीतताओं के थपेड़ों में आत्मसमर्पण कर देते हैं या अनैतिकता से गठजोड़ कर उसे जायज ठहराने की कोशिशें करते हैं।

---

## सिनेमा में नारी

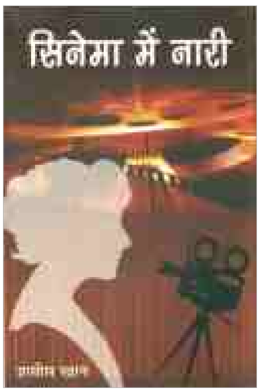


*समीक्षक :* **अमित कुमार लाडी**
*लेखिका :* **शमीम खान**
*मुख्य संपादक :* **आलराउंड** ग्रंथ अकादमी, नई दिल्ली
*मूल्य :* 200 रुपए, *पृष्ठ :* 168

1936 की हिन्दी फिल्म 'अछूत कन्या' से लेकर 2008 की 'फैशन' तक कुल 72 वर्षों में बनी हजारों फिल्मों में से 50 फिल्मों को चुनना और फिर इन फिल्मों की महिला कलाकारों के अभिनय पर गहराई से लिखना, 72 वर्षों के समय में महिला कलाकारों के अभिनय में आए बदलाव को अच्छे से व्यक्त करना, इन महिला कलाकारों को जिन परिस्थितियों के तहत पर्दे पर पेश किया गया, उन परिस्थितियों के बारे में शिद्दत के साथ बयान करना, महिला कलाकारों द्वारा रूपहले परदे पर फिल्माए गए किरदारों के एहसासों और जज्बातों को अच्छे से महसूस करके अपनी कलम द्वारा शब्दों में ढालकर ऐसे लिखना कि पढ़ने वाला भावुक होकर इतनी गहराई में डूब जाए कि बस पूछो ही मत... यह सबकुछ करना आसान काम नहीं और इस बेहतरीन व मुश्किल कार्य को अंजाम दिया है लेखिका शमीम खान ने। पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ के चारों ओर महिला कलाकारों की 26 तस्वीरों को स्थान दिया गया है, जो आकर्षित करता है। गौरतलब है कि सिनेमा में नारी दो रूपों में काफी चित्रित हुई है—एक तो 'सौन्दर्य साधन' के रूप में, वहीं दूसरी ओर 'देवी' के रूप में। इसके अलावा नारी की पारिवारिक-सामाजिक समस्या को लेकर बहुत ही कम फिल्मकारों ने फिल्में बनाई हैं। सिनेमा में नारी के जो दो मुख्य रूप हैं उन रूपों को ध्यान में रखकर यदि देखा जाए तो यह पुस्तक विशेष रूप से प्रभावित करती है। दरअसल, इस पुस्तक में काफी कुछ खास है। कुछेक खास बातों के बारे में मैंने ऊपर लिखा भी है, लेकिन एक बेहद खास बात का जिक्र मैं यहाँ करना चाहूँगा। वैसे देखा जाए तो एक नारी के विभिन्न रूप हो सकते हैं। एक नारी माँ, बहन, बेटी, पत्नी

होने के साथ-साथ सुख-दुख की सहचरी भी होती है। एक नारी गृहिणी के रूप में हमेशा अस्त-व्यस्त रहकर भी मुस्कुराती रहती है। नारी केवल मादा नहीं, परिवार-देश-समाज की मर्यादा भी है। नारी अबला नहीं सबला है। नारी देवी भी हो सकती है व कुल्टा भी, लेकिन सबसे बड़ी बात यह कि क्या वो इंसान नहीं है? जी हाँ, सबसे पहले वो इंसान ही तो है। केवल महिला कलाकारों को ही नहीं, बल्कि सभी महिलाओं को इंसान के रूप में पेश करना बहुत बड़ा काम है और यह कोशिश शमीम खान के कार्य में साफ-साफ दिखाई देती है, यही इस पुस्तक की सबसे बड़ी खासियत है। यह पुस्तक पढ़कर मुझे यह भी लगा कि शमीम खान नारी के लिए विशेषकर शोषण, दासता और अज्ञानता से मुक्ति की पक्षधर हैं। आज के दौर में सिनेमा से संबंधित पुस्तकों को प्रोत्साहन देने की बहुत आवश्यकता है। हालाँकि सिनेमा और साहित्य दो पृथक-पृथक विधाएँ हैं, लेकिन फिर भी दोनों का पारस्परिक संबंध काफी गहरा है। पुस्तक समीक्षा के बहाने, सिनेमा से जुड़े सभी लोगों के लिए यह भी सुझाव है कि फिल्म बनाते समय इस बात का जरूर ध्यान रखें कि सिनेमा कहीं-न-कहीं जीवन से जुड़ा होता है, इसलिए यह बेहद जरूरी है कि सिनेमा समाज को नए रास्ते दिखाए, जहाँ उत्पादकता ही नहीं बल्कि समाज की यथार्थता हो।

*समीक्षक :* **डॉ. ज्योत्स्ना शर्मा**

*प्रधान संपादक :* **धीरा खंडेलवाल**

*मुख्य संपादक :* **डॉ. कुमुद बंसल**

*प्रकाशन :* हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला (हरियाणा)

*पृष्ठ :* 172

*मूल्य :* निःशुल्क

## शब्दों की उड़ान : एक दृष्टि

हरियाणा प्रदेश के स्वर्ण-जयंती वर्ष में 'हरियाणा साहित्य अकादमी' द्वारा साहित्य की विविध विधाओं पर तीन दिवसीय युवा लेखन कार्यशालाओं का आयोजन किया गया। साथ-साथ शिविर में उपस्थित विद्यार्थियों की सुविधा के लिए संदर्भ ग्रंथ के रूप में 'शब्दों की उड़ान' पुस्तक वितरित करने का प्रशंसनीय कार्य भी किया।

पुस्तक में हिन्दी की विविध विधाओं पर विद्वान् लेखकों के 15 सारगर्भित आलेख हैं, जो लेखन में रुचि रखने वाले रचनाकारों का पदे-पदे मार्गदर्शन करने में समर्थ हैं। 'सर्जनात्मक लेखन की भाषा' आलेख में प्रो. राजेन्द्र गौतम ने विषयानुकूल भाषा चयन, शब्दों के सहज एवं समुचित प्रयोग, शब्द-निर्माण तथा प्रसंगवश शब्द शक्तियों का भी सम्यक् विवेचन किया है। उन्हीं के दूसरे आलेख 'गीत की रचना प्रक्रिया' में गीत और नवगीत की संरचना पर प्रकाश डाला गया है। 'हिंदी उपन्यास और उसकी विकास-यात्रा' डॉ. शशिभूषण सिंहल का उपन्यास विषयक तथ्यों को उजागर करता आलेख है। उपन्यास के रूप, भाव, भाषा, वर्ण्य विषय, पात्रों के साथ विविध प्रकार के उपन्यासों और प्रमुख उपन्यासकारों पर भी चर्चा की गई है। निबंध के स्वरूप, वर्ण्य-विषय, भाषा एवं वर्ग विभाजन पर प्रो. लालचन्द गुप्त का सारगर्भित आलेख 'निबंध' बहुत ज्ञानवर्धक है।

नाटक संबंधी अवधारणा, इतिहास, संस्कृत नाटक, एकांकी, लघु नाटक से नाटक के विस्तार और उसके कारणों पर प्रकाश डालते हुए 'नाटक के आयाम' आलेख में कँवल नयन कपूर ने रंगमंच की उपादेयता भी सिद्ध की है। कहानी-लेखन पर उर्मि कृष्ण का 'कैसे लिखें कहानी' आलेख है; जिसमें लेखिका ने बहुत ही रोचक विधि से कहानी-लेखन और उसके मुख्य तत्त्व– अध्ययन, सजगता, चिंतन, निरीक्षण के साथ-साथ कहानी के विषय, चरित्र, शिल्प, संवेदना, शैली, वार्तालाप, लम्बाई, नई कहानी, आंचलिक कहानी आदि कई महत्त्वपूर्ण बिंदुओं पर चर्चा की है। 'लघुकथा' आलेख में डॉ. अशोक भाटिया ने लघुकथा की परिभाषा, बोध कथाओं, लोक कथाओं, नीति कथाओं से लघुकथा के भिन्न स्वरूप, रचना-प्रक्रिया, लघुकथा की विकास यात्रा का वर्णन करते हुए लघुकथा-सृजन का मार्ग प्रशस्त किया है।

'गद्य की विभिन्न विधाएँ' आलेख में रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' ने आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, यात्रा-संस्मरण, पुस्तक-समीक्षा, डायरी-लेखन, साक्षात्कार, परिचर्चा, फीचर, रिपोर्ट/प्रतिवेदन/ रपट जैसी विधाओं पर सम्यक् विवेचन प्रस्तुत किया है। इन्हीं के दूसरे आलेख– 'छंद विधान और उसका महत्त्व' में छंद की उपादेयता, आधार तथा वर्गीकरण पर प्रकाश डाला गया है। बाल साहित्य पर पंकज चतुर्वेदी का 'इक्कीसवीं सदी में हिन्दी बाल-साहित्य' आलेख है। 'हिन्दी में दोहा लेखन' में हरेराम समीप दोहे की परिभाषा, प्रकार के साथ अर्थ गौरव, लालित्य, प्रभाव और जन-मानस से उसके जुड़ाव की चर्चा करते हैं। आलेख में दोहे की विकास-यात्रा, उसके अद्यतन स्वरूप, वर्ण्य-विषयों की विविधता तथा नियामक तत्त्वों का उल्लेख किया गया है। 'सांगों में रागनी-गायन की परम्परा' डॉ. पूर्णचन्द शर्मा का आलेख सांग अथवा स्वांग से तात्पर्य एवं उसका लोकरंजनकारी स्वरूप, उत्पत्ति, राग-रागिनियों तथा उनके वर्ण्य-विषयों की विविधता पर प्रकाश डालता है। ग़ज़ल के उद्‌भव एवं विकास अरबी से फारसी, फारसी से उर्दू-हिन्दी तक ग़ज़ल के तेवर और कलेवर पर विशद चर्चा करता है, डॉ. श्याम सखा 'श्याम' का आलेख 'ग़ज़ल-कुछ बुनियादी बातें', लेखक ने काफिया, रदीफ़, बृह्त, वज़्न आदि पारिभाषिक शब्दों, ग़ज़ल के भाव एवं कलापक्ष पर पर्याप्त कहा है। 'व्यंग्य लेखन : एक कला'– डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल का आलेख व्यंग्य लेखन में प्रयुक्त भाषा, संवाद, प्रतीक, अलंकार, यथार्थता, सांकेतिकता और तटस्थता का उल्लेख करते हुए व्यंग्य लेखन– क्यों, कहाँ और कैसे का सम्यक् विवेचन करता है। डॉ. सुभाष रस्तोगी का आलेख– 'कविता की रचना-प्रक्रिया' कविता के स्वरूप-आज और कल, विस्तार और रचना-प्रक्रिया पर प्रकाश डालता सारगर्भित आलेख है। डॉ. कुमुद बंसल का वैदुष्यपूर्ण संपादकीय सभी साहित्यिक विधाओं का सुगठित एवं सुव्यवस्थित परिचय प्रस्तुत करता है।

हिन्दी साहित्य की प्रायः सभी प्रमुख विधाओं पर आवश्यक जानकारी उपलब्ध कराती पुस्तक की उपादेयता यूँ तो लेखन की ओर उन्मुख नए रचनाकारों के लिए अधिक है।

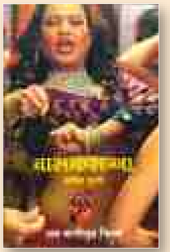

## वासकसज्जा

**आबिद सुरती**

यह पुस्तक मुंबई में देह व्यापार की बदनाम गलियों की सच्ची, मार्मिक और महिलाओं की मजबूरी की कहानी है।

**सुरेन्द्र कुमार एंड संस**

विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-110032

पृ. 136 रु. 200.00

## जीवन के रंग दोहों के संग

**डॉ. करुणा पाण्डे**

देश, समाज, संवेदना आदि की काव्यात्मक अभिव्यक्ति, दोहों की विधा में।

**नमन प्रकाशन**

दरियागंज, नई दिल्ली-110002

पृ. 88 रु. 150.00

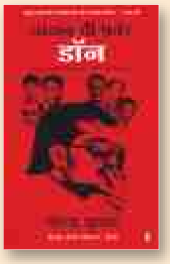

## डायल डी फॉर डॉन

**नीरज कुमार, अनु.: मदन सोनी**

वरिष्ठ पुलिस अधिकारी द्वारा अपनी सीबीआई में नियुक्ति के दौरान कुछ बड़े अपराधियों की देश व विदेश से गिरफ्तारी के रोमांचक किस्से।

**पेंगुईन बुक्स इंडिया प्रा.लि.**

साइबर सिटी, गुड़गाँव-122002

पृ. 252 रु. 250.00

## टेढ़ा पुल

**डॉ. नागेश पांडेय 'संजय'**

माता-पिता के बीच आपसी तनाव की वजह से उपजे हालातों को भोगने वाले बच्चों की मनोदशा और अंतर्व्यथा पर केंद्रित उपन्यास, जिसका लक्षित पाठक-वर्ग बच्चे ही हैं।

**विभा प्रकाशन**, जीरो रोड, इलाहाबाद-211003

पृ. 64 रु. 150.00

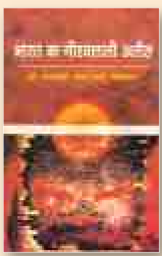

## भारत का गौरवशाली अतीत

**डॉ. रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर'**

इस पुस्तक में 16 ऐसे आलेख हैं जोकि युगों-युगों से भारत भूमि का विज्ञान, दर्शन, संस्कृति, सभ्यता, जल संरक्षण से लेकर राष्ट्रीयता तक के योगदान के प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

**समन्वय प्रकाशन**, कवि नगर, गाजियाबाद-201002

पृ. 120 रु. 250.00

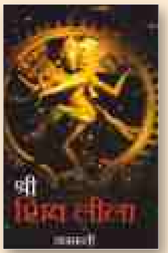

## श्री शिव लीला

**वनमाली**

इस पुस्तक में शिव पुराण से कुछ कहानियों को चुना गया है, जिसमें भगवान शिव के उग्र व शांत दोनों रूपों की जानकारी मिलती है।

**मंजुल पब्लिशिंग हाउस**

मालवीय नगर, भोपाल-462003

पृ. 212 रु. 195.00

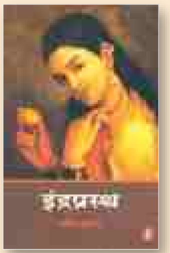

## इंद्रप्रस्थ

**उपेन्द्र कुमार**

यह महाभारत की पूरी कथा को नए परिप्रेक्ष्य में सहज भाषा में प्रस्तुत करने वाला काव्य संग्रह है।

**अंतिका प्रकाशन**

शालीमार गार्डन, गाजियाबाद-201005

पृ. 128 रु. 310.00

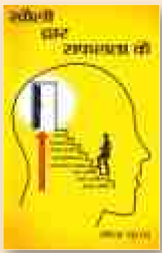

## खोलो द्वार सफलता के

**मीना गुप्ता**

यह पुस्तक युवाओं को निराशा व असफलता के भय की भावना से मुक्त कर उनमें उमंग और उत्साह का संचार करने वाले लेखों का संकलन है।

**एचपी भार्गव बुक हाउस**

निर्मल हाईट्स, आगरा-282007

पृ. 96 रु. 125.00

## छोटे-छोटे नवाचारों की विश्वव्यापी उपयोगिता

**विज्ञानरत्न लक्ष्मण प्रसाद**

इस पुस्तक में पचास ऐसे नवाचारों की खोज की कहानी दी गई है जोकि शुरू तो बहुत छोटे स्तर पर हुए, लेकिन आज उनका पूरी दुनिया में प्रयोग होता है। जैसे- गुड़िया, आईसक्रीम, आलू के चिप्स, टमाटर की चटनी, आदि।

**विज्ञान प्रसार**, नोएडा-201309

पृ. 110 रु. 130.00

## उर्वरक और पोषण

**डॉ. दिनेश मणि**

बढ़ती आबादी का पेट भरने के लिए बढ़ते दबाव के चलते खेतों पर भी अधिक उपज पैदा करने का दबाव है। अच्छी फसल पाने के लिए पोषक तत्त्वों का आनुपातिक और वैज्ञानिक प्रबंधन इस पुस्तक का केंद्रीय विषय है।

**विज्ञान प्रसार**, नोएडा-201309

पृ. 182 रु. 120.00

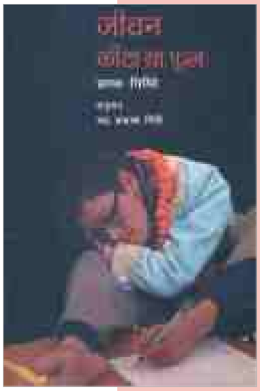


## जीवन : काँटा या फूल

**झमक घिमिरे**

**अनु. : चंद्र प्रकाश गिरी**

स्त्री लिंग में पैदा होना, तिस पर बहुदिव्यांग, यह लेखिका झमक के लिए किसी अभिशाप से कम न था। माता-पिता और दादी से पारिवारिक स्तर पर अवहेलना का जो सिलसिला शुरू हुआ वह सामाजिक संदर्भों में भी प्रतिबिंबित होता रहा। आत्म-कथात्मक शैली में एक ज़िंदा उपन्यास की तरह है यह कृति, जिसे पढ़ना आँसू की नदी से गुजरने के समान है।

**पृ. 208, रु. 210.00**

**ISBN** 978-81-237-7841-9

## रानी गाइदिन्ल्यू

**जगदम्बा मल्ल**

बीसवीं सदी के पहले दशक-उपरांत मणिपुर में पैदा हुई, गाइदिन्ल्यू जिसका शाब्दिक अर्थ है 'अच्छा मार्ग दिखाने वाली', ने अपने नाम के अनुरूप भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में तो बढ़-चढ़कर भाग लिया ही, हिन्दू धर्म एवं संस्कृति पर होने वाले प्रहार एवं छल-छद्म एवं षड्यंत्रों से रक्षा ही नहीं वरन् त्राण दिलाने में भी महती भूमिका निभाई। ऐसी ही प्रेरक व्यक्तित्व की जीवन-कथा है यह पुस्तक।

**पृ. 174, रु. 195.00**

**ISBN** 978-81-237-7815-0

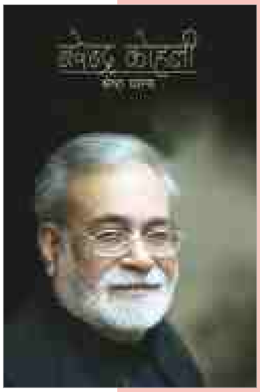


## नरेन्द्र कोहली : श्रेष्ठ व्यंग्य

**नरेन्द्र कोहली**

व्यंग्य लेखन में अपनी स्पष्टवादिता और कथ्य-वैविध्य के लिए मशहूर लेखक के 31 व्यंग्य रचनाओं का संकलन।

**पृ. 200, रु. 205.00**

**ISBN** 978-81-237-7881-5

## सुभाष चंदर : श्रेष्ठ व्यंग्य

**सुभाष चंदर**

व्यंग्य विधा में आलोचना के क्षेत्र में विशिष्ट स्थान रखने वाले सुभाष चंदर की रचनाओं में किस्सागोई के साथ-साथ गंभीर सच्चाइयों का खुलासा भी है। इस संकलन में उनकी 40 रचनाएँ शामिल हैं।

**पृ. 212, रु. 220.00**

**ISBN** 978-81-237-7880-6

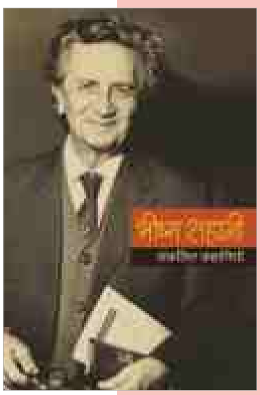


## भीष्म साहनी : संकलित कहानियाँ

**भीष्म साहनी**

महान कथा शिल्पी, हिन्दी कहानी के नए स्वरूप के शिल्पी, श्रेष्ठ अनुवादक और विचारक भीष्म साहनी की ऐसी 22 कहानियों का संकलन जिन्हें कालजयी कहा जाता है।

**पृ. 248, रु. 245.00**

**ISBN** 978-81-237-7883-9

## गिरिराजशरण अग्रवाल : श्रेष्ठ व्यंग्य

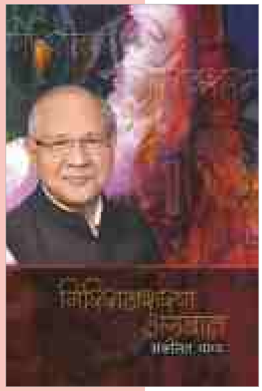

**गिरिराजशरण अग्रवाल**

लगभग पाँच दशक से एक कवि, आलोचक, कहानीकार, नाटककार, संपादक के रूप में सतत् रचनाशील लेखक की 33 व्यंग्य रचनाओं का संकलन।

**पृ. 180, रु. 195.00**

**ISBN** 978-81-237-7891-4

## दिल्ली की राज्य व्यवस्था और शासन प्रणाली

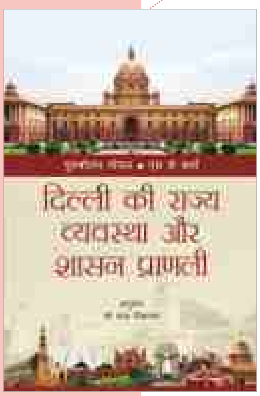


**पुरुषोत्तम गोयल और एस.के. शर्मा**

**अनु. : श्रीवत्स दिवाकर**

देश की राजधानी दिल्ली में निर्वाचित सरकार होने के बावजूद यहाँ की शासन प्रणाली अपने आप में अलग है। न तो यह पूर्ण राज्य है और न ही केंद्र शासित प्रदेश। यह पुस्तक दिल्ली राज्य के प्रशासन संचालन के नियम, कर्त्तव्य और अधिकारों की सहज शब्दों में जानकारी देती है।

**पृ. 192, रु. 190.00**

**ISBN** 978-81-237-7878-3

## मौलाना अबुल कलाम आज़ाद : विचार यात्रा

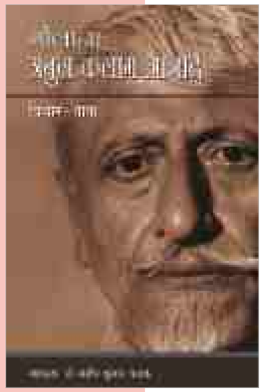

**संपा. : डॉ. समीर कुमार पाठक**

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद की जीवन गाथा स्वाधीनता संग्राम की संघर्ष-गाथा है। इस पुस्तक में श्री आज़ाद के लेखन, भाषण, वक्तव्य, टिप्पणियों को संकलित किया गया है जिससे उनकी धर्म, दर्शन, भाषा, देश के विभाजन आदि विषयों पर सशक्त विचारधारा को समझा जा सकता है।

**पृ. 484, रु. 430.00**

**ISBN** 978-81-237-7900-3

## विक्रय अनुभाग

**राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत**

नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज़-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070

**दूरभाष : 011-26707750**

**फैक्स : 011-26707846**

**ई-मेल :** nro.nbt@nic.in

**वेबसाईट :** www.nbtindia.gov.in

**पुस्तकें प्राप्त करने के लिए संपर्क करें**

## मानव व्यवहार

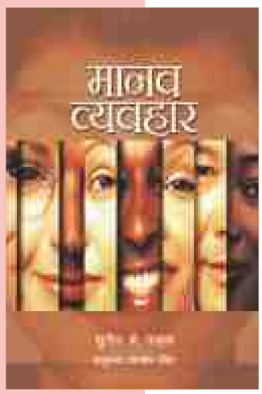


**सुनील के. पांड्या**

**अनु. : शमशेर सिंह**

यह पुस्तक इंसान के मनोविज्ञान का गहन अध्ययन है जो विवेचन करती है कि विविध प्रकार के व्यक्ति एक ही परिस्थितियों में अलग-अलग ढंग का व्यवहार क्यों करते हैं। इसमें मस्तिष्क की संरचना और कार्यप्रणाली पर गम्भीरता से प्रकाश डाला गया है।

**पृ. 216, रु. 265.00**

**ISBN** 978-81-237-7881-5

# राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत का 59वाँ स्थापना दिवस व्याख्यान शृंखला

"मूल्यहीनता एवं तर्कहीनता के इस दौर में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास एक उम्मीद की तरह दिखता है। पुस्तक पठन आदत के माध्यम से यह पूरे देश को तर्कशील बनाने एवं मूल्यों का सम्मान करने वाले समाज के निर्माण में लगा हुआ है।" राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के 59वें स्थापना दिवस समारोह के अवसर पर प्रख्यात पत्रकार एवं लेखक डॉ. एन.के. सिंह के ये उद्गार थे। एक अगस्त की बजाए किंचित विलंब से 17 अगस्त, 2016 को राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के मुख्यालय-सभागार, वसंत कुंज, नई दिल्ली में संपन्न इस स्थापना दिवस समारोह में डॉ. एन.के. सिंह मुख्य अतिथि थे। 'आज के भारत में पुस्तकें एवं पठन' विषय पर न्यास के 59वें स्थापना दिवस व्याख्यानमाला के अवसर पर विद्वान लेखक एवं पत्रकार डॉ. एन.के. सिंह ने पुस्तक, पठन एवं समकालीन भारत के पल-पल परिवर्तित हो रहे परिदृश्य के विविध आयामों पर अपने सारगर्भित विचार रखे और कहा कि "एनबीटी (राष्ट्रीय पुस्तक न्यास) देश की तस्वीर बदल सकता है।" डॉ. सिंह ने कहा, "भारतीय समाज के लिए यह बेहद संकट का समय है। आजकल बस, ट्रेन आदि जैसे सार्वजनिक जगहों पर पुस्तकें या पत्रिकाएँ पढ़ते हुए लोगों को हम बहुत कम देखते हैं। ज्यादातर लोग मोबाइल पर झुके रहते हैं और सतही एवं अर्ध परिपक्व सामग्री पढ़ते रहते हैं।" डॉ. सिंह ने देश की पठन संस्कृति के ऊपर बाज़ारवाद एवं उपभोक्तावाद की शक्तियों के हावी होने के खतरों को सामने रखा और कहा कि हमें इन खतरों से स्वयं को और अंततः देश को बचाना होगा।

डॉ. सिंह ने कहा, "बाज़ार की शक्तियाँ हमारी सोच प्रक्रिया पर ही प्रहार कर रही हैं। बाज़ार की शक्तियों का एक भीषण प्रवाह है जिसमें हमारा सबकुछ बहता जा रहा है। बाज़ार की शक्तियों ने समाज के मस्तिष्क को कुंद कर दिया है।" उन्होंने समाज में मूल्यों के हो रहे अधःपतन पर चिंता व्यक्त की। वे बोले, "औद्योगिक समाज के आने से हमारा परम्परागत कृषि समाज छीजने लगा है। परिणामतः हमारी जीवन-शैली, हमारे मूल्य और हमारी स्थापनाएँ भी बदल गईं। समाज में मूल्य इतने नीचे गिर गए हैं कि तमाम बुरी चीजों को हमारे समाज ने आत्मसात कर लिया है।"

डॉ. सिंह ने अपने सम्बोधन में चीजों के छीजने, नष्ट होने या समाप्तप्राय होने पर चिंता के साथ-साथ दुख भी व्यक्त किया और भारतवर्ष के गौरवशाली परम्परागत मूल्यों, अवधारणाओं की पुनर्स्थापना का आह्वान किया। उन्होंने समाज की सामूहिक चेतना एवं तर्कशक्ति के छीजने, कमजोर होने की बात कही और कहा कि हमारा पूरा समाज ही 'इग्नोरेंस' में जी रहा है। उन्होंने चीजों की गलत व्याख्या पर भी प्रहार किया। उन्होंने कहा, "अलग-अलग कालखंड में चीजें अलग-अलग होती हैं। समय के अंतराल में चीजें बदलती हैं, अवधारणाएँ बदलती हैं।" लेकिन इसके साथ ही उन्होंने विद्वानों के उस वर्ग पर प्रहार भी किया जो 'तथ्यों या चीजों को अपनी सुविधानुसार ग्रहण करता है और उसकी व्याख्या करता है।' इस संदर्भ में उन्होंने उस वर्ग विशेष के चीजों के प्रति 'चयनात्मक' हो जाने की सुविधाभोगी प्रवृत्ति पर चोट भी की।

विद्वान वक्ता ने अपने सारगर्भित उद्बोधन में मूल्यों की बार-बार चर्चा की। वे बोले, "हम अपने मूल्यों को 'डी रिकॉग्नाइज' करते जा रहे हैं। एक नकली और आभासी किस्म के मूल्य को स्थापित किया जा रहा है। पढ़ने से तरक्की होती है इसके बदले आज का बच्चा वेस्टर्न डांस से तरक्की होती है, इसे ही देखता, समझता, मानता है और आत्मसात करता है।" उन्होंने आज के माता-पिता की इस बात के लिए आलोचना की कि वे अपने बच्चों को मूल्य नहीं सिखाते। उन्होंने कहा, "हम पश्चिमी प्रारूप के मूल्यों को अपनाते जा रहे हैं।" उन्होंने पूछा, "हम पर जो मूल्य व्यवस्था थोपी जा रही है वह क्या ठीक है, तर्कसंगत है?" डॉ. सिंह ने आज के समाज को बाज़ारवाद-उपभोक्तावाद की ओर धकेलने एवं समाज में हो रहे नैतिक ह्रास के लिए इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पर प्रहार किया। वे बोले, "आज के इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने पूरे समाज को नशे में डाल रखा है। मीडिया और बाज़ार की शक्तियाँ विचारों को मार रही हैं, तर्क को नष्ट कर रही हैं। हमारे मस्तिष्क की विचार-शक्ति को कुंद कर रही हैं।" उन्होंने भारतीय समाज को भी दोषी ठहराया जिसने पश्चिम की मूल्य व्यवस्था को अपने ऊपर थोप लिया है। उन्होंने कहा, "समाज की तर्क शक्ति को बदलना है, मूल्य व्यवस्था बदलनी है। तर्क और विचार पर आधारित समाज की रचना करनी है। यह सब पुस्तकों के माध्यम से ही संभव है।"

उन्होंने समाज में डायन जैसी भ्रांत अवधारणा का उदाहरण देकर कहा कि यह सब तर्कहीनता की वजह से है। "समाज में अगर तर्क शक्ति को बढ़ा दिया जाए तो हम अपनी अनेक सामाजिक बुराइयों को दूर कर सकते हैं।" डॉ. सिंह ने समकालीन भारतीय समाज के अनेक आयामों की चर्चा की, किंतु उनके सम्बोधन में पुस्तक और पठन बार-बार आते रहे। पढ़ने की आदत में आ रही कमी पर उनकी चिंता बारम्बार झलकती रही। "हमारे पढ़ने की आदत कम हो रही है। हम नए सोशल मीडिया पर अधिक ध्यान दे रहे हैं। ऐसे में एनबीटी द्वारा पुस्तकोन्नयन का कार्य सराहनीय है, प्रशंसनीय है।" डॉ. सिंह बोले।

अंत में डॉ. सिंह ने कहा, "एनबीटी समाज के टेस्ट को अपने पुस्तक एवं पठन प्रोत्साहन से बदल सकता है।" उन्होंने सरकार से 'एनबीटी जैसी संस्थाओं को मजबूत करने की कोशिश' का आह्वान किया।

अपने अध्यक्षीय सम्बोधन में न्यास के अध्यक्ष श्री बल्देव भाई शर्मा ने सबसे पहले न्यास के 60वें वर्ष में प्रवेश पर समस्त न्यास-परिवार को शुभकामनाएँ दीं। उन्होंने कहा, "समाज निर्माण, राष्ट्र निर्माण और भावी पीढ़ी के निर्माण में एनबीटी की महती भूमिका है।" देश के नवनिर्माण में संस्था को उन्होंने बेहद महत्त्वपूर्ण बताया। उन्होंने समस्त न्यासकर्मियों को एनबीटी की छह दशक की लम्बी यात्रा पूर्ण करने पर बधाई दी और उनकी सराहना करते हुए कहा कि, "आप सबने अपनी लगन, सेवा-भावना, परिश्रम एवं समर्पण से इस संस्था को यशस्वी बनाया है।"

अपने संक्षिप्त एवं ज्ञानवर्धक सम्बोधन में न्यास-अध्यक्ष ने ज्ञान और सोच पर विशेष बल दिया। उन्होंने कहा, "केवल ज्ञानी होने से काम नहीं चलता। जिस ज्ञान से दूसरों का उपकार हो सके, वह ज्ञान श्रेष्ठ है। जो ज्ञान मूल्यों को धारण करता है वह श्रेष्ठ है।" उन्होंने आगे कहा, "जो ज्ञान मनुष्यता को दृष्टि न दे, वह ज्ञान नहीं है।" उन्होंने भारतीय ज्ञान परम्परा को 'श्रेष्ठ' बताया। उन्होंने 'सोच' को समाज और देश के उत्थान का मुख्य कारक मानते हुए कहा, "समाज और देश की सोच पर ही उस समाज और देश का भविष्य निर्भर करता है।" स्वार्थ वाली सोच की वजह से सैकड़ों साल की गुलामी का उल्लेख कर उन्होंने कहा, "स्वार्थ के त्याग से ही देश बच सकता है। स्वार्थपूर्ण सोच से न परिवार बचेगा, न समाज, न संस्था और न देश।" उन्होंने प्राचीन भारत में प्रचलित उस सूत्र वाक्य को दुहराते हुए अपना जीवन-शैली बनाने का आह्वान किया, जिसमें कहा गया है—

'कायदे के लिए जिओ, फायदे के लिए नहीं।'

अपने विद्वतापूर्ण सम्बोधन में अध्यक्ष महोदय ने कहा, "हम एक-दूसरे के हृदय में स्थित होकर जिएँ, निःस्वार्थ जिएँ।"

कार्यक्रम की शुरुआत न्यास की निदेशक, डॉ. रीता चौधरी के स्वागत-उद्बोधन से हुई। उन्होंने कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. एन.के. सिंह का न्यास की ओर से स्वागत किया। उन्होंने अपने संक्षिप्त सम्बोधन में कहा कि "हरेक व्यक्ति के जीवन के अपने-अपने आयाम होते हैं, अपनी सोच होती है, अपने-अपने अनुभव होते हैं।" उन्होंने आगे कहा कि "व्यक्ति के अपने अलग आयाम होते हैं और समाज के अलग। लेकिन ये सभी आयाम और सोच समाज और राष्ट्र की बेहतरी के लिए होने चाहिए।" उन्होंने कहा, "लोग केवल पढ़ें ही नहीं, अच्छा जीवन भी जिएँ। समाज की बेहतरी में सब अपने-अपने तरीके से योगदान दें।"

कार्यक्रम का संचालन न्यास में अंग्रेजी संपादक श्री द्विजेंद्र कुमार ने किया।

## न्यास मुख्यालय में पुस्तक प्रकाशन शिक्षण पाठ्यक्रम

पुस्तक प्रकाशन के क्षेत्र में चार सप्ताह के एक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के दिल्ली स्थित मुख्यालय-सभागार में 12 जुलाई से 8 अगस्त, 2016 तक आयोजन किया गया। पाठ्यक्रम का उद्घाटन करते हुए न्यास-अध्यक्ष श्री बल्देव भाई शर्मा ने कहा, "राष्ट्रीय पुस्तक न्यास पुस्तक प्रकाशन के क्षेत्र में कौशल विकास हेतु इस तरह के पाठ्यक्रमों का विगत बीस वर्षों से आयोजन कर रहा है। प्रकाशन क्षेत्र के विशेषज्ञों की एक टीम प्रतिभागियों के साथ अपने अनुभव साझा करते हैं और उनके कौशल के विकास में सहायता करते हैं।" देश में पुस्तकें एवं पठन-आदत के वर्तमान परिदृश्य पर उन्होंने कहा कि मुद्रित पुस्तकें आज भी भारतीय पाठकों के बेहद करीब हैं। उन्होंने यह भी कहा कि देश में पठन-आदत में कोई कमी नहीं आई है। इसलिए मुद्रित पुस्तकों के पठन की प्रवृत्ति बनी हुई है। उन्होंने कहा कि यह पाठ्यक्रम प्रतिभागियों के लिए प्रकाशन में अपने कॅरिअर की तलाश में सहायक होगा। भारत में प्रकाशन उद्योग जो रास्ता उपलब्ध कराता है, इस पर बात करते हुए रत्नसागर के सलाहकार श्री श्रीधर बालन ने कहा कि भारत अंग्रेजी पुस्तकों का विश्व में तीसरा सबसे बड़ा प्रकाशक है। आज हमारा पुस्तक उद्योग व्यावसायिक रूप से सुसज्जित है और पुस्तक प्रकाशन में अधुनातन तकनीकी का उपयोग करता है। उन्होंने यह भी बताया कि वैश्विक प्रकाशक भारत में अपने प्रकाशन कार्य को 'आउटसोर्स' कर रहे हैं। उन्होंने आगे कहा कि इस उद्योग को आज प्रशिक्षित व्यावसायिकों की आवश्यकता है और यह पाठ्यक्रम प्रतिभागियों को प्रकाशन में अपने कॅरिअर की शुरुआत करने में मदद करेगा।

इससे पूर्व न्यास की निदेशक डॉ. रीता चौधरी ने अतिथियों एवं प्रतिभागियों का स्वागत किया। डॉ. रीता चौधरी जो स्वयं भी साहित्य अकादमी विजेता हैं, ने प्रकाशकों के साथ अपनी बातचीत में लेखक के रूप में अपने अनुभव साझा किए। उन्होंने कहा, "यदि प्रकाशक व्यावसायिक रूप से काम नहीं करते तो लेखक अपने पाठकों तक नहीं पहुँच सकते, जो एक तरह से उनकी जीवनरेखा है।" उन्होंने आगे कहा, "हमें अपनी पहचान और क्षमता पर बल देते हुए सभी सीमाओं को लाँघकर दुनिया तक पहुँचना है।" उन्होंने अपनी बात का समापन करते हुए कहा कि वैश्वीकरण के इस दौर में भारतीय प्रकाशन उद्योग अंतरराष्ट्रीय हो गया है, क्योंकि यह पूरी दुनिया में और पूरी सक्रियता से पुस्तक मेलों, साहित्यिक उत्सवों आदि में भाग लेता रहता है।

विदित हो कि पुस्तक प्रकाशन में प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का आयोजन भारतीय संदर्भ में इस उद्योग की आवश्यकता को ध्यान में रखकर किया जाता है। 8 अगस्त को पाठ्यक्रम के समापन समारोह में सभी 43 प्रतिभागियों को प्रमाण-पत्र प्रदान किए गए। इस बार के पाठ्यक्रम की खास विशेषता प्रतिभागियों द्वारा 'Impression' नाम से एक द्विभाषी (हिन्दी, अंग्रेजी) पत्रिका का प्रकाशन एवं समापन समारोह में उसका लोकार्पण कराना रहा। लोकार्पण न्यास-अध्यक्ष श्री बल्देव भाई शर्मा ने किया। पाठ्यक्रम में दिल्ली के अलावा राजस्थान, मध्य प्रदेश, पं. बंगाल, कर्नाटक एवं केरल तक से प्रतिभागी सम्मिलित हुए। लगभग एक महीने तक चले इस कार्यक्रम में चालीस से अधिक विषय-विशेषज्ञों ने आकर प्रतिभागियों को प्रकाशन उद्योग के विविध आयामों पर सारगर्भित जानकारियाँ दीं और अपने अनुभव साझा किए। समापन समारोह में 92.7 एफएम रेडियो में प्रस्तोता ऋचा अनिरुद्ध मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित थीं। उन्होंने सभी प्रतिभागियों को बधाई दी। अपनी बात साझा करते हुए उन्होंने हिन्दी प्रकाशन के और अधिक प्रसार पर बल दिया।

अध्यक्ष महोदय ने अपने सम्बोधन में मुद्रित पुस्तकों की ई-पुस्तकों की तुलना में अधिक पठनीयता की बात कही। निदेशक महोदया ने भी इस अवसर पर अपनी बात रखी एवं सभी प्रतिभागियों को शुभकामना दी। धन्यवाद ज्ञापन न्यास में उत्पादन अधिकारी नरेन्द्र कुमार ने किया।

विदित हो कि प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में प्रमुख प्रकाशनगृहों, संस्थाओं एवं विश्वविद्यालयों से आए विशेषज्ञों ने पुस्तक प्रकाशन के विविध आयामों-संपादन, प्रकाशन, विपणन, पुस्तकोन्नयन, डिजिटल प्रिंटिंग आदि पर जानकारियाँ दीं। न्यास प्रतिभागियों को प्रशिक्षण उपरांत, विभिन्न प्रकाशनघरों में 'इंटर्न' के रूप में प्रवेश दिलाने में सहायता भी देता है।

## न्यास मुख्यालय में हिन्दी पखवाड़ा

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत के मुख्यालय भवन, वसंत कुंज, नई दिल्ली में 1 से 15 सितंबर, 2016 तक हिन्दी पखवाड़ा आयोजित किया गया। पखवाड़े के अंतिम दिन, 15 सितंबर को 'हिन्दी : राजभाषा, जनभाषा और विश्वभाषा' विषय पर कवि-ग़ज़लकार लक्ष्मी शंकर वाजपेयी एवं दिल्ली विश्वविद्यालय में एसोसिएट प्रोफेसर, डॉ. अवनिजेश अवस्थी ने अपने विचार रखे। न्यास–अध्यक्ष श्री बल्देव भाई शर्मा ने हिन्दी के अधिक-से-अधिक प्रयोग करने का आह्वान किया।

इस अवसर पर न्यास में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कृत किया गया।

## कालबुर्गी पुस्तक मेला, कर्नाटक

17 से 25 सितंबर, 2016 के दौरान कालबुर्गी, कर्नाटक में एक पुस्तक मेले का आयोजन किया गया। इस अवसर पर तीन दिनों के साहित्यिक आयोजन में प्रत्येक दिन पाठक-श्रोताओं को अपने पसंदीदा लेखकों से मिलने, उन्हें सुनने का अवसर मिला। ये थे– डॉ. नटराज हुलियार, डॉ. रहमथ तारिकेरे तथा डॉ. मांगल्ली गनेश।

## नोएडा–ग्रेटर नोएडा पुस्तक मेला

12 से 18 सितंबर, 2016 के दौरान नोएडा–ग्रेटर नोएडा पुस्तक मेले का आयोजन किया गया। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित इस मेला का स्थल इंडिया एक्सपो सेंटर, ग्रेटर नोएडा था। पुस्तक मेला का आयोजन संस्कृति एवं पर्यटन (स्वतंत्र प्रभार) राज्य मंत्री डॉ. महेश शर्मा ने किया। गौतम बुद्धनगर के जिलाधीश श्री एन.पी. सिंह इस अवसर पर मुख्य अतिथि थे। न्यास के अध्यक्ष श्री बल्देव भाई शर्मा ने आए हुए अतिथियों का स्वागत किया। उन्होंने वर्ष 2018 का विश्व पुस्तक मेला इंडिया एक्सपो सेंटर में कराए जाने की सम्भावना की तलाश की जानकारी भी दी। इस अवसर पर साहित्य अकादमी के सचिव डॉ. के. श्रीनिवास राव और आईईएमएल के उपाध्यक्ष श्री संदीप सरकार भी बोले। न्यास की निदेशक डॉ. रीता चौधरी भी इस अवसर पर उपस्थित थीं। विदित हो कि इस मेले में लगभग सौ प्रकाशकों ने भाग लिया।

मेले की अवधि में पुस्तक से संबंधित अनेक कार्यक्रम आयोजित किए गए। इसमें 'संस्कृत भाषा एवं भारतीय संस्कृति' विषय पर एक संगोष्ठी उल्लेखनीय है।

## पटना में परामर्श बैठक–सह-पुस्तक लोकार्पण

बिहार की राजधानी पटना में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा स्थापित पुस्तक प्रोन्नयन केंद्र में 5 सितंबर, 2016 को एक परामर्श बैठक का आयोजन किया गया। राज्य में पुस्तकान्नयन कार्यक्रमों को गति प्रदान करने एवं भविष्य की योजनाओं पर विमर्श के संदर्भ में बुद्धिजीवियों के साथ यह बैठक की गई। इनमें उषा किरण खान व इम्तियाज अहमद सरीखी हस्तियों ने भाग लिया। राज्य की क्षेत्रीय भाषाओं–मैथिली, भोजपुरी व मगही में प्रकाशित 15 पुस्तकों का लोकार्पण भी किया गया। लोकार्पण बिहार के राज्यपाल महामहिम श्री रामनाथ कोविद ने किया। इस अवसर पर न्यास के अध्यक्ष श्री बल्देव भाई शर्मा भी बोले। कार्यक्रम में बिहार के नोडल अधिकारी एवं न्यास के संपादक श्री कुमार विक्रम एवं पटना प्रोन्नयन प्रभारी श्री कमाल अहमद भी उपस्थित थे। यह कार्यक्रम भारत के द्वितीय राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के जन्मदिन (शिक्षक दिवस) पर पटना संग्रहालय के कर्पूरी ठाकुर सभागार में किया गया।

## पटियाला पुस्तक मेला

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत और पंजाबी यूनीवर्सिटी के संयुक्त तत्वाधान में 4 से 6 अक्तूबर, 2016 के दौरान पुस्तक मेले का आयोजन किया गया। मेले का उद्घाटन पंजाबी यूनीवर्सिटी के कुलपति डॉ. जसपाल सिंह ने किया। इस अवसर पर न्यास की निदेशक डॉ. रीता चौधरी भी उपस्थित थीं। इसमें अनेक साहित्यिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में शामिल विषय थे– संगोष्ठी, लेखक से मिलिए एवं कवि सम्मेलन। कार्यक्रम में सरस्वती सम्मान प्राप्त लेखक श्री सुरजीत पातर की उपस्थिति एवं भागीदारी विशेष उल्लेखनीय रही।

## 'संवाद और संवेदना' के सशक्त माध्यम : पत्र लेखन साहित्य'

गाजियाबाद में संपन्न 24वें अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित गोष्ठी 'संवाद और संवेदना के सशक्त माध्यम : पत्र लेखन साहित्य' में यह प्रतिपादित किया कि ईमेल, फेसबुक, व्हाट्सऐप आदि की तकनीकी विधाओं की तुलना में पत्र लेखन का भावात्मक महत्त्व है। गोष्ठी में डॉ. राजेश चंद्र पांडे, उरई, अरविंद श्रीवास्तव, दतिया, अशोक बंसल अश्रु, आगरा, मोहन स्वरूप भाटिया, मथुरा आदि ने विचार व्यक्त किए। गोष्ठी की अध्यक्षता आगरा के प्रमुख शिक्षाविद् डॉ. राम अवतार शर्मा ने की। आयोजन के समापन सत्र के मुख्य अतिथि मॉरीशस के भारत में उच्चायुक्त जगदीश्वर गोवर्धन ने भारत और मॉरीशस के बीच धार्मिक एवं भावात्मक संबंधों पर गर्व व्यक्त करते हुए कहा कि आज भी मॉरीशस निवासियों के भारतीय पूर्वजों के मध्य संबंध का मुख आधार पारस्परिक पत्र व्यवहार हैं।

सत्र की अध्यक्षता करते हुए रा.पु. न्यास के अध्यक्ष बल्देव भाई शर्मा ने कहा कि पत्र, मात्र आमंत्रण सूचना या कुशल क्षेम के परिचायक न होकर ऐतिहासिक दस्तावेज होते हैं।

## 'सचिन के सौ शतक'

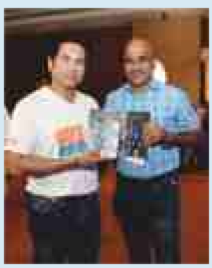

पिछले दिनों प्रख्यात क्रिकेट खिलाड़ी भारत रत्न सचिन रमेश तेंदुलकर दिल्ली आए थे। रा.पु. न्यास द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'सचिन के सौ शतक' के लेखक धर्मेन्द्र पंत ने उन्हें यह पुस्तक भेंट की। श्री तेंदुलकर ने पुस्तक की प्रशंसा की और पुस्तक पर अपना शुभकामना संदेश लिख कर दिया।

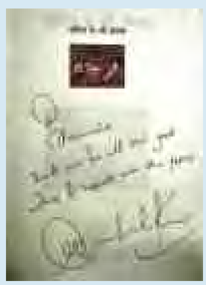

# लेखकों के लिए

## पुस्तक संस्कृति

### राष्ट्रीय पुस्तक न्यास की त्रैमासिक पत्रिका

पत्रिका का जनवरी-मार्च, 2017 अंक 'अनुवाद' पर केंद्रित होगा। भारतीय व अन्य विदेशी भाषाओं से अनूदित साहित्य, अनुवाद नीति, समस्या, तकनीक, अनुभव पर आधारित आलेख, इससे जुड़े शीर्ष लोगों के साक्षात्कार भेजे जा सकते हैं। जनजातीय बोलियों से अनुवाद, पूर्वोत्तर आदि पर भी सामग्री हो तो बेहतर होगा :

1. सामग्री अधिकतम तीन हजार शब्दों तक हो
2. पहले से छपी सामग्री भेजने से बचें
3. रचना के साथ संदर्भ के चित्र आदि भी भेजें
4. लेखक का चित्र, पाँच पंक्ति में परिचय (संपूर्ण जीवनवृत नहीं) भेजें, जिसमें सम्प्रति, प्रकाशन, सम्मान आदि का विवरण हो। संपर्क के लिए पता, ई-मेल या फोन नंबर जो भी सार्वजनिक करना चाहें।

सामग्री डाक से या ई-मेल से भेज सकते हैं। ध्यान रहे कि रचना कृति यूनिकोड या फिर शिवा मीडियम फॉन्ट में एम.एस. वर्ड या पेजमेकर में ही हो।

रचना 15 नवंबर, 2016 तक यहाँ भेज सकते हैं :

**संपादक (पुस्तक संस्कृति)**

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, 5 नेहरू भवन, वसंत कुंज, संस्थानिक क्षेत्र फेज-2, नई दिल्ली-110070

ई-मेल : editorpustaksanskriti@gmail.com

दूरभाष : 011-26707758, 26707876

## 'पुस्तक संस्कृति' के वार्षिक ग्राहक बनें

त्रैमासिक पत्रिका का **वार्षिक सदस्यता शुल्क** 125/- रु. है।

पत्रिका का सदस्यता शुल्क भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्नांकित है :

CANARA BANK, Branch: Vasant Kunj,
New Delhi 110070.
A/C No.: **31591010003159**

इसके अलावा नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया के पक्ष में देय चेक, ड्राफ्ट या धनादेय भी भेजा जा सकता है।

**शुल्क भेजने के पश्चात् कृपया फोन अथवा पत्र द्वारा सूचना अवश्य दें।**

# पुस्तक संस्कृति

**राष्ट्रीय पुस्तक न्यास की त्रैमासिक पत्रिका**

के सदस्य बनिए

# सदस्यता प्रपत्र

नाम : ______________________________

पता : ______________________________

जिला : ____________ शहर ____________ राज्य ____________ पिन कोड ____________

फोन : ____________ मोबाईल : ____________ ई-मेल : ____________________

मैं राशि रु.125/- वार्षिक सदस्यता हेतु (बैंक ड्राफ्ट/नगद) ____________ द्वारा भेज रहा/रही हूँ। (संलग्न)। सदस्यता शुल्क बैंक ड्राफ्ट द्वारा नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया के पक्ष में देय, सदस्यता प्रपत्र के साथ निम्नलिखित पते पर भेजें :

**संपादक**
पुस्तक संस्कृति
राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, 5 नेहरू भवन, वसंत कुंज, संस्थानिक क्षेत्र फेज-2,
नई दिल्ली-110070

ई-मेल : editorpustaksanskriti@gmail.com

दूरभाष : 011-26707721/26707843

---

ऑन लाईन शुल्क भेजने का विवरण इस प्रकार है :-

| | |
|---|---|
| For | National Book Trust, India |
| Bank | Canara Bank |
| Branch | Vasant Kunj, New Delhi-110070 |
| A/c No | 3159101000299 |
| IFSC CODE | CNRB0003159 |
| MICR CODE | 110015187 |

# READ EVERY MONTH

# COMPETITION REFRESHER

(₹ 60; 1 YEAR : ₹ 600; 2 YEARS ₹ 1180)

READ & RECOMMEND

# BRIGHT'S

# Career's®

# BOOKS

INDIA'S LARGEST SELLING COMPETITION BOOKS

For Complete Catalogue & Subscription write us:

BRIGHT GROUP OF PUBLICATIONS®

Formely: Bright Careers Institute (Regd.) PVT. LIMITED

2767, Kucha Chellan, Darya Ganj, New Delhi-110 002 (India) (ESTD. 1968)

Ph.: 09990203026, 09990203226 Telefax: 64633226

E-mail: bright books@gmail.com / brightmags@gmail.com ★ Web Site: http: //www.bgp.co.in

एनटीपीसी
NTPC
एक महारत्न कम्पनी

# पर्यावरण संरक्षण के प्रति समर्पित

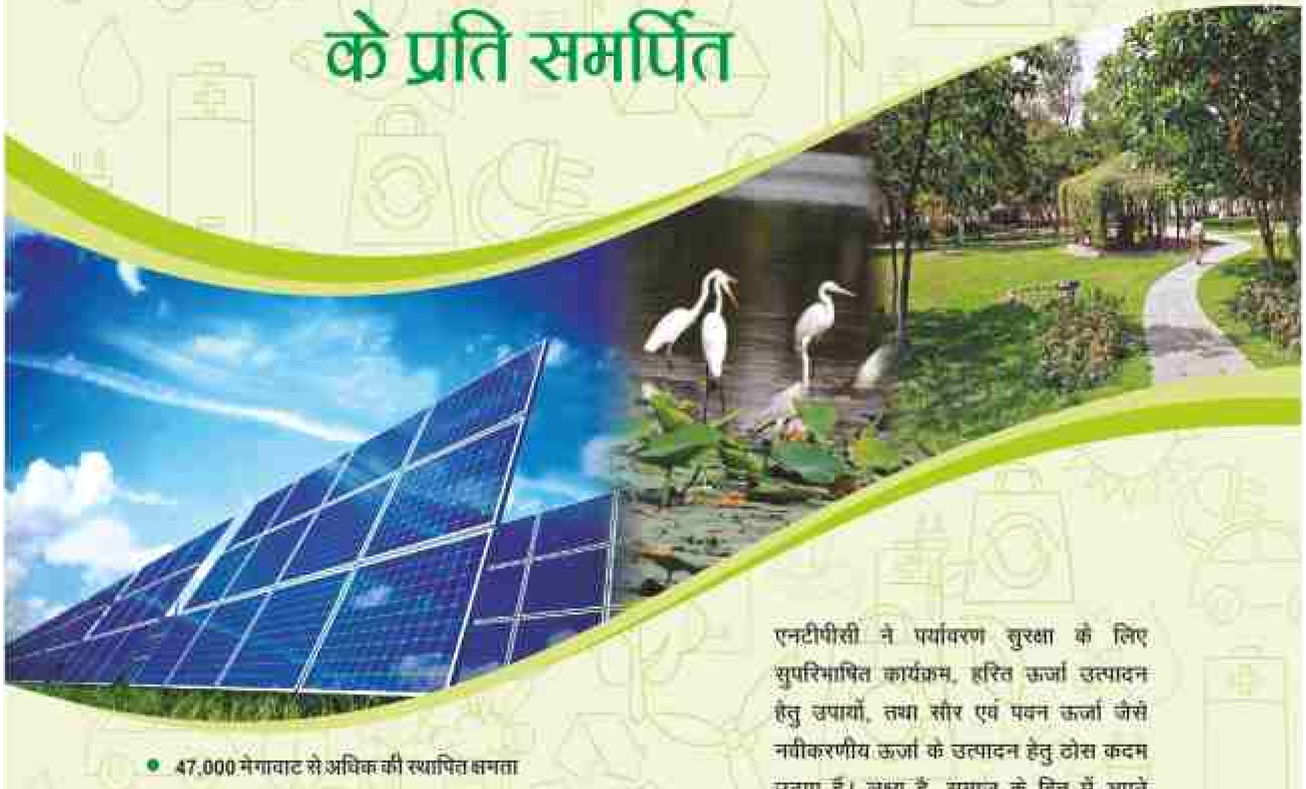

एनटीपीसी ने पर्यावरण सुरक्षा के लिए सुपरिभाषित कार्यक्रम, हरित ऊर्जा उत्पादन हेतु उपायों, तथा सौर एवं पवन ऊर्जा जैसे नवीकरणीय ऊर्जा के उत्पादन हेतु ठोस कदम उठाए हैं। लक्ष्य है, समाज के हित में अपने आसपास के वातावरण का संरक्षण करना।

- 47,000 मेगावाट से अधिक की स्थापित क्षमता
- 2032 तक 1,28,000 मेगावाट वाली कम्पनी बनने का लक्ष्य
- 44 पावर स्टेशन का संचालन
- 18 कोयला-आधारित, 1 जल आधारित एवं 9 साझा उपक्रम/सहायक कंपनी
- 7 सम्मिलित साइकिल गैस/तरल ईंधन आधारित स्टेशन
- 9 सौर ऊर्जा उपक्रम

**एनटीपीसी लिमिटेड**
*(भारत सरकार का उद्यम)*

(CIN: L40101DL1975GOI007966)
वेबसाइट: www.ntpc.co.in

*विद्युत क्षेत्र में अग्रणी*

# पुस्तक संस्कृति

## साहित्य और संस्कृति की त्रैमासिकी

RNI NO. DELHIN / 2016 / 68219

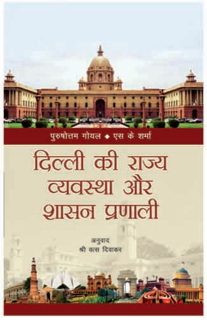

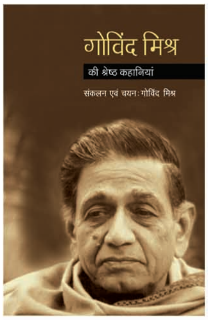


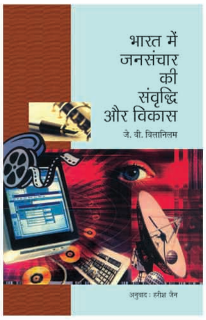


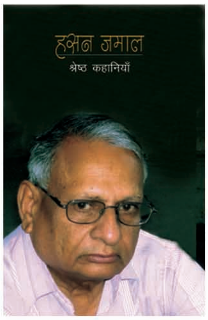


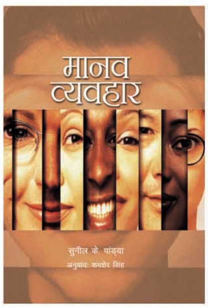


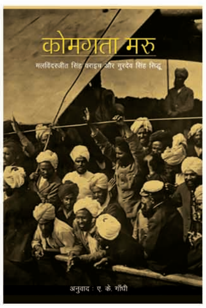


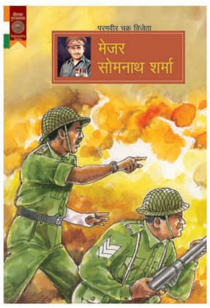


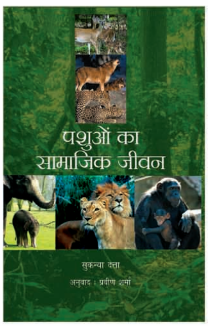


राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के अधीन एक स्वायत्त संस्था है, जोकि पाँच दशकों से अधिक समय से पुस्तक प्रकाशन व ज्ञान के प्रसार के क्षेत्र में सक्रिय है। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा अभी तक 32 भाषाओं में 17,000 से अधिक पुस्तकों का प्रकाशन किया जा चुका है, जिसमें मूल, पुनर्मुद्रण तथा अन्य भारतीय भाषाओं व अँग्रेज़ी में अनुवाद शामिल हैं। न्यास विदेशों में भारतीय पुस्तकों के प्रोन्नयन और भारत में पुस्तक संस्कृति के प्रसार के लिए केंद्रीय अभिकरण के रूप में भी कार्य करता है।

आपको यह जानकर हर्ष होगा कि राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा प्रकाशित साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका 'पुस्तक संस्कृति' में आपको उत्कृष्ट रचनाओं यथा : कहानी, कविता, व्यंग्य, साहित्यिक व सामयिक विषयों पर लेख, यात्रा वृत्तांत, पुस्तक समीक्षा व पुस्तक प्रोन्नयन गतिविधियाँ आदि पढ़ने को मिलेंगी। पत्रिका लाखों पाठकों तक पहुँचेगी। 64 पृष्ठों की इस आकर्षक, पठनीय व बहुरंगी पत्रिका के लिए आपसे विज्ञापन आमंत्रित किए जाते हैं। पत्रिका में दिए जाने वाले विज्ञापनों की दर निम्न प्रकार रहेगी :

| | |
|---|---|
| दूसरा कवर पेज (रंगीन) | 10,000 |
| तीसरा कवर पेज (रंगीन) | 8,000 |
| चौथा कवर पेज (रंगीन) | 20,000 |
| अंदर का पूरा पृष्ठ (रंगीन) | 5,000 |
| आधा पृष्ठ (रंगीन) | 3,000 |

(उपर्युक्त दरों में किसी प्रकार की छूट दिए जाने का प्रावधान नहीं है।)

पत्रिका का आकार - 19.7 X 27.4 सेमी

प्रिंट एरिया - 17 X 23 सेमी (पूरा पृष्ठ)

17 X 11 सेमी (आधा पृष्ठ)

**विज्ञापन के लिए संपर्क करें :**

**कुमार समरेश**

उप-निदेशक (जनसंपर्क)

**राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत**

नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया

फेज-II, वसंत कुंज,

नई दिल्ली-110070 (भारत)

दूरभाष : 26707721/26707843

आप अपने विज्ञापन प्रारूप हमारे ई-मेल prnbtindia@gmail.com पर भी भेज सकते हैं।

**भुगतान की विधि**

- कृपया एनईएफटी के जरिए बैंक ट्रांसफर के माध्यम से भुगतान करें। बैंक विवरण निम्न प्रकार है :

बैंक का नाम : केनरा बैंक

खाता संख्या : 3159101000299

आईएफएससी कोड (IFSC): CNRB0003159

एमआईसीआर कोड (MICR): 110015187

- 'नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया' के नाम डिमांड ड्राफ्ट भी भेज सकते हैं।
- एनबीटी के नाम किये गए भुगतान के दस्तावेजी प्रमाण, एनबीटी कार्यालय को भेज दिये जाएँ।

nbt.india
एकः सूते सकलम्

**राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत**

मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला
7-15 जनवरी 2017
प्रगति मैदान